ISSN No : 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

भाग 5 अंक 2 अगस्त 2025

Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

3/2, ड्रमण्ड रोड, (नथानी अस्पताल के सामने), प्रयागराज-211001, (U.P.) दूरभाष-9452254524
वेबसाइट : saahasindia.org, ई-मेल-contact.saahas@gmail.com
Article Submission :– krishiudyandarpan.hi@gmail.com

सम्पादकीय मण्डल

प्रधान संपादक : **डॉ. विवेक कुमार त्रिपाठी**
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, उद्यान विज्ञान विभाग एवं फल विज्ञान विभाग
चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

वरिष्ठ संपादक : **डॉ. रोशन लाल राऊत**
वरिष्ठ वैज्ञानिक एव ं विभागाध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र, बालाघाट (एम.पी.)

सह सम्पादक गण : **डॉ. नीलम राव रंगारे**
वैज्ञानिक, संस्था निदेशालय
इन्दिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, लाभण्डी, रायपुर (छत्तीसगढ़)

: **डॉ. नंगखाम जेम्स सिंह**
पशुचिकित्सक क्षेत्र सहायक,पशुपालन एवं डेयरी विभाग, शुआट्स, (उ.प्र.)

: **डॉ. खलील खान**
मृदा वैज्ञानिक, कृषि विज्ञान केन्द्र दलीप नगर कानपुर देहात, चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

: **डॉ. प्रमिला**
सहायक अध्यापक-सह-वैज्ञानिक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग
पं. दीन दयाल उद्यान एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरकोठी, बिहार

: **डॉ सुधीर दास**
सह-प्राध्यापक, सब्जी विज्ञान, उद्यान विभाग, पं. दीन दयाल उपाध्याय उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, पिपरकोठी, बिहार

: **डॉ आशीष रंजन**
सहायक प्रोफेसर सह जूनियर वैज्ञानिक, उद्यान विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

: **डॉ. आशुतोष शुक्ला**
मृदा विज्ञान विभाग, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, सतना, मध्य प्रदेश

: **डॉ. सुनील कुमार**
असिस्टेंट प्रोफेसर, पादप रोग विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

: **डॉ. चंचल सिंह**
विषय विशेषज्ञ, पौध संरक्षण, कृषि विज्ञान केंद्र, कृषि महाविद्यालय, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बांदा, उत्तर प्रदेश

	:	**प्रखर खरे** एम.एस.सी. उद्यान विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज (उ.प्र.)
पांडुलिपि संपादक	:	**स्निग्धा हल्दर** सहायक संपादक, एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)
कंटैट लेखक/ स्तंभ लेखक	:	**डॉ. विशाल नाथ पाण्डेय** विशेष कार्य अधिकारी आई.सी.ए.आर., आई.ए.आर.आई, झारखण्ड, हजारीबाग (झारखण्ड)
फोटोग्राफी	:	**स्वप्निल सुभाष स्वामी** वेब एडिटर प्रितेश हलदार
प्रकाशक	:	**एग्रो इण्डिया पब्लिकेशन, प्रयागराज, (उ.प्र.)**
प्रकाशक	:	**Society for Advancement in Agriculture, Horticulture & Allied Sectors (SAAHAS)**

ISSN No. 2583-3316

कृषि उद्यान दर्पण

इस पृष्ठ में

❖ सीड बॉल्सः पौधा रोपण हेतु महत्त्व — 1-2
अनुभा श्रीवास्तव* एवं प्रीतम कुमार बर्मन

❖ स्वास्थ्य एवं गुणवत्ता जीवन के लिए मिलेट्स एक विकल्प — 3-5
अंकित सिंह*, शिवराज कुमार वर्मा, शशि बाला एवं राहुल देव

❖ केले में बंची टॉप वायरस (BBTV) तथा उसका प्रबंधन — 6-8
वाघ्ुळकर प्र. श.*, नागेन्द्रन कृ., यादव वि. कु. एवं सेल्वराजन रा.

❖ सहजन एक औषधिय युक्त पेड़ — 9-10
प्रदीप मौर्या*, अमित कनौजिया, अनुज कुमार, पिंकी चौरसिया एवं ऋषि शर्मा

❖ फसल उपज बढ़ाने में मृदा परीक्षण की अहम भूमिका — 11-13
अभिषेक कुमार*, शक्ति खजुरिया एवं रेणु गोदारा

❖ नैनो उर्वरकः कृषि उत्पादन में किसानों का सहायक उत्पाद — 14-16
अभिषेक कुमार*, शक्ति खजुरिया एवं कनक लता

❖ पूर्वांचल में होने वाली बेल की प्रमुख किस्में — 17-19
हंस राज वर्मा*, वेदांत सिंह, सुप्रिया गोपाल नैक एवं सोनम

❖ सेब का कोर रॉट रोगः एक उभरती समस्या एवं उसका प्रबन्धन — 20-21
निखिल चौहान*, अमन शर्मा एवं शालिनी वर्मा

❖ इनोकी या गोल्डेन निडिल मशरूम उत्पादन तकनीक — 22-23
राम प्रवेश प्रसाद* एवं दयाराम

❖ बेर की खेती — 24-27
सोनम, वेदांत सिंह, सुप्रिया गोपाल नाईक एवं हंस राज वर्मा*

❖ आँवला में लगने वाली प्रमुख बीमारियों का प्रबंधन — 28-29
सुप्रिया गोपाल नैक*, वेदांत सिंह, सोनम एवं हंस राज वर्मा

❖ नींबू में लगने वाला कैंकर रोगः एक खतरनाक बीमारी एवं उसका उपचार — 30-33
सुनील कुमार*, प्रद्युम्न कुमार सिंह एवं रोहिताश कुमार

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

❖ पारंपरिक और आधुनिक बागवानी पद्धतियाँः एक तुलनात्मक अध्ययन 34-35
नीलम उपाध्याय

❖ लो-टनलः कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती के लिए एक प्रभावी तकनीक 36-38
विनय कुमार*, अर्जुन सिंह, राजेंद्र भट्ट एवं अर्चना कुशवाहा

❖ हर्बल गुलालः एक प्राकृतिक और पर्यावरण अनुकूल विकल्प 39-41
हेली पंचाल* एवं ध्वनी ए. पटेल

❖ कुशल नर्सरी प्रबंधन की सामान्य विधिया 42-44
अरुण प्रकाश*, विनय प्रकाश एवं तृप्ति नेगी

❖ आलू की उन्नत खेती एवं प्रबंधन 45-48
एस. एल. वास्केल*, ए. के. त्रिपाठी, रिंकू वास्केल, डी.पी. सिंह एवं प्रियंका धुर्वे

❖ आधुनिक युग में फूलों की खेतीः नवाचार और चुनौतियाँ 49-51
जय राम, अजय कुमार सिंह, अमित कनौजिया, अजय कुमार, कुमारी अंजलि* एवं आस्था सिंह

❖ किसान कॉल सेंटर और IVRS सेवाएँः किसानों के लिए डिजिटल समाधान 52-53
कु. अंजना गुप्ता

❖ पशुओं में गल घोटू रोग कारण एवं बचाव 54-55
प्रमोद प्रभाकर* एवं राजेश कुमार

❖ हरा चारा एवं चारागाह फसलों में सूत्रकृमियों का प्रकोप और उनका समाधान 56-58
राकेश कुमार सिंह

❖ भिण्डी की कृषि पारिस्थितिकीय तन्त्र में फसल-सह नाशीजीव प्रबंधन 59-62
चंचल सिंह*, दीक्षा पटेल, प्रज्ञा ओझा, श्याम सिंह एवं आनन्द सिंह

❖ मिर्च की खेती से सुधरेगी किसानों की आर्थिक स्थिति 63-66
नीरज नाथ परिहार* एवं ज्वाला परते

❖ आदर्श पौधशाला (नर्सरी) निर्माण 67-70
अरुण प्रकाश* एव विनय प्रकाश

❖ DeHaat: भारतीय किसानों के लिए एक डिजिटल क्रांति 71-72
कु अंजना गुप्ता*, सतपाल सिंग एवं जितेन्द्र मर्सकोल

❖❖

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखकों के निजी हैं। प्रकाशित/सम्पादक इसके लिये उत्तरदायी नहीं है। इस पत्रिका से सम्बन्धित वाद का निस्तारण क्षेत्र प्रयागराज होगा।*

ISSN No. 2583-3316

सीड बॉल्सः पौधा रोपण हेतु महत्त्व

अनुभा श्रीवास्तव* एवं प्रीतम कुमार बर्मन

कृषि वानिकी प्रभाग, आई.सी.एफ.आर.ई.- पारिस्थितिक पुनर्स्थापन केंद्र, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: anubhasri_csfer@icfre.org

परिचय

सीड बॉल (बीज बम/ बीज गेंद) पौधों की खेती करने का एक सरल और टिकाऊ तरीका है। सीड बॉल परियोजना का उद्देश्य पूरे भारत में हरित क्षेत्र को बढ़ाना है, विशेषतः चक्रवात या सूखा प्रभावित क्षेत्रों में इस परियोजना का विशेष ध्यान दिया गया है। इस प्रक्रिया में मिट्टी, बीज और खाद का गोल्फ बॉल के आकार का मिश्रण बनाना और पेड़ों को उगाने के लिए उपयुक्त स्थानों पर इसे बिखेरना शामिल है। बीज बॉल, जिन्हें बीज बम के नाम से भी जाना जाता है, वह बीज होते हैं, जिन्हें मिट्टी और खाद के मिश्रण से लेपित किया जाता है और फिर सुखाया जाता है। यह तकनीक, जिसकी उत्पत्ति जापान में हुई थी और जिसे 'त्सुची डांगो' (जिसका अर्थ है 'पृथ्वी का पकौड़ा') के रूप में जाना जाता है, इसमें बीजों को मिट्टी में लपेटा जाता है। इसे जापानी किसान 'मासानोबू फुकुओका' द्वारा प्रारम्भ किया गया था।

सीड बाल कैसे बनाये ?

यह जैविक बीज गेंदों को जमीन में गाड़कर पेड़ लगाने की एक तकनीक है। इसे हवाई वनरोपण के रूप में भी जाना जाता है। बीज गेंदों को जमीन में फेंककर या गिराकर किसी भी भूमि पर वनस्पति को उगाया जा सकता है। इस प्रक्रिया को रूप देने का सबसे अच्छा समय बारिश का मौसम है। सीड बॉल या सीड बम एक बीज है जिसे मिट्टी की सामग्री में लपेटा जाता है, सामान्यतः मिट्टी और खाद का मिश्रण सुखाया जाता है। अनिवार्य रूप से, बीज 'पूर्व-रोपण' होता है और बीज के गेंद को प्रजाति के लिए उपयुक्त किसी भी स्थान पर जमा करके बोया जा सकता है। बीज को उचित अंकुरण तक सुरक्षित रखा जा सकता है । बीज खाद और मिट्टी में लिपटे होते हैं, इसलिए वे अनिवार्य रूप से पहले से ही अपने छोटे पारिस्थितिकी तंत्र में लगाए जाते हैं, इसलिए उन्हें मात्र वितरित करना होता है। सीड बॉल के कम वजन का अर्थ होता है, जिससे कि इसे कहीं भी फेंक सकते हैं या बिखेर सकते हैं। बीज की गेंदों को वर्षा ऋतु में ही रोपित करना चाहिए।

ISSN No. 2583-3316

मिट्टी से सीड बॉल्स कैसे बनाये ?

एक कटोरे में 1 कप बीज को 5 कप खाद और 2-3 कप मिट्टी के पाउडर के साथ मिलाएँ। धीरे-धीरे हाथों से पानी मिलाएँ, जब तक कि सब कुछ एक साथ चिपक न जाये। मिश्रण को ठोस गेंदों में रोल करें। गेंदों को धूप वाली जगह पर सूखने के लिए छोड़ दें।

मिट्टी से सीड बॉल्स

सीड बॉल्स कैसे लगायें

प्रत्येक सीड बॉल्स को 8 से 12 इंच की दूरी पर लगाये। प्रत्येक बॉल लगभग 1 वर्ग फुट को कवर करती है। इसके अंकुरण का समय 7-30 दिन का होता है। बीज बॉल तब तक निष्क्रिय रहते हैं जब तक उन्हें पर्याप्त पानी नहीं दिया जाता और बाहर का तापमान अंकुरण के लिए पर्याप्त गर्म नहीं हो जाता।

सीड बॉल्स कहाँ फेंके?

सुनिश्चित करें कि उन्हें धूप और बारिश मिल रही हो। मिट्टी उन्हें अंकुरित होने में मदद करेगी और मिट्टी बीजों की रक्षा करेगी और उन्हें नष्ट कर देगी। बीज बॉल को बिखेरने का अच्छा समय वसंत और शरद भी है। सीड बॉल तेजी से पौधरोपण का एक कम खर्च वाला प्रभावी तरीका है, जिसमें बीजों को सामान्य मिट्टी और खाद के मिश्रण में लपेटा जाता है। सामान्य रूप से अनुकूल परिस्थितियाँ हो तो सीड बॉल से बीजों का अकुंरण 40 से 50% तक प्राप्त होने की संभावना रहती है।

निष्कर्ष

सीड बॉल द्वारा पौधा रोपण एक सरल एवं कम व्यय की तकनीक है, जिसके माध्यम से बीज रोपण के प्रयास द्वारा पौध विकसित कर देश/प्रदेश का हरित क्षेत्र बढाया जा सकता है। साथ ही सीड बाल निर्माण हेतु रोज़गार की भी अच्छी संभावनाएं हैं। बीजों की जीवनशैली भी सीड बॉल में परिवर्तित करने से बढ़ सकती है। इस तकनीक को सामान्य जन तक विस्तार कार्यक्रमों द्वारा बढाया जा सकता है। अतः वर्तमान परिपेक्ष्य में आवश्यकता है कि इस पद्धिति का प्रयोग कर जनजागरण के प्रयासों द्वारा राष्ट्रीय वन नीति के 33% वन एवं वृक्ष आवरण लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

सन्दर्भ

- https://seed-balls.com › what-are-seed-balls

❖❖

ISSN No. 2583-3316

स्वास्थ्य एवं गुणवत्ता जीवन के लिए मिलेट्स एक विकल्प

अंकित सिंह[1]*, शिवराज कुमार वर्मा[2], शशि बाला[3] एवं राहुल देव[4]

[1,2एवं 3]उद्यान विभाग, उदय प्रताप कॉलेज वाराणसी, उत्तर प्रदेश

[4]आईसीएआर-विवेकानंद पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

पत्राचारकर्ता: ankitp13on@gmail.com

परिचय

मोटे अनाज एक फसलों का समूह है, जिसमें ज्वार, बाजरा, रागी को शामिल किया गया है, जब की सांवा, कोदो, कुटकी, कंगनी, चीना और कुट्टू छोटे अनाज की श्रेणी में आते है जिसको सयुक्त रूप से मिलेट क्रॉप कहा जाता है। इनकी उच्च गुणवक्ता के कारण इन्हे पौष्टिक-अनाज का नाम दिया गया है, यह प्रोटीन, फाइबर, विटामिन और खनिज जैसे पोषक-तत्व के धनी होते है। इसको अन्य शब्दों जैसे श्री अन्न, कंदन, मिलेट्स, सुपर फ़ूड, पौष्टिक-अनाज, गरीबों के अनाज और मोटे अनाज से भी संबोधित किया जाता है। मोटे अनाज सूखा सहिष्णु फसल है, जो ज्यादातर भारत के शुष्क एवं अर्ध-शुष्क तथा वर्षा आधारित क्षेत्रो में उगाया जाता है। मोटे अनाज छोटे बीज वाली घास (पोएसी) कुल से संबंधित हैं। हमारे पूर्वज अत्यधिक वर्षो से मोटे अनाज, ज्वार, बाजरा, रागी, सांवा, कोदो, कुटकी, कंगनी जैसे पौष्टिक अन्न का सेवन कर स्वस्थ और मजबूत रहते थे। मोटा खाना-मोटा पहनना यह हमारी परम्परा रही है परन्तु नयी पीढ़ी इस वाक्य से इत्तेफाक नहीं रखते है जिसका मुख्यं कारण लोगो का स्वाद के प्रति झुकाव, एक दुसरे की नकल करना, आमदनी अठन्नी खर्चा रुपया वाली जीवन शैली से प्रेरित है यह घरेलु-उपयोग में लाये जाने वाले आरंभिक पौधों में से है तथा एशिया एवं अफ्रीका के लाखों परिवारों का पारंपरिक भोजन रहा है। आज भी एशिया एवं अफ्रीका के विकासशील देशों में लगभग 90% से भी अधिक मिलेट्स का उत्पादन होता है। हालाँकि, कई देशों में मिलेट्स की खेती घटती जा रही है यह इसकी खाद्य एवं पोषक सुरक्षा को सुनिश्चित करने की क्षमता के प्रति जागरूकता न होने के कारण हो रहा है अतः उपभोक्ताओ, उत्पादकों व नीति-निर्माताओ के बिच मिलेट्स के फायदों का प्रचार प्रसार करने के दृष्टी से भारत सरकार ने विश्व पटल पर मिलेट्स को बढावा देने के लिए एक प्रस्ताव रखा जिसका 72 देशों ने समर्थन किया और संयुक्त राष्ट्र महासभा (यूएनजीए) ने 5 मार्च, 2021 में, वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट्स वर्ष के रूप मनाने को घोषित किया। जिसका मुख्य उद्देश्य घरेलू और वैश्विक माँग पैदा करने तथा लोगों को पौष्टिक भोजन उपलब्ध कराने के लिए किया गया। वही देश की वित मंत्री निर्मला सीतारमण ने 1फरवरी को संसद के आम बजट में मोटे अनाज के पैदावार को लेकर किसानों को प्रोत्साहित किया, साथ ही मिलेट्स को 'श्री अन्न' के नाम से संबोधित किया।

हरित क्रांति और मोटे अनाज

आजादी के बाद भारत सरकार का सबसे बड़ी चुनौती जनमानस का भरण पोषण करना था क्योंकि उस समय जनसंख्या की वृद्धि दर फसल उत्पादन के वृद्धि दर से अधिक थी जिसका मुख्य कारण कम उत्पादकता, सीमित सिंचित क्षेत्र, परम्परागत किस्मों का उपयोग (लम्बी किस्में), कृषि तकनीकी का अभाव, बार-बार पड़ने वाले सूखे जैसी अन्य समस्याएँ थी। उस समय बड़े पैमाने पर वर्षा आधारित एवं असिंचित खेती होती थी जिसमें चावल, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, रागी, सांवा, कोदो, कुटकी, कंगनी, दलहनी, तिलहनी आदि अन्य फसलें होती थी। खाद्य आयात करके एवं तत्कालीन उत्पादन, दोनों के सयुक्त प्रयास से भी जनसंख्या का भरण-पोषण करना संभव नहीं था। तब सरकार के गहन मंथन एवं चिंतन के बाद इस समस्या से निदान पाने के लिए हरित क्रांति को अपनाया गया। जिसका मुख्य उद्देश्य उच्च उपज देने वाली किस्मों के बीज, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई और मशीनीकरण जैसी

नयी तकनीकों का उपयोग के माध्यम से भारत में खाद्य फसलों, विशेष रूप से गेहूँ एवं चावल के उत्पादन और गुणवत्ता को बढ़ाना था साथ ही साथ बड़ी आबादी के लिये आत्मनिर्भरता एवं खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करते हुये गरीबी एवं कुपोषण को कम करना था। हरित क्रांति से कृषि उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। जिसके कारण सरकार बढती जनसंख्या का भरण-पोषण करने में सफल हुई। हरित क्रांति ने छोटे पैमाने के किसानों की एक बड़ी संख्या को, उनकी फसल की पैदावार और आय के स्तर में वृद्धि कर, गरीबी से बाहर निकालने में मदद की।

हरित क्रांति से निःसंदेह सरकार अपनी बढती जनसंख्या का भरण-पोषण करने में सफल हुई, कालांतर में आत्मनिर्भर एवं अधिशेष उत्पादन होने के कारण निर्यातक देश बना। हरित क्रांति का असर मुख्यतः गेहूँ और चावल पर हुआ। गेहूँ और चावल की अधिक उत्पादकता ने किसानो को इसकी खेती करने के लिए आकर्षित किया, प्रति-व्यक्ति की आय में वृद्धि, बढ़ता शहरीकरण, धान और गेहूँ जैसे अनाजों और उत्पादों की अधिक सुविधा, उपभोक्ताओं की स्वाद प्राथमिकताओं में बदलाव, वैश्वीकरण और गैर-मोटे अनाज प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थो पर अत्यधिक ध्यान आकर्षित हुआ। संबंधित नीति और बाज़ार ताकतों के माध्यम से होने वाली दीर्घकालिक विकृतियों के कारण उपभोक्ता व्यवहार में बदलाव आया है और इससे मोटे अनाज की सापेक्ष माँग में कमी आई है। जिसके परिणामस्वरूप पर अन्य फसलों की खेती पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा जिसका एक उदाहरण मोटे अनाज की फसल, जिसके खेती एवं क्षेत्रफल में हरित क्रांति के बाद काफी कमी देखने को आयी है।

मोटे अनाज के स्वास्थ लाभ

यह बहुत सारे संसाधन रहित गरीब किसानों के लिए खाद्य एवं पशु-चारे का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं तथा भारत की पारिस्थितिक और आर्थिक सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इनका ग्लाइसेमिक इंडेक्स निम्न होता है, जो किसी खाद्य पदार्थ के कार्बोहाइड्रेट को पचाने के बाद रक्त शर्करा के स्तर पर होने वाले प्रभाव को दर्शाता है। यह कार्बोहाइड्रेट युक्त खाद्य पदार्थों को रैंक करने का एक तरीका है। ग्लाइसेमिक इंडेक्स, खाद्य पदार्थों को इस आधार पर रैंक करता है कि वे कितनी तेज़ी से पचते हैं और रक्त शर्करा के स्तर को बढ़ाते हैं। कई कारक किसी भोजन के ग्लाइसेमिक इंडेक्स को प्रभावित करते हैं, जिसमें इसकी पोषक संरचना, पकाने की विधि, पकने की अवस्था और प्रसंस्करण की मात्रा शामिल है। निम्न ग्लाइसेमिक इंडेक्स के कारण वजन घटाने, रक्त शर्करा के स्तर को कम करने और कोलेस्ट्रॉल को कम करने में भी मदद कर सकता है; साथ ही यह ग्लूटिन-मुक्त भी होता है। ग्लूटिन एक प्रकार का प्रोटीन होता है, जिसमें लसलसा पदार्थ जैसा गुण होता है, जो शरीर में भोजन को एक साथ बनाए रखने में मदद करता है। विशेषज्ञ कहते हैं कि इस ग्लूटिन का सेवन कुछ लोगों के लिए हानिकारक हो सकता है, खासकर उन लोगों के लिए जिन्हें गेहूँ से एलर्जी है जिसके कारण सीलि एक रोग होता हैं।

मोटे अनाजों में पोषक-तत्वों की तालिका

अनाजों के नाम	प्रोटीन (ग्रा.)	फैट (ग्रा.)	क्रूड फाइबर (ग्रा.)	कार्बोहायड्रेट (ग्रा.)	कैल्शियम (एम जी)	आयरन (एम जी)	नियासिन (एम जी)
चावल (भूरा)	7.9	2.7	1.0	76.6	33	1.8	4.3
गेहूँ	11.6	2.0	2.0	71.1	30	3.5	5.1
मक्का	9.2	4.6	2.8	73.0	26	2.7	3.6
ज्वार	10.4	3.1	2.0	70.7	25	5.4	4.3
बाजरा	11.8	4.8	2.3	67.0	42	11.0	2.8
रागी	7.7	1.5	3.6	72.6	350	3.9	1.1
कंगनी	11.2	4.0	6.7	63.2	31	2.8	3.2
कुटकी	9.7	5.2	7.6	60.9	17	9.3	3.2
सांवा	11.0	3.9	13.6	55.0	22	18.6	4.2
कोदो	9.8	3.6	5.2	66.6	35	1.7	2.0

हुल्स, लैंग और पियर्सन, (1980) यूएसए की राष्ट्रीय अनुसंधान परिषद (एनआरसी)/भारतीय विज्ञान अकादमी (1982), खाद्य और कृषि संगठन, (1995)

ISSN No. 2583-3316

तालिका से तुलनात्मक अध्यन करे तो बाजरा (100ग्रा.) में लगभग एक अंडे के बराबर प्रोटीन होता है, वही कैल्शियम (सिए) फल की तुलना में असाधारण रूप से मिलेट्स से प्राप्त होता है जैसे रागी में 350 (एम जी) कैल्शियम प्राप्त होता है जबकि फल में सबसे ज्यादा कैल्शियम होता है सुखा करौंदा 160 (एम जी) एवं लीची में मात्र (05 एम जी) प्रोटीन प्राप्त होता है, वही आयरन एवं फाइबर का सबसे अच्छा स्त्रोत सांवा जिसमें क्रमशः 18.6 (एम जी) एवं 13.6 (ग्रा.) में होता है।

विगत वर्षो में लोगो में स्वास्थ के प्रति जागरूकता ने मोटे अनाज के प्रति ध्यान आकर्षित किया है, जिससे मोटे अनाज के उत्पादन एवं उपभोग में भी वृद्धि हुई है, जिसके प्रमुख कारण निम्न है।

चित्र 1. रागी/ मंडुवा के उपजाऊ फसल का क्षेत्र दृश्य, रागी का दाने और रागी का आटा

मोठे अनाज के अन्य लाभ

- मिलेट्स सतत आहार एवं पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा के लिए अत्यधिक अनुकूल है तथा यह प्रतिकूल परिस्थितियो एवं कम परिश्रम से भी अच्छी तरह से पनपता है, इस फसल को कम पानी, उर्वरकों एवं अपेक्षाकृत कम उपजाऊ भूमि में भी उगाये जा सकते है तथा कीटनाशकों की न्यूनतम आवश्यकता होती है।
- मिलेट्स के उपभोग से शरीर में अम्लता बढने की संभवना नहीं होता है जोकि कई बीमारियों की रोकथाम एवं शरीर को विषमुक्त करने की क्षमता होता है ।
- स्वास्थ्यवर्धक पौष्टिकता से भरपूर फसल होने के कारण, अन्य अनाजों की तुलना में इसमें बेहतर सूक्ष्म पोषक तत्व एवं बायोएक्टिव फ्लेवोनोइड, डनियासिन (विटामिन बी-3) जो कोलेस्ट्रोल को कम करने में मदद करता हैं।
- स्वास्थ्य के लिए ज़रूरी तत्वों में आयरन, जिंक तथा कैल्शियम जैसे खनिजों का उपयुक्त स्त्रोत होता है, जो हड्डियों व मांशपेशियो को मजबूत करता है।
- मिलेट्स का हाइपरलिपिडिमिया के प्रबंधन और रोकथाम और सीवीडी के जोखिम पर लाभकारी प्रभाव पड़ता है।
- शरीर के आतंरिक पारिस्थितिकी तंत्र में मिलेट्स, प्रोबोटिक फीडिंग मिक्रोलोरा के कार्य करने को बढावा देता है, जिससे आँतों में मौजूद बैक्टीरिया के संतुलन को बनाए रखते हैं।
- नियमित मिलेट्स के सेवन से वजन को कम करने, बीएमआई और उच्च रक्तचाप को नियंत्रण करने में सहायक होता है।
- मिलेट्स आधारित मूल्य वर्धित उत्पाद शहरी आबादी को आसानी से सुलभ और सुविधाजनक रूप से प्राप्त है।
- मिलेट्स का उपयोग दोहरे प्रयोजन के लिए भी किया जाता है, जो खाद्य पदार्थ के साथ-साथ पशु-चारे के रूप में होता है।
- मिलेट्स की खेती कार्बन-डाइऑक्साइड को कम करने में सहयोग करता है।
- मिलेट्स से बहुत सारे पौष्टिक खाद्य उत्पाद जैसे इडली, डोसा, पिज्जा, केक, बिस्कुट, नूडल, उपमा, रागी से मदिरा, चिप्स, लड्डू, खीर (बाजरा+गन्ने का रस+दूध), पट्टी अन्य इत्यादि उत्पाद व्यावसायिक रूप से तैयार करके उपभोग किया जा रहा है।

निष्कर्ष

आधुनिक जीवन शैली ने देश की बड़ी आबादी को नाना प्रकार के स्वास्थ्य सम्बंधित समस्याएँ उत्पन्न होने के कारण लोगो को स्वास्थ्य एवं गुणवत्ता जीवन शैली की ओर सवेंदनशील बनाया है। इस समस्या से निदान पाने के लिए लोगो का मिलेट्स के प्रति एक विकल्प के रूप में ध्यान आकर्षित किया है। मिलेट्स, कई पोषक-तत्वों से धनी होते है इनमें विटामिन, मिनरल्स, फ़ाइबर, आयरन, कैल्शियम और प्रोटीन अन्य फसलों की तुलना में ज्यादा पाया जाता है। इनकी खेती कम पानी और कम लागत में सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

केले में बंची टॉप वायरस (BBTV) तथा उसका प्रबंधन

वाघुळकर प्र. श.[1]*, नागेन्द्रन कृ.[2], यादव वि. कु.[3] एवं सेल्वराजन रा.[4]

[1,2 एवं 4]आणविक विषाणु विज्ञान प्रयोगशाला, भा.कृ.अ.प.- राष्ट्रीय केला अनुसंधान केंद्र, तिरुचिरापल्ली, तमिळनाडु

[3]पादप रोग विज्ञान विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: pswagha@gmail.com

परिचय

विश्वपटल पर निर्सगतः समृद्ध प्रदेशों में पाया जाने वाला केले का पेड़, सहजतः कई रोगों, कीटकों तथा सूत्रकृमियों से प्रकोपित होता है। केले में विभिन्न रोग- फफूँद (Fungi), जीवाणु (Bacteria) और विषाणु (Virus) द्वारा होते हैं। केले में विषाणुजनित रोगों के कारक सामान्यतः कुकुम्बर मोज़ाइक वायरस (CMV), बनाना ब्रॅक्ट मोज़ाइक वायरस (BBrMV), बनाना स्ट्रीक वायरस (BSV), बनाना बंची टॉप वायरस (BBTV), बनाना माइल्ड मोज़ाइक वायरस (BanMMV) और बनाना वायरस एक्स (BVX) होते हैं। इनमे से BBTV यह "केले का गुच्छेदार शीर्ष रोग" जिसे बनाना बंची टॉप डिज़ीज़ (BBTD) भी कहा जाता है, के लिए कारणीभूत होता है। केले में BBTV के संक्रमण से होने वाली हानि का प्रमाण 90-100% तक भी हो सकता है।

केले का गुच्छेदार शीर्ष रोग

केले के पौधे पर ऑफ़िड्स की कॉलोनी

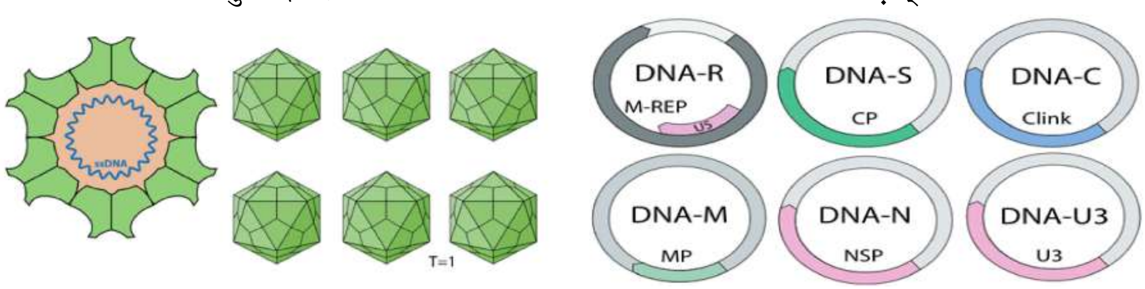

BBTV के विभिन्न जीनोमिक घटक

रोग की व्याप्ति

केले में बंची टॉप रोग प्रथमतः 1889 (ई.स.) में फिजी में दृष्टिगोचर हुआ और तत्पश्चात यह दक्षिणी प्रशान्त क्षेत्र, एशिया और अफ्रीका के कई देशों में प्रसार हो चूका है। यह रोग श्रीलंका में 1913 (ई.स.) में पाया गया, तत्पश्चात 1940 (ई.स.) के दशक में भारत के दक्षिणी प्रदेशों से प्रवेशरत हो, विभिन्न केला उत्पादक क्षेत्रों को बाधित कर 1970 (ई.स.) के दशक तक देशव्याप्त हो गया। भारत में, इस रोग की सूचना सर्वप्रथम 1943 (ई.स.) में केरल में हुई थी। वर्तमान में यह रोग केरल, तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, तेलंगाना, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, बिहार, कर्नाटक, पश्चिम बंगाल, असम और उत्तर प्रदेश में पाया जाता है तथा ईशान्य पर्वतीय प्रदेशों में केले की वन्य प्रजातियों में भी पाया जाता है।

रोग के लक्षण

पत्तियों पर लक्षण

- **"बंची टॉप" दिखाई देना:** नव पर्ण लघु, संकीर्ण तथा पौधे के शीर्ष स्थान में गुच्छे भांति एकत्रित हो जाते हैं।
- **गहरी हरी धारियाँ:** पर्ण शिराओं पर "मोर्स कोड" जैसे हरे धब्बे या लकीरें दिखाई देती हैं।
- **हुक जैसी नसें:** पत्तियों की नसें मध्यशिरा के पास J आकार में मुड़ी हुई दिखती हैं।
- **पत्तियों के किनारे पीले पड़ना:** पत्तियों की सीमाएं विरंजित (क्लोरोटिक) होकर ऊर्ध्व दिशा में वक्रीकृत हो सकती हैं।
- **पत्तियों का विकृत होना:** पत्तियाँ वामनाकार, स्थूल तथा असामान्य आकृति की हो जाती हैं।

पौधे की वृद्धि तथा फल पर प्रभाव

- **पौधे की बौनी वृद्धि:** रोगग्रस्त पौधे वामनाकार के रह जाते हैं, विशेषतः यदि संक्रमण प्रारंभिक अवस्था में हुआ हो।
- **फल न बनना या विकृत होना:** प्रथमतः गुच्छे उत्पन्न ही नहीं होते, यदा कदाचित होने पर भी लघु, वक्रीकृत तथा व्यर्थ होते हैं।
- **"चोकिंग" (गला घुटना):** गंभीर संक्रमण में फूल तने से बाहर आने में असमर्थ होता है।

अन्य संकेत

- **फूलों पर धारियाँ:** बीमारी के अंतिम चरण में फूलों की कलियों पर भी गहरे हरे धब्बे दिखाई दे सकते हैं।
- **पत्तियों का सूखना:** बीमारी बढ़ने पर पत्तियों के किनारे भूरे/सूखे होकर गिरने लगते हैं।

कारक विषाणु

बनाना बंची टॉप वायरस यह *नॅनोवायरिडी (Nanoviridae)* फ़ॅमिली तथा *बाबुवायरस (Babuvirus)* जीनस से संबंधित है। इस विषाणु के कण गोलाकार (आइसोमॅट्रिक) होते हैं तथा इनका व्यास 18-20 नॅनोमीटर होता है। यह विषाणु बिना आवरण वाला (अनएनवेलप्ड) होता है तथा इसका जीनोम बहु-खंडीय (मल्टी-कंपोनन्ट) होता है। इस विषाणु में लगभग 1 किलोबेस (kb) आकार के छह घटक होते हैं, जो सर्कुलर सिंगल-स्ट्रॅंडेड डीएनए (ssDNA) से बने होते हैं।

BBTV के विभिन्न जीनोमिक घटकों का विवरण

नाम	डीएनए घटक का आकार (न्यूक्लियोटाइड में)	ओआरएफ (ORF) का आकार (न्यूक्लियोटाइड में)	कोडित प्रोटीन का कार्य	प्रोटीन का आकार (किलोडाल्टन में)
DNA-R	1111	861	प्रतिकृति आरंभ करने वाला प्रोटीन (Rep)	33.6
DNA-S	1075	525	कैप्सिड/कोट प्रोटीन (CP)	20
DNA-C	1018	483	सेल-साइकिल लिंक प्रोटीन (Clink)	19
DNA-M	1043	351	मूवमेंट प्रोटीन (MP)	14
DNA-N	1089	462	न्यूक्लियर-शटल प्रोटीन (NSP)	17
DNA-U3	1060	251	अज्ञात कार्य वाला प्रोटीन (U3)	10

विषाणु संचरण

क) प्राथमिक संचरण

- द्रुमयूका/माहू/बनाना ॲफ़िड (*पॅन्टालोनिया निग्रोनर्वोसा*)- मुख्य विषाणु वाहक।
- ॲफ़िड्स संक्रमित पौधों से रस शोषण द्वारा विषाणु ग्रहण कर अन्य पौधों में प्रसारित करते हैं।
- यह द्रुमयूका विषाणु को अर्ध स्थायी पद्धति द्वारा संचारित करता है।
- वयस्कों की तुलना में विषाणु संचारण में निम्फ़ अधिक कुशल होते हैं।

• संक्रमित ऍफ़िड्स द्वारा विषाणु 1.5-2 घंटों में स्वस्थ पौधों में संचारित होता है।

• विषाणु ग्रहण पश्चात वाहक इसे 13 दिनों तक संरक्षित रख सकता है।

• बनाना ऍफ़िड विश्व के सभी उष्णकटिबंधीय एवं उपोष्णकटिबंधीय भागों में तथा यूरोप, ऑस्ट्रेलिया और उत्तरी अमेरिका के ग्लासहाउसों में व्यापक रूप से पाया जाता है।

ख) द्वितीयक संचरणः दूरस्थ प्रसरण संक्रमित रोपण सामग्री द्वारा (सकर्स, कॉर्म्स, टिशू कल्चर पौधे)।

• **जिनसे नहीं फैलताः** सामान्य संपर्क अथवा यांत्रिक रूप से रस द्वारा संचारित नहीं होता।

विषाणु के पोषक पादप

• **मुख्य पोषकः** *मुसॅसी* फ़ॉमिली जैसे कृषि योग्य केले की प्रजातियां (कॅवेंडिश, लाकाटन, साबा आदि), वन्य केले (*मुसा ऑक्यिुमिनाटा, मुसा बाल्बिसियाना*), अन्यः (*एन्सेटे वॅन्ट्रिकॉसम*)

• **वैकल्पिक पोषकः** हल्दी, अदरक (*ज़िन्जिबरॅसी*), *कॅन्ना इंडिका* (बीज द्वारा संचरण- 34%), *बाइड़ेंस पाइलोसा* (*एस्टरॅसिया*)

• **अपुष्ट पोषकः** अरबी (टॅरो)- संक्रमण स्पष्ट नहीं

रोग निदान तंत्र

प्रत्यक्ष एन्टीजन कोटिंग-एन्ज़ाइम-लिंक्ड इम्यूनोसॉरबन्ट एसै (ELISA), पॉलीमरेज़ श्रृंखला अभिक्रिया (PCR), इम्यूनो कॅप्चर-PCR, न्यूक्लिक ऍफ़िड स्पॉट हाइब्रिडाइज़ेशन (NASH) या डॉट ब्लॉट आदि तकनीकों द्वारा पौध सामग्री में विषाणु ज्ञात किया जा सकता है।

रोग प्रबंधन

• इस रोग का कोई उपचार नहीं है अतः रोगमुक्त (विषाणु रहित) एवं प्रमाणित पौध सामग्री का ही उपयोग करें।

• अनावश्यक अंकुर (सकर्स) हटाये।

• लक्षणयुक्त पौधों को समूल अग्नि दहन कर तत्काल नष्ट करें।

• खरपतवार और वैकल्पिक पोषक पौधों को नष्ट करें।

• कीट जैसे लेडीबग, लेसविंग और परजीवी ततैया को प्रोत्साहित करें।

• बूवेर्या बॅशिना कवक का उपयोग करें।

• कीटनाशकों का नियमित एवं बारी-बारी से प्रयोग कर ऍफ़िड्स को नियंत्रित करें।

नीम का तेल 400-600 मिली प्रति एकड़ (5-10 मिली प्रति लीटर पानी में घोलकर) छिड़कें। अथवा इमिडाक्लोप्रिड पाउडर (10% डब्ल्यूपी): 200-250 ग्रॅम/एकर (400-500 लीटर पानी में) / इमिडाक्लोप्रिड लिक्विड (17.8% एसएल): 60-80 मिली/एकर (300-400 लीटर पानी में)।

चिपकने वाला एजेंटः ट्रायटन-एक्स-100 (0.5 मिली/लिटर) या गुड़ (50 ग्रॅम/10 लिटर)

• ऍफ़िड्स नियंत्रण पश्चात, संक्रमित पौधों को नष्ट करने के लिए जमीन से 1 फुट ऊपर तने में 45° के कोण पर खरपतवार नाशक का इंजेक्शन लगाएं।

• ग्लाइफोसेट को 1 मिली प्रति 2-3 इंच तने के व्यास की दर से, अथवा 2,4-D (1.6 मिली प्रति पौधा)।

• अनुशंसित उर्वरक की 20-25% अधिक मात्रा का प्रयोग करें।

• दो किलो "बनाना शक्तिः सूक्ष्म पोषक तत्व मिश्रण (लोहः 4.75%, जस्ताः 5.25%, बोरॉनः 2.50%, मॅंगनीजः 4.50% एवं ताँबाः 2.40%)" को प्लॅस्टिक के बर्तन में 20 लीटर पानी में 5 नींबू के रस समेत मिलाएँ, यह मिश्रण 2 दिनों के लिए अलग रखें। तीसरे दिन इस मिश्रण को छाने, बचे तरल में अतिरिक्त 80 लीटर पानी डाल कुल 100 लीटर मात्रा बनाएँ। इस घोल को प्रति एकड़ क्षेत्र की दर से छिड़कें। उपयोग पूर्व इस घोल में, 1% सल्फेट ऑफ पोटाश तथा स्टिकिंग एजंट अवश्य मिलाएँ।

निष्कर्ष

भारत, विश्व का सबसे बड़ा केला उत्पादक, ग्रॅंड नैन जैसी किस्मों में BBTV के कारण भारी आर्थिक नुकसान झेल रहा है, जिससे खाद्य सुरक्षा और निर्यात को खतरा है। केला लाखों किसानों की आजीविका और पोषण का मुख्य स्रोत है, अतः BBTD रोजगार व ग्रामीण अर्थव्यवस्था को भी प्रभावित करता है। BBTV पर शोध, प्रतिरोधी किस्मों के विकास और आणविक तकनीकों (जैसे CRISPR/Cas9) के लिए महत्वपूर्ण है। इसका अध्ययन आर्थिक नुकसान कम करने, खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और भारत जैसे प्रभावित क्षेत्रों में केला उद्योग को बचाने हेतु आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सहजन एक औषधिय युक्त पेड़

प्रदीप मौर्या*, अमित कनौजिया, अनुज कुमार, पिंकी चौरसिया एवं ऋषि शर्मा
पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्यनिर्माण विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश
पत्राचारकर्ता: mauryapradeep903@gmail.com

परिचय

सहजन *(मोरिंगा ओलीफ़ेरा)*, जिसे आम तौर पर ड्रमस्टिक ट्री या हॉर्सरैडिश ट्री के नाम से जाना जाता है, सहजन ने अपने असाधारण पोषण मूल्य और कृषि, चिकित्सा और खाद्य सुरक्षा में कई उपयोगों के लिए वैश्विक स्तर पर ध्यान आकर्षित किया है। सहजन की उत्पत्ति भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश और अफगानिस्तान के क्षेत्रों मे हुआ हैं, सहजन अब दुनिया भर के कई उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। कठोर परिस्थितियों में पनपने की इसकी क्षमता और इसके विविध लाभों ने इसे 'चमत्कारी पेड़' का खिताब दिलाया है। यह लेख टिकाऊ कृषि में सहजन के महत्व का पता लगाता है, इसके पोषण संबंधी लाभों, पारिस्थितिक लाभों और खाद्य सुरक्षा को बढ़ाने की क्षमता पर प्रकाश डालता है।

सहजन के औषधीय गुण

- **उच्च प्रोटीन सामग्रीः** इसमें सभी नौ आवश्यक अमीनो एसिड होते हैं, जो इसे एक पूर्ण पौधा-आधारित प्रोटीन स्रोत बनाते हैं।
- **विटामिन से भरपूरः** विटामिन ए और विटामिन सी का उत्कृष्ट स्रोत, प्रतिरक्षा कार्य, दृष्टि और त्वचा प्रतिरक्षा कार्य, दृष्टि और त्वचा स्वास्थ्य का समर्थन करता है।
- **प्रचुर मात्रा में खनिजः** कैल्शियम और मैग्नीशियम का उच्च स्तर हड्डियों के स्वास्थ्य में योगदान देता है, जबकि आयरन रक्त स्वास्थ्य का समर्थन करता है।
- **एंटीऑक्सीडेंट गुणः** विभिन्न एंटीऑक्सीडेंट की मौजूदगी ऑक्सीडेटिव तनाव और सूजन को कम करने में मदद करती है।

सहजन की फली

- **सीमित कैलोरीः** इन्हे वजन प्रबंधन आहार के लिए उपयुक्त बनाता है।
- **उत्कृष्ट विटामिन सी स्रोतः** अत्यधिक विटामिन सी, जो प्रतिरक्षा रक्षा और त्वचा के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।
- **आहार फाइबरः** उच्च फाइबर सामग्री पाचन में सहायता करती है और स्वस्थ आंत को बढ़ावा देती है।
- **पोटेशियम समृद्धः** यह हृदय स्वास्थ्य और रक्तचाप को नियंत्रित करता है ।

सहजन के पत्तों और फलों की पोषण संरचना (प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)

सहजन पत्तियाँ		सहजन फलियाँ	
तत्व	मात्रा (कैलोरी)	तत्व	मात्रा (कैलोरी)
एनर्जी	64 kcal	एनर्जी	37 kcal
प्रोटीन	9.4g	प्रोटीन	2.1g
फैट	1.4g	फैट	0.2g
कार्बोहाइड्रेट	8.3g	कार्बोहाइड्रेट	8.5g
फाइबर	2.0g	फाइबर	4.8g
विटामिन A	378µg	विटामिन A	4 µg
विटामिन C	51.7 mg	विटामिन C	141 mg
कैल्शियम	185 mg	कैल्शियम	30 mg
आयरन	4.0 mg	आयरन	0.36 mg

सहजन पत्तियाँ			सहजन फलियाँ	
तत्व	मात्रा (कैलोरी)		तत्व	मात्रा (कैलोरी)
पोटेशियम	337 mg		पोटेशियम	461 mg
मैग्नीशियम	147 mg		मैग्नीशियम	45 mg
सोडियम	9.0 mg		सोडियम	42 mg
ज़िंक	0.6 mg		ज़िंक	0.45 mg

पोषण संबंधी उपयोग

क) पत्तियों मेः पोषक तत्वों से भरपूर सुपरफूड सहजन के पत्ते अपने समृद्ध पोषण संबंधी गुणों के लिए जाने जाते हैं। वे विटामिन, खनिज और प्रोटीन का एक मूल्यवान स्रोत हैं, जो उन्हें कई क्षेत्रों में, विशेष रूप से विकासशील देशों में एक आवश्यक खाद्य स्रोत बनाता है।

ख) सूखे पत्ते और पाउडरः सहजन की पत्तियों को सुखाकर पीसकर पाउडर बनाया जा सकता है, जिसे फिर पोषण पूरक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। इस पाउडर को स्मूदी, सॉस, सूप और बेक्ड सामान में मिलाया जा सकता है, जिससे उनका पोषण मूल्य बढ़ जाता है।

ग) चायः सूखे सहजन के पत्तों का उपयोग हर्बल चाय बनाने के लिए भी किया जाता है, जो अपने एंटीऑक्सीडेंट गुणों के लिए लोकप्रिय है।

घ) तेल उत्पादनः बीजों को दबाकर सहजन तेल भी निकाला जाता है, जिसे बेन तेल के नाम से जाना जाता है, जो अपने पोषण और कॉस्मेटिक गुणों के लिए अत्यधिक मूल्यवान है।

ड़) नाश्ताः भुने हुए सहजन के बीजों को अक्सर एक स्वस्थ नाश्ते के रूप में खाया जाता है। इनका स्वाद थोड़ा अखरोट जैसा होता है और ये प्रोटीन और स्वस्थ वसा से भरपूर होते हैं।

च) बीजः पोषण और औषधीय महत्व सहजन के बीज फली में बंद होते हैं और इन्हें कच्चा, भूनकर या उबालकर खाया जा सकता है।

छ) सब्जी की साइड डिशः कुछ संस्कृतियों में, फली को उबाला जाता है या भाप में पकाया जाता है और इसे साइड सब्जी के रूप में परोसा जाता है।

ज) अचार और सॉसः युवा, कोमल फलियों का अचार बनाया जा सकता है या सॉस में इस्तेमाल किया जा सकता है। उनका अनूठा स्वाद विभिन्न व्यंजनों में गहराई जोड़ता है।

टिकाऊ कृषि में सहजन का भविष्य

जैसे-जैसे वैश्विक जनसंख्या बढ़ रही है और जलवायु परिवर्तन कृषि उत्पादकता को प्रभावित कर रहा है, सहजन का महत्व बढ़ने की संभावना है। इसकी लचीलापन, पोषण संबंधी लाभ और पारिस्थितिक लाभ इसे भविष्य की टिकाऊ कृषि प्रणालियों का एक महत्वपूर्ण घटक बनाते हैं।

सेवन करने कि विधि

सहजन पाउडर 1 चम्मच (2-4 ग्राम) पानी, छाछ (मट्ठा) मे घोलकर ले सकते है इसे सब्जी और सलाद पर छिड़क कर भी ले सकते है।

ध्यान रखने योग्य बातें

- हालाँकि, सहजन स्वास्थ के लिए फायदेमंद है, लेकिन इसे ज्यादा मात्रा में खाने से कुछ लोंगों को एलर्जी की समस्या हो सकती है।
- गर्भवती महिलाओं और ब्रेस्टफीड कराने वाली महिलाओं को सहजन खाने से पहले डॉक्टर की सलाह जरूर लेनी चाहिए
- किसी भी बीमारी के लिए सहजन की दवा विकल्प के तौर पर कभी नही लेना चाहिऐ।
- सहजन पाउडर का एक लाभ यह है कि यह ब्लड प्रेशर को नियंत्रित करने मे मदद करता है। लेकिन यदि आप पहले से लो ब्लड प्रेशर (हाइपोटेंशन) से पीड़ित हैं, तो सहजन का पाउडर का सेवन आपके ब्लड प्रेशर को और आधिक कम कर सकता है।

निष्कर्ष

मोरिंगा ओलीफ़ेरा एक बहुमुखी फसल है। जिसमें 300 से अधिक रोगों के रोकथाम के गुण हैं जिसमे 90 तरह के मल्टीविटामिन्स, 45 तरह के एंटी आक्सिडेंट गुण, 35 तरह के दर्द निवारक गुण और 17 तरह के अमीनो एसिड मिलते हैं। सहजन की टिकाऊ कृषि की अपार संभावनाएँ हैं। इसका पोषण मूल्य, पर्यावरणीय लाभ और आर्थिक अवसर इसे कुपोषण, जलवायु परिवर्तन और ग्रामीण गरीबी जैसी वैश्विक चुनौतियों से निपटने में एक महत्वपूर्ण उपकरण बनाते हैं। सहजन की खेती और उपयोग को बढ़ावा देकर, हम अधिक लचीली और टिकाऊ खाद्य प्रणालियों की ओर बढ़ सकते हैं जो मानव और पर्यावरणीय स्वास्थ्य दोनों का समर्थन करती हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

फसल उपज बढ़ाने में मृदा परीक्षण की अहम भूमिका

अभिषेक कुमार*, शक्ति खजुरिया एवं रेणु गोदारा

आई.सी.ए.आर., भा.कृ.अनु.प. (के.शु.बा.सं.)-कृषि विज्ञान केंद्र, पंचमहल, वेजलपुर, गोधरा, गुजरात

पत्राचारकर्ता: Kabhishek15072000@gmail.com

परिचय

लगभग ८०-९० वर्ष पहले, जब रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग सीमित था, तब मृदा सामान्य रूप से उपजाऊ थी और उसमें कार्बनिक पदार्थों की मात्रा अधिक होती थी। हालाँकि, आधुनिक खेती में अत्यधिक रासायनिक उपयोग से मृदा का स्वास्थ्य प्रभावित हुआ है, जिससे पोषक तत्वों का असंतुलन हुआ है और साथ ही साथ उर्वरता में कमी आयी है। वर्तमान समय में मृदा परीक्षण खेती को वैज्ञानिक और लाभकारी बनाने का एक महत्वपूर्ण साधन है। यह मृदा की सेहत को समझने और फसल की पैदावार को बढ़ाने का आवश्यक कदम है। मृदा परीक्षण से मिट्टी में मौजूद पोषक तत्वों (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम), pH मान, कार्बनिक पदार्थ और अन्य गुणों की जानकारी प्राप्त होती है। इससे किसान अपनी मिट्टी की कमियों को पहचानकर उन्हें सुधार सकते हैं। भारत में, जहाँ खेती करोड़ों लोगों की आजीविका का आधार है, मृदा परीक्षण से न केवल फसल उत्पादन बढ़ता है, बल्कि अनावश्यक उर्वरक उपयोग कम होने से लागत घटती है और पर्यावरण संरक्षित होता है।

मृदा परीक्षण क्या है?

मृदा परीक्षण मिट्टी की सेहत को समझने और खेती को अधिक उत्पादक बनाने का वैज्ञानिक तरीका है। इसका उद्देश्य मृदा में पोषक तत्वों (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, गंधक, जस्ता, लोहा) और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा जानना, मिट्टी का pH मान (अम्लीय, क्षारीय या तटस्थ) जाँचना, उपयुक्त फसल का चयन करना और सही मात्रा में खाद व उर्वरक का उपयोग करना है। यह प्रक्रिया किसानों को मृदा की कमियों को पहचानने और उन्हें सुधारने में मदद करती है, जिससे फसल की पैदावार बढ़ती है और अनावश्यक खर्च कम होता है।

मृदा परीक्षण की विशेषताएँ

क) पोषक तत्वों की जानकारी: मृदा परीक्षण से मिट्टी में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, सल्फर, जिंक, आयरन जैसे पोषक तत्वों की मात्रा पता चलती है।

ख) pH मान का मापन: यह बताता है कि मिट्टी अम्लीय (pH 7 से कम), क्षारीय (pH 7 से ज्यादा) या तटस्थ (pH 7) है।

ग) खाद और उर्वरक की सटीकता: मृदा परीक्षण से यह पता चलता है कि कितनी मात्रा में और कौन-सा उर्वरक डालना चाहिए।

घ) फसल चयन में मदद: मिट्टी के गुणों के आधार पर यह तय होता है कि कौन-सी फसल ज्यादा अच्छी होगी।

ड़) जल निकासी और संरचना: मृदा परीक्षण से मिट्टी की बनावट (रेतीली, दोमट, चिकनी) और जलधारण क्षमता की जानकारी मिलती है।

मृदा परीक्षण के लाभ

क) उपज में वृद्धि: सही उर्वरक और फसल चयन से फसल की पैदावार बढ़ती है।

ख) खर्च में बचत: अनावश्यक खाद और रसायनों का उपयोग कम होता है, जिससे लागत घटती है।

ग) मिट्टी की गुणवत्ता बने रहना: संतुलित पोषण से मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है।

घ) पर्यावरण संरक्षण: रसायनों का कम उपयोग होने से जल और मिट्टी का प्रदूषण कम होता है।

ड़) वैज्ञानिक खेती में मदद: परीक्षण के आधार पर खेती को योजना के साथ किया जा सकता है और फसल चक्र को धारण करने से मदद मिलती है

मृदा परीक्षण की हानियाँ

क) प्रारंभिक खर्च: शुरुआत में परीक्षण करवाने में थोड़ा समय और पैसा लगता है।

ख) तकनीकी जानकारी की जरूरत: रिपोर्ट को समझने के लिए किसान को थोड़ी वैज्ञानिक जानकारी या सलाह लेनी पड़ती है।

ISSN No. 2583-3316

ग) हर क्षेत्र के लिए अलग परिणामः मिट्टी की भिन्नता के कारण हर खेत का अलग-अलग परीक्षण करना पड़ सकता है।

घ) सुविधा की कमीः ग्रामीण क्षेत्रों में मृदा परीक्षण की प्रयोगशालाएँ कम होती हैं, जिससे पहुँच में दिक्कत हो सकती है।

ड़) गलत सैंपलिंग से गलत परिणामः अगर मिट्टी का नमूना सही तरीके से नहीं लिया गया, तो परिणाम गलत हो सकते हैं।

मृदा में पीएच (pH) और विद्युत चालकता (EC) की कृषि में भूमिका

मृदा का पीएच (Soil pH): इस का मान 0 से 14 के बीच होता हैः

i. अम्लीय मृदाः pH < 7

ii. तटस्थ मृदाः pH = 7

iii. क्षारीय मृदाः pH > 7

फसलों पर प्रभावः अधिकांश फसलें, जैसे गेहूँ और मक्का, 6.0 से 7.5 pH में अच्छे से बढ़ती हैं। बहुत अम्लीय मृदा (pH < 5.5): आयरन, एल्युमिनियम और मैंगनीज की अधिकता फसलों के अधिकता से फसलों को हानि पहुँच सकती है। बहुत क्षारीय मृदा (pH > 8.5): फॉस्फोरस, जस्ता, लोहा और बोरॉन की कमी से पौधों की वृद्धि रुक सकती है।

फसलों पर EC स्तर का प्रभाव

EC स्तर	लवणता का स्तर	फसल पर असर
0-1 dS/m	सामान्य	कोई असर नहीं
1-2 dS/m	हल्का लवणीय	संवेदनशील फसलों पर हल्का असर
2-4 dS/m	मध्यम लवणीय	कई फसलों की वृद्धि प्रभावित
4+ dS/m	अधिक लवणीय	अधिकतर फसलें प्रभावित होती हैं

नियंत्रण के उपायः अम्लीय मृदा में चूना डालकर (1−2 टन /हेक्टेयर, बुवाई से पहले) pH मान बढ़ाया जा सकता है जबकि क्षारीय मृदा में जिप्सम, गंधक या कार्बनिक खाद (जैसे गोबर) डालकर pH मान को कम किया जा सकता है।

मृदा की विद्युत चालकता

- EC मृदा में घुलनशील लवणों की मात्रा को मापने का एक पैमाना है।
- इसे डेसीसीमेंस प्रति मीटर (dS/m) में मापा जाता है।
- EC जितनी ज्यादा होगी, मृदा में लवणों की मात्रा उतनी अधिक होगी।

फसलों पर प्रभावः फसलें अलग-अलग स्तर की लवणता सहन कर सकती हैं। उपयुक्त EC स्तर अधिकतर फसलें 0 से 1.2 dS/m तक अच्छी उपज देती हैं जो फसलों के लिए उपयुक्त EC है। 2.0 dS/m से ऊपर कई संवेदनशील फसलों में वृद्धि रुक जाती है, जिससे जल अवशोषण घटता है।

नियंत्रण के उपायः अधिक लवणीय मृदा में अच्छी जल निकासी, जैविक खाद, लेचिंग (Leaching) तकनीक और लवण सहिष्णु फसलें उपयोग की जाती हैं।

खेत से मिट्टी का नमूना किस प्रकार लिया जाये?

मृदा परीक्षण की सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मिट्टी का नमूना सही तरीके से लिया जाना चाहिए, क्योंकि अगर नमूना गलत तरीके से लिया गया, तो परीक्षण के परिणाम भी गलत होंगे। नीचे मिट्टी का नमूना लेने की पूरी प्रक्रिया चरणबद्ध तरीके से दी गई हैः

चरण 1: सही जगह चुनें

- सबसे पहले खेत के चारों कोनों से नमूना लें, लेकिन कोनों से 2.5-3 मीटर अंदर की तरफ हटकर नमूना लें।
- ध्यान दें कि नमूना पेड़ की छाया, खाद के ढेर (घूरे) या गंदगी वाली जगह से न लें।

चरण 2: जरूरी सामान साथ लें

एक फावड़ा, स्टील का गिलास और पॉलीथीन की थैली साथ ले जाये। ये सामान साफ होने चाहिए ताकि मिट्टी में कोई बाहरी चीज न मिले।

चरण 3: मिट्टी का नमूना लें

खेत के चारों कोनों और बीच से मतलब Z आकार से, यानि कुल 5 जगहों से नमूना लें। हर जगह V आकार का गड्ढा खोदें, जो 6-7 इंच गहरा हो। गड्ढे से मिट्टी निकालें और बाहर रख दें। फिर गिलास से गड्ढे की दोनों तरफ की परत को खुरचकर हटा दें। फिर गड्ढे से दोबारा मिट्टी खुरचें और उसे एक पॉलीथीन पर इकट्ठा करें।

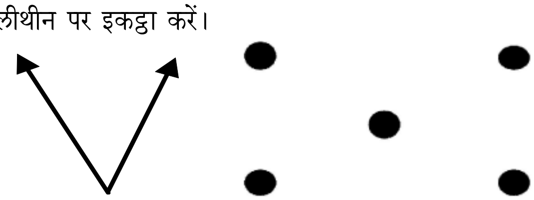

V Size Pit

चरण 4: मिट्टी की मात्रा और मिश्रण

- पाँचों जगहों से ली गई मिट्टी की कुल मात्रा 2.5-3.0 किलोग्राम होनी चाहिए।
- सारी मिट्टी को पॉलीथीन पर अच्छी तरह मिलाएँ।

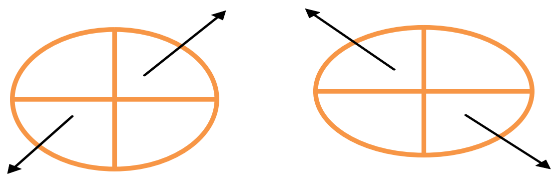

Remove soil 1st time   Remove soil 2nd time

चरण 5: मिट्टी को कम करें:

मिश्रित मिट्टी को चार बराबर भागों में बाँट लें। आमने-सामने के दो भाग हटा दें। बची हुई मिट्टी को फिर से अच्छी तरह मिलाएँ। अब फिर से चार भाग करें और दूसरी तरफ के आमने-सामने के दो भाग हटा दें। यह प्रक्रिया तब तक दोहराएँ जब तक मिट्टी 400-500 ग्राम न रह जाये।

चरण 6: नमूने को पैक करें और लेबल लगाएँ

- बची हुई 400-500 ग्राम मिट्टी को एक साफ पॉलीथीन में डालें।
- एक लेबल (पर्ची) तैयार करें और उसमें निम्नलिखित जानकारी लिखें:
  - किसान का नाम
  - मोबाइल नंबर
  - गाँव का नाम
  - जिला और तहसील
  - नमूना लेने की तारीख
  - खेत की पहचान (खसरा नंबर या नाम)
  - पिछली बार लगाई गई एवं अगली बार लगने वाली फसल का नाम
- इस पर्ची को पॉलीथीन के अंदर डालें और थैली को अच्छे से बंद कर दें।

चरण 7: नमूना को प्रयोगशाला में भेजें

- मिट्टी के नमूने को नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र (KVK), राज्य कृषि विश्वविद्यालय, या किसी मान्यता प्राप्त प्रयोगशाला में भेजें।
- कई जगहों पर मोबाइल मृदा परीक्षण वाहन भी उपलब्ध होते हैं।

चरण 8: मृदा परीक्षण रिपोर्ट प्राप्त करें

- प्रयोगशाला में मिट्टी का विश्लेषण करने के बाद आपको एक रिपोर्ट मिलेगी।
- इस रिपोर्ट में निम्नलिखित जानकारी होगी जैसे मिट्टी का pH मान, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश की मात्रा, सल्फर, जिंक, आयरन, बोरोन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व, कार्बनिक पदार्थ की मात्रा आदि।

चरण 9: रिपोर्ट को समझें

तत्व	मान	स्तर
नाइट्रोजन	150 kg/ha	कम
फॉस्फोरस	18 kg/ha	मध्यम
पोटाश	340 kg/ha	अधिक

रिपोर्ट में पोषक तत्वों को कम, मध्यम या अधिक के रूप में दिखाया जाता है।

चरण 10: उर्वरकों की योजना बनाएँ

- अगर नाइट्रोजन कम है, तो यूरिया या अमोनियम सल्फेट डालें।
- फॉस्फोरस की कमी हो तो डी एपी (डाई-अमोनियमफॉस्फेट) या सिंगल सुपर फॉस्फेट का उपयोग करें।
- पोटाश की जरूरत हो तो म्यूरेट-ऑफ पोटाश डालें। सटीक मात्रा के लिए स्थानीय कृषि विशेषज्ञ से सलाह लें।

चरण 11: समय-समय पर परीक्षण दोहराएँ

- हर 2-3 साल में मृदा परीक्षण करवाएँ ताकि मिट्टी की सेहत का सही आकलन हो सके।

किसानों के लिए सलाह: समय-समय पर मिट्टी का सही नमूना लेकर उसका परीक्षण करवाएँ। नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र (KVK) से संपर्क कर मृदा परीक्षण की सुविधा और मार्गदर्शन प्राप्त करें। जैविक खाद (जैसे गोबर, कम्पोस्ट) और फसल चक्र अपनाकर मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनाए रखें। मृदा परीक्षण के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाकर न केवल खेती को लाभकारी बनाएँ, बल्कि भावी पीढ़ियों के लिए स्वस्थ मिट्टी और पर्यावरण भी संरक्षित करें।

निष्कर्ष

मृदा परीक्षण आधुनिक और टिकाऊ खेती का आधार है। यह किसानों को मिट्टी की पोषक तत्वों (जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम), pH और कार्बनिक पदार्थ की स्थिति समझने में सक्षम बनाता है, जिससे फसल की पैदावार बढ़ाने और पोषक तत्वों का संतुलन बनाए रखने में मदद मिलती है। मृदा परीक्षण के परिणामों के आधार पर जैविक खाद और सही उर्वरकों का उपयोग कर लागत में बचत संभव है। यह प्रक्रिया पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देती है, क्योंकि अनावश्यक रासायनिक उपयोग से जल और मृदा प्रदूषण कम होता है।

संदर्भ

- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR). (2023). मृदा परीक्षण दिशानिर्देश. नई दिल्ली: आईसीएआर प्रकाशन. प्राप्त स्रोत: https://icar.org.in
- कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय. (2023). राष्ट्रीय मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना पोर्टल. भारत सरकार. प्राप्त स्रोत: https://soilhealth.dac.gov.in
- कृषि विज्ञान केंद्र, पंचमहल, गोधरा. (2020). पोषक तत्व प्रबंधन प्रसार बुलेटिन. लेखक: डॉ. ए. के. राय, डॉ. शक्ति खजुरिया, डॉ. कनक लता.

❖❖

ISSN No. 2583-3316

नैनो उर्वरकः कृषि उत्पादन में किसानों का सहायक उत्पाद

अभिषेक कुमार*, शक्ति खजुरिया एवं कनक लता

आई.सी.ए.आर., भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, (के वी के)-पंचमहल, गोधरा-बडौदा हाईवे, वेजलपुर, गोधरा, गुजरात

पत्राचारकर्ता: Kabhishek15072000@gmail.com

परिचय

नैनो उर्वरक एक प्रकार का तरल पदार्थ है, जो कि पौधों में पोषक तत्व, क्लोरोफिल गठन, प्रकाश संश्लेषण की दर और शुष्क पदार्थ उत्पादन को बढ़ाने में सहायक होता है। नैनो तकनीक से विकसित नैनो यूरिया एवं नैनो डी.ए.पी फसल की क्रांतिक अवस्थाओं परें छिड़काव करने पर, प्रभावी तरीके से फसल में पोषक तत्वों की मागँ को पूरा करता है। पौधों की वानस्पतिक वृद्धि में भी सहायता करता है। इसका उपयोग खेती में उत्पादकता को बढ़ाने और पोषक तत्वों की मात्रा को बढ़ाने के लिये किया जाता है। विश्व भर में उर्वरकों के उत्पादन में भारत का दूसरा स्थान है। नाइट्रोजन और फॉस्फेट वाले उर्वरकों के उत्पादन के मामले में भी चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान आता है।

किसानों के लिये नैनो उर्वरक की जरुरत क्यों

पिछले कुछ वर्षों में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उर्वरक में काफी उतार-चढाव देखने को मिला है। जिसके कारण से किसानों को उर्वरक की आपूर्ति प्रभावित हुयी है और कीमतों में भी काफी तेजी देखी गयी। किसान भाई आसानी से उर्वरकों को नहीं खरीद पाता है। देशभर में मृदा की दशा ख़राब होती जा रही है। इन्ही कारणों को देखते हुये किसान भाइयों को नैनों उर्वरक का उपयोग करना अत्यंत आवश्यक हो गया है। दानेदार यूरिया जब किसान भाई खेतों में डालते हैं, तो उसका सिर्फ 30-40% ही फसल ग्रहण कर पाती है। लेकिन शेष मात्रा लगभग 60-70% जमीन में पानी के साथ रिसाव करके नीचे चली जाती है और कुछ मात्रा वाष्पीकरण द्वारा उड़ जाती है।

नैनो उर्वरक के प्रकार

भारत में अभी दो ही प्रकार के नैनो उर्वरक उपलब्ध हैं। जिनमें नैनो यूरिया और नैनो डी.ए.पी हैं लेकिन आने वाले समय में नैनो पोटाश भी किसानों तक उपलब्ध कराया जायेगा।

नैनो यूरिया

यह दानेदार यूरिया के स्थान पर पौधों को नाइट्रोजन प्रदान करने वाला एक तरल पोषक तत्व है। इसको दानेदार यूरिया के स्थान पर विकसित किया गया है और यह इसकी आवश्यकता को कम से कम 50% तक कम कर सकता है। इसकी 500 मिली.ली. की बोतल 40,000 मिलीग्राम / लिक्विड नाइट्रोजन होता है जो कि दानेदार यूरिया के एक बैग द्वारा प्रदान किये गये नाइट्रोजन पोषक तत्व के प्रभाव के बराबर है। दानेदार यूरिया पौधों द्वारा सिर्फ 30-40% ही अवशोषित किया जाता है जबकि नैनो (तरल) यूरिया 80% से अधिक पौधों पर प्रभावशील होता है। शुरुआत में देश के 43 स्थानों को चयनित करके इसका 13 फसलों पर परीक्षण किया गया था लेकिन बाद में 21 राज्यों में 94 फसलों के लिए 61973 किसानों के खेतों पर परीक्षण किया गया है। इससे उपज में औसतन 8.5% की वृद्धि देखी गई है।

विकसित स्थान

इसको आत्मनिर्भर कृषि और आत्मनिर्भर भारत के अनुरूप नैनो तकनीकी रिसर्च सेंटर, कलोल, गुजरात में विकसित किया गया है। यह एक स्वदेशी निर्मित किया गया उत्पाद है। अभी भारत यूरिया की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आयात पर निर्भर रहता है।

लागत

भारत सरकार ने किसानों के लिये इसकी लागत 500 ml. की बोतल की कीमत 240 रुपए रखी है जो कि दानेदार यूरिया के एक बैग की कीमत से 10% सस्ती है। जिसके कारण किसानों की लागत में कमी देखी गई है।

ISSN No. 2583-3316

नैनो यूरिया के उपयोग की विधि

नैनो यूरिया का 2-4मिली./ली. पानी या 500मिली./एकड 125ली. पानी के घोल का खडी फसल पर छिड़काव करना चाहिए। सर्वोत्तम परिणामों के लिये जब फसल में फुटाव/शाखाएँ निकलने की स्थिति में हो (बिजाई/रोपाई के 35-40 दिन बाद) तब इसका पहला छिड़काव कर देना चाहिए और दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव के 25-30 दिन बाद या फसल में फूल आने से पहले कर दें। इससे हम 3-5 मिली प्रति किग्रा. बीज/कंद/जड़ को उपचारित करके बीजशोधन भी कर सकते हैं। इसका छिड़काव नैपशेक स्प्रेयर या ड्रोन की सहायता से करें। इसका उपयोग सभी प्रकार की फसलों पर जैसे अनाज, दलहन, शाकभाजी, फल, फूल, ओषधीय फसल आदि पर किया जाता है।

ड्रोन द्वारा छिड़काव

नैपशेक स्प्रेयर द्वारा छिड़काव

नैनो यूरिया का फसलों पर कार्य

ये उर्वरक के रूप में पौधों की पोषक तत्वों की आवश्यकता को पूरा करता है। इसमें इसके वांछनीय कणों का आकार लगभग 20-50 नैनो मीटर होता है। पत्तियों में क्लोरोफिल और प्रकाश संश्लेषण में वृद्धि और टहनियों /शाखाओं आदि की संख्या में वृद्धि होती है। दानेदार उर्वरक की अपेक्षा यह उर्वरक फसलों पर छिड़काव के रूप में डाला जाता है जो पत्तियों द्वारा सीधा अवशोषित कर लिया जाता है। यह वाष्पीकरण के साथ-साथ लीचिंग और रिसाव से होने वाले नुकसान को कम करता है।

नैनो यूरिया का लाभ

- फसल में खाद की लागत को कम करके किसानों की आय में वृद्धि करता है।
- नैनो यूरिया फसल में नाइट्रोजन की आवश्यकता को पूरा करता है।
- फसल उत्पादन में वृद्धि करता है।
- फसल और पोधों में प्रकाश संस्लेषण की क्रिया को बढाता है।
- नैनो यूरिया फसलों की गुणवत्ता में सुधार करता है।
- ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में अहम भूमिका निभाता है।
- यह मिटटी, हवा और पानी की गुणवत्ता को बचाने में मदद करता है।
- नैनो उर्वरक को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने में आसानी रहती है जिसके कारण किसानों को ट्रांसपोर्टेशन के समय उनकी लागत में कमी आती है।
- यह भूमिगत जल की गुणवत्ता में भी सुधार करता है।
- किसानों को दानेदार उर्वरक की एक बोरी की अपेक्षा नैनो यूरिया की 1 बोतल आधी मात्रा में प्राप्त हो जाती है।

नैनो यूरिया को उपयोग करते समय सावधानियाँ

- नैनो यूरिया की बोतल को बच्चों और पशुओं से दूर रखें।
- इसका छिड़काव करते समय शरीर को अच्छे से ढक लें।
- किसान भाइयों को इसका छिड़काव करते समय ध्यान में रखना चाहिए कि जब मौसम साफ हो तब इसका उपयोग करें कभी ऐसा भी होता है कि किसान भाई फसल में छिड़काव कर आने के बाद तुरंत बारिश पड़ जाती है और द्रव पदार्थ पानी से धुलकर पत्तियों से नीचे जमीन में चला जाता है। इसलिए मौसम का विशेष ध्यान रखना जरुरी है।
- किसान भाई एक चीज़ का और ध्यान रखें कि नैनो यूरिया

(उर्वरक) को किसी अन्य तत्व जैसे ह्यूमिक एसिड, फ्लुविक एसिड, जिब्रेलिक एसिड या PGR के साथ में मिलाकर छिड़काव नहीं करना चाहिये।

नैनो डी.ए.पी

नैनो डी.ए.पी. एक नैनो तकनीकी आधारित उर्वरक है इसमें नाइट्रोजन 8% एवं फॉस्फोरस 16% उपलब्ध रहती है। जो कि पौधों को नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस प्रदान करता है। नैनो डी.ए.पी. (तरल) जब पौधों पर डाला जाता है तब यह तत्काल पोधों की आवश्यकता अनुसार नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की कमी को पूरा करता है इससे जड़ अनुपात में सुधार होता है।

नैनो डी.ए.पी उर्वरक उपयोग करने का तरीका

अगर किसान भाई इससे बीज उपचार या जड़ शोधन करते हैं तब 3.5 मिली. नैनो डी.ए.पी. प्रति किलो बीज या 3.5 मिली. नैनो डी.ए.पी. प्रति लीटर पानी कंद/जड़ शोधन के लिये उपयोग करें। बीज या जड़ शोधन के लिये 20-30 मिनट तक पानी मैं डुबो कर रखें। उसके बाद छाया में सुखा लें और फिर बुआई अथवा रोपाई करें और अगर किसान भाई इससे खड़ी फसल पर छिड़काव करते हैं तब 2-4 मिली. नैनो डी.ए.पी. प्रति लीटर साफ पानी में घोलकर वानस्पतिक वृद्धि के समय छिड़काव करें या 250-500 मिली. प्रति एकड़ की दर से खड़ी फसल पर उपयोग करना चाहिये।

नैनो डी.ए.पी का लाभ

- दानेदार डी.ए.पी की अपेक्षा यह किसानों को आधी मात्रा में प्राप्त हो जाता है जिससे कि किसान की लागत में कमी आती है।
- किसानों को सीधा 50% का लाभ प्राप्त होता है, जिससे किसान की आय में वृद्धि होती है।
- फसल उत्पादन में वृद्धि होती है और फसल की गुणवत्ता में सुधार भी होता है ।
- नैनो डी.ए.पी फसल में फॉस्फोरस की आवश्यकता को पूरा करता है।
- यह मिटटी, हवा और पानी की गुणवत्ता को बचाने में मदद करता है।
- यह पत्ती क्लोरोफिल, प्रकाश संश्लेषण, जड़ बायोमास, प्रभावी कल्ले और शाखाओं की संख्या में वृद्धि करती है, जिससे फसल की उपज बढ़ जाती है।

नैनो डी.ए.पी को उपयोग करते समय सावधानियाँ

- बच्चों एवं पशुओं से इसको दूर रखें।
- इसका उपयोग करते समय मास्क और दस्ताने पहन लें।
- इसको ठंडे एवं सूखे स्थान पर रखें।
- इसका उपयोग करते समय मौसम का विशेष ध्यान रखना चाहिये कभी-कभी किसान भाई जैसे ही खेत मैं इसका छिड़काव करके आते हैं और बाद में वारिश होने के कारण डी.ए.पी. (तरल पदार्थ) खुल कर नीचे जमीन मैं चला जाता है, जिसके कारण किसान को नुकसान का सामना करना पडता हैं।
- किसान भाई नैनो डी.ए.पीकी बोतल समाप्ति तिथि को देख कर ही बाजार से खरीदे।

निष्कर्ष

नैनो यूरिया और डी.ए.पी. का उपयोग करने से मृदा की दशा में सुधार होता है। किसानों की लागत में कमी पायी जाती है जिससे फसलों की पैदावार में वृद्धी होती है। किसानों की आय में वृद्धी होती है। हवा और पानी की गुणवत्ता को बचाने में मदद करता है। नैनो उर्वरक की बोतल को एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाने ले जाने में आसानी रहती है जिसके कारण किसानों को ट्रांसपोर्टेशन के समय उनकी लागत में कमी आती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पूर्वांचल में होने वाली बेल की प्रमुख किस्में

हंस राज वर्मा*, वेदांत सिंह, सुप्रिया गोपाल नैक एवं सोनम

फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्राद्यौगिकी विस्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: hansrajsr996@gmail.com

परिचय

बेल भारत का एक स्थानीय वृक्ष है, जो भारतीय उपमहाद्वीप के विभिन्न देशों जैसे श्रीलंका, पाकिस्तान, बंगलादेश, बर्मा और थाईलैंड में भी पाया जाता है। बेल को वैज्ञानिक जगत में *'एगल मार्मेलोस'* के नाम से भी जाना जाता है, यह रुटेसी कुल का हिस्सा है और भारत के कई राज्यों जैसे उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तरांचल, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा में पाया जाता है। बेल का वृक्ष लगभग 12 मीटर ऊँचा और फैला हुआ होता है, जिसकी लटकती हुई शाखाएँ होती हैं। इसकी पत्तियाँ त्रिपर्णीय होती हैं और इनमें छोटी-छोटी तेल ग्रंथियाँ पाई जाती हैं। बेल के फूल पीले, हरे रंग के सुगंधित गुच्छों में खिलते हैं, जबकि इसके फल गोल, कड़े बाहरी आवरण वाले और सुगंधित होते हैं। फल का गूदा मिठास से भरा होता है और इसमें चिपचिपा सफेद द्रव्य भरा होता है। बेल का फल लगने के 1 वर्ष बाद पकता है और आमतौर पर अप्रैल-मई में तैयार होता है। बेल की मानक किस्मों का पहले कोई ज्ञात रिकॉर्ड नहीं था, और केवल कुछ स्थानीय किस्में जैसे देवरिया बड़ा, सिवान बड़ा, चकैया, मिर्ज़ापुरी बघेल, लंबा और कागजी इटावा की खेती की जाती थी। हालाँकि, हाल ही में कुछ नए किस्में विकसित की गई हैं।

रासायनिक संरचना

पदार्थ	मात्रा (Range)
नमी	59.37 - 62.70%
चीनी	12.50 – 17.90%
म्यूसिलेज	12.78 - 19.57%
अम्लता	0.31 – 0.40%
कुल घुलनशील पदार्थ	30.31 – 35.50%
कुल प्रोटीन	2.26 – 3.22%
विटामिन	8.98 – 18.20 mg/100g
कुल फिनालिक पदार्थ	1755 – 3000 mg/100g

वर्तमान पूर्वांचल में बेल की प्रमुख किस्में है

नरेंद्र बेल -4 इस किस्म के पेड़ सीधे खड़े होते है, पेड़ मध्यम आकार के, पत्ते अर्द्ध सघन, तने का रंग काला-भूरा, अनियमित तरीके से छाल के फटने के साथ, पत्ती मध्यम आकार की तथा हरे रंग की चिकनी सतह के साथ लहरदार किनारा पाया जाता है। पेड़ में बहुत कम कांटे, फल का औसतन वजन 0.750 कि.ग्रा., टीएसएस लगभग 28^{0} बी, होता है।

नरेंद्र बेल -5: इस बेल की किस्म के पेड़ की ऊँचाई 3-5 मीटर होती है। फल गोल और चपटे सिरे वाले होते हैं, जिनका औसत वजन 900-1000 ग्राम है। इनमें कम श्लेष्मा, कम बीज और फाइबर होती है, साथ ही स्वाद उत्कृष्ट और टीएसएस उच्च ($35\text{-}38^{0}$ बी) होता है। एक पूर्ण विकसित पेड़ से औसतन 50-60 कि.ग्रा. फल की उपज होती है।

नरेंद्र बेल-7: इस किस्म के पौधों की ऊँचाई 5-7 मीटर होती है और उनका फैलाव कम होता है। फलों का आकार चपटे सिरों वाला (17.5×74.0 सेमी) होता है और वजन 3.0-4.5 कि.ग्रा. के बीच होता है। फलों में बीज और फाइबर की मात्रा मध्यम होती है, तथा टीएसएस $27\text{-}30^{0}$ बी होता है। एक पूर्ण विकसित पेड़ से औसत फल उपज 70-80 कि.ग्रा. होती है।

नरेंद्र बेल-8: इस किस्म में लगने वाला फल का आकार ग्लोब के समान है, औसतन फल का आकार 48.0× 50.4 सेमी और वजन करीब 1.00-1.25 कि.ग्रा. होता है। पकने पर फल का छिलका हल्का पीला हो जाता है। गूदा हल्का पीला, स्वादिष्ट और लगभग 77.8 % होता है, जबकि बीजों की संख्या कम होती है। इसका टीएसएस 30^{0} बी, अम्लीयता 0.75% और एस्कॉर्बिक एसिड 18 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम गूदा पाया जाता है। प्रति पेड़ औसत फल की पैदावार 125-135 कि.ग्रा. होती है।

नरेंद्र बेल-9 इस किस्म के पौधे मध्यम ऊँचाई (4-6 मीटर) और फैलने वाले स्वभाव के होते हैं। फल मध्यम आकार

(26× 33 सेमी) और चिकनी सतह के साथ आयताकार गोल होते हैं इसके फलो का टीएसएस (35-40° बी) उच्च होता है। फल में मध्यम मात्रा में श्लेष्मा होती है, मध्यम फाइबर, हल्की सुगंध, मीठा स्वाद, हल्की अम्लता, नरम नारंगी पीला गूदा, पतला खोल और बीज की मात्रा कम होती है। औसतन उपज 70-80 कि.ग्रा. होती है।

नरेंद्र बेल-16 इस किस्म के पेड़ सीधे खड़े होते है, पेड़ मध्यम आकार के, पत्ते अर्द्ध सघन, तने का रंग काला-भूरा, अनियमित तरीके से छाल के फटने के साथ, पत्ती मध्यम आकार की तथा हरे रंग की चिकनी सतह के साथ लहरदार किनारा पाया जाता है। पेड़ में बहुत कम काँटे, फल का वजन औसतन 0.86 कि.ग्रा., गूदा फल का वजन अनुपात 0.77%, टीएसएस लगभग 35° बी, मध्यम बीज सामग्री पायी जाती है।

नरेंद्र बेल-17 इस किस्म के पेड़ फैलने वाले अर्द्ध सघन, तने का रंग भूरा छाल आयताकार तरीके से फटी हुई, पत्ती मध्यम आकार की, सतह चिकनी लहरदार होती है। काँटा मध्यम आकार का, फल का वजन 1.95 कि.ग्रा., गूदा फल अनुपात 0.76%, टीएसएस 36.5° बी बीज की संख्या (103 बीज/फल) कम होती है।

CISHB-1 यह एक मध्य ऋतु की किस्म है, जो अप्रैल-मई में पकती है। इसके पेड़ ऊँचे, मजबूत और घनी छतरी वाले होते हैं। फल अंडाकार से आयताकार (15-17.8 सेमी) के होते हैं, जिनका औसत वजन 1.01 कि.ग्रा. होता है। फल का छिलका पतला (0.12-0.15 सेमी), गूदा गहरे पीले रंग का, मीठा और कम श्लेष्मायुक्त होता है। पकने पर फल पीला हो जाता है और इसमें उच्च टीएसएस (38.0° बी) पाया जाता है। यह प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त है, एक पूर्ण विकसित पेड़ की औसत उपज 50-80 कि.ग्रा. होती है।

CISHB-2 यह एक खुले परागण वाले पौधों से विकसित किस्म है, जिसके पेड़ बौने और मध्यम प्रसार वाले होते हैं। इसके पत्ते विरल और लगभग कांटों रहित होते हैं। इसके फल आयताकार से गोलाकार होते हैं, जिनकी लंबाई 14.80 सेमी, परिधि 52.64 सेमी और औसत वजन 2.25 कि.ग्रा. होता है। फल का गूदा नारंगी-पीला और छिलका नारंगी रंग का होता है। फल में बीज और फाइबर की मात्रा कम होती है और इसका स्वाद सुगंधित और अच्छा होता है। एक पेड़ से 60-90 कि.ग्रा. तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

बेल का प्रवर्धन एवं पोषण

बेल का प्रवर्धन मुख्यतः बीज द्वारा किया जाता है, जिसे फलों से निकालने के तुरंत बाद बोना चाहिए। इनका सबसे उपयुक्त समय जून है। इसके अलावा, जड़-कलम और गूटी द्वारा प्रवर्धन भी किया जा सकता है, लेकिन ये विधियाँ प्रभावी नहीं हैं। बेल के दो वर्ष पुराने बीजों पर एक माह पुरानी कलिका चढ़ाने से 80% सफलता मिलती है। पौधों की रोपाई के लिए 8-10 मीटर के अंतराल पर 1 घन मीटर के गड्ढे खोदकर उनमें गोबर की खाद और मिट्टी भरी जाती है। रोपण का उपयुक्त समय जून से जुलाई है।

बेल के वृझ को सभी आवश्यक पोषक तत्व चाहिए होते हैं, जैसे 500 ग्राम नाइट्रोजन, 250 ग्राम फॉस्फोरस और 500 ग्राम पोटाश प्रतिवर्ष, साथ ही 0.5% जिंक सल्फेट का छिड़काव भी आवश्यक है। बेल गर्मियों में बिना सिंचाई के भी उग सकता है, क्योंकि इसकी पत्तियाँ गर्मी में गिर जाती हैं, जिससे यह सूखे को सहन कर लेता है।

रोग एवं कीट नियंत्रण

- **फलों का फटना**

बेल की कुछ किस्मों, जैसे NB-5 में फल फटने की पौधों के शारीरिक विकार की समस्या होती है, पौधे के शारीरिक विकार के कारण फल पकने से पहले फट जाते है और जो बिक्री में मुश्किलें उत्पन्न करती है। इस समस्या का समाधान करने के लिए, फलों को जनवरी में तोड़कर कृत्रिम रूप से पकाने की सलाह दी जाती है। इसके लिए, फलों को 1000-1500 पी. पी. एम. इथरेल से उपचारित करके 30 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 18-24 दिनों तक रखा जाता है। इस प्रक्रिया से फलों की गुणवत्ता और बाजार मूल्य में सुधार होता है, जिससे फटने की संभावना कम हो जाती है।

- **रोग**

बेल में दो प्रमुख रोग लगते हैंः पहला कैंकर (बैक्टेरियल शॉटहोल) और दूसरा अंतर्विग्लन।

क) कैंकर रोग, जो जीवाणु जैन्थोमोनस बिल्वी से होता है, प्रभावित हिस्सों पर जलाशोषित धब्बे बनाता है, जो बाद में भूरे हो जाते हैं और फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं। इसके रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोमायसीन सल्फेट का छिड़काव किया जाता है।

ख) अंतर्विग्लन रोग मुख्यत संग्रहित फलों में होता है, जिससे फल का गूदा सड़कर नष्ट हो जाता है। इसके रोकथाम हेतु फलों को तोड़ते समय चोट से बचाना और परिवहन के दौरान उचित पैकिंग सुनिश्चित करनी चाहिए। इन उपायों से बेल को इन रोगों से सुरक्षित रखा जा सकता है, जिससे उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा में सुधार होता है।

• **कीट**

बेल का पेड़ आमतौर पर कीटों से सुरक्षित रहता है, लेकिन पर्ण सुरंगी और पर्ण भक्षी इल्ली कभी-कभी थोड़ी हानि पहुँचा सकते हैं। विशेष रूप से, पर्ण भक्षी इल्ली पत्तियों को काटकर पेड़ की सेहत पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। इन कीटों की रोकथाम के लिए नींबू वर्गीय फलों में वर्णित दवाओं का छिड़काव करना प्रभावी होता है। उचित उपायों से बेल के पेड़ को कीटों के हमलों से बचाया जा सकता है, जिससे उसकी उत्पादकता और स्वास्थ्य में सुधार होता है।

भंडारण, विपणन एवं उपयोग

बेल का फल अपनी लंबी भंडारण क्षमता, औषधीय गुणों और पोषण तत्वों के कारण महत्वपूर्ण है।

क) भंडारण क्षमता

- साधारण स्थिति में 15-20 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है।
- लंबे समय तक भंडारण के लिए शीत भंडारण उचित होता है।

ख) विपणन के तरीके

- ताजे फल सीधे बाजार में बेचे जाते हैं।
- संरक्षित उत्पाद (जैसे मुरब्बा, शरबत, पाउडर) बनाकर बेचा जाता है।

औषधीय गुण

बेल के औषधीय गुण मार्मेलोसिन नामक पदार्थ के कारण होते हैं। इसका उपयोग पाचन तंत्र को सुधारने, आंतों को मजबूत करने और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में किया जाता है। बेल का फल स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होने के साथ-साथ व्यावसायिक रूप से भी महत्वपूर्ण है। इसका उपयोग औषधीय, पोषण और प्रसंस्कृत उत्पादों में बढ़ रहा है, जिससे किसानों को भी अच्छा लाभ मिल सकता है।

पाचन स्वास्थ्य

बेल फल में फाइबर की मात्रा अधिक होती है, जो कब्ज को दूर करने में मदद करता है। इसमें टैनिन भी होता है, जो दस्त और पेचिश के इलाज में सहायक होता है। बेल का रस आंतों को साफ करता है और पाचन क्रिया को सुधारता है। यह पेट में गैस और एसिडिटी को कम करने में भी मदद करता है।

हृदय स्वास्थ्य

बेल फल में एंटीऑक्सीडेंट होते हैं, जो कोलेस्ट्रॉल को कम करने में मदद करते हैं। यह रक्तचाप को नियंत्रित करने में भी सहायक होता है। बेल का नियमित सेवन हृदय रोगों के खतरे को कम कर सकता है।

रोग प्रतिरोधक क्षमता

बेल में विटामिन सी की मात्रा अधिक होती है, जो रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। यह शरीर को संक्रमणों से लड़ने में मदद करता है। बेल में मौजूद एंटीऑक्सीडेंट मुक्त कणों से होने वाले नुकसान से बचाते हैं।

त्वचा और बालों के लिए

बेल का रस त्वचा को स्वस्थ और चमकदार बनाता है। यह त्वचा की समस्याओं, जैसे कि मुंहासे और एक्जिमा, को कम करने में मदद करता है। बेल का तेल बालों को मजबूत बनाता है और बालों के झड़ने को कम करता है।

अन्य उपयोग

बेल फल पीलिया के इलाज में सहायक हो सकता है। यह एनीमिया के लक्षणों को कम करने में मदद कर सकता है। बेल का रस बवासीर के लक्षणों से राहत दिला सकता है। गर्मियों में बेल का शरबत पीने से लू से बचाव होता है। यह फल गुर्दे और लिवर के लिए भी लाभदायक है।

बेल का उपयोग कैसे करें

बेल का फल कच्चा या पकाकर खाया जा सकता है। इसका जूस या शरबत बनाकर पिया जा सकता है। बेल के पत्तों और जड़ों का उपयोग औषधीय रूप से किया जा सकता है। बेल के गूदे को पानी में भिगोकर और मैश करके भी खाया जा सकता है। बेल का मुरब्बा भी बनाया जाता है।

सावधानियाँ

बेल के फल का अधिक सेवन करने से पेट खराब हो सकता है। गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं को बेल का सेवन करने से पहले डॉक्टर से सलाह लेनी चाहिए। मधुमेह रोगियों को बेल का सेवन सावधानी से करना चाहिए, क्योंकि इसमें प्राकृतिक शर्करा होती है।

निष्कर्ष

बेल पोषक तत्वों से भरपूर एक महत्वपूर्ण औषधीय फल है इस फल के सेवन से अनेक बीमारियों से बचा जा सकता है, जिससे यह स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होने के साथ-साथ व्यवसायिक रूप से भी महत्वपूर्ण है जिससे किसान इसे बेच कर अच्छा लाभ कमा सकते है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

सेब का कोर रॉट रोगः एक उभरती समस्या एवं उसका प्रबन्धन

निखिल चौहान*, अमन शर्मा एवं शालिनी वर्मा

पादप रोग विज्ञान विभाग, डॉ. यशवंत सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन, हिमाचल प्रदेश

पत्राचारकर्ताः nikhilchauhan5034@gmail.com

परिचय

भारतवर्ष में सेब की खेती मुख्यतः इसके पहाड़ी प्रदेशों जैसे जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, अरूणाचल प्रदेश, एवं सिक्किम में की जाती है। आश्चर्य की बात यह है कि इसकी पैदावार 6-9 टन प्रति हैक्टेयर विश्व के सेब उत्पादक देशों जैसे न्यूजीलैंड, चीन, जापान, अमेरिका, यूरोपियन देशों व आस्ट्रेलिया 30-40 टन प्रति हैक्टेयर की तुलना में बहुत कम है। इस कम पैदावार के विभिन्न कारणों में से रोगों के संक्रमण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। पिछले कुछ वर्षों में यहां बागवानों ने वैज्ञानिक रोग निवारण ढंग अपना कर स्कैब, असामयिक पत्ता झड़न, कैंकर, कॉलर रॉट व जड़ विगलन जैसे महत्त्वपूर्ण रोगों से निजात प्राप्त की है। वहीं पर कुछ नयी रोग समस्याएं, जिनमें कोर रॉट मुख्य है, उभर कर सामने आई है। इसके फलरूवरूप मध्य जून से लेकर फल तुड़ान तक भारी फल गिरावट 5-25% होने के कारण काफी हानि का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त 2-7% तक संक्रमित फल भण्डारण में भी सड़ते हैं। यदि बागवान भाइयों को इस रोग के लक्षण, रोगचक्र व रोकथाम सम्बंधी जानकारी हो तो वे समयानुसार इस रोग की रोकथाम कर उत्पाद में वृद्धि लाकर अधिक धन अर्जित कर सकते हैं।

कोर रॉट रोग के लक्षण

कोर रॉट के लक्षण फलों के ऊपर प्रायः जून माह से फल तुड़ाई के पूर्व तक दिखाई देते हैं। परन्तु जून-जुलाई माह में इसका भारी प्रकोप होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण इस प्रकार हैंः

- रोगग्रस्त फलों की का विकास रूकना, आकार में छोटे व विकृत होना।
- रोगग्रसित फलों में स्वस्थ फलों की अपेक्षा जल्दी व अधिक रंग आना और ऐसे फलों का असामयिक गिरना।
- रोगग्रस्त फलों को काट कर देखने पर कोर, बीज के इर्द-गिर्द भाग में काली, गुलाबी या भूरी सड़न का दिखाई देना।
- बाजार में रोगग्रस्त फल बाहर से ठीक दिखाई देते हैं, परन्तु बीज से गूदे की ओर सड़ रहे होते हैं, व कई बार ऐसे फलों के गूदे में कड़वाहट होती है।
- रोगग्रस्त फल कई बार भण्डारण में भी सड़ जाते हैं।

रोगचक्र

रोगजनक फफूँद प्रायः सेब के रोगग्रस्त पत्तों, फलों व टहनियों पर जीवित रहते हैं। ये फफूँद प्रायः मार्च-अप्रैल माह में सेब में फूल से पंखुड़ीपात की अवस्था में, फूल के विभिन्न भागों पर पनपकर संक्रमण करते हैं, व अंदर रह जाते हैं। कई बार रोगजनक फफूँद मटर की अवस्था; जब पुष्कोश अंत भाग ऊपर की ओर होता है, से फल विकास अवस्था तक पुष्कोश अंत से साइनस द्वारा फल के अंदर बीज तक पहुँच कर जीवित रहता है। ये रोगजनक फलों में रंग आने के समय, जब फलों में मिठास बनने शुरू होती है, तब सेब के बीज के इर्द-गिर्द फैल कर सड़न पैदा करते हैं। इसके परिणामस्वरूप बीज का फल से सम्बन्ध समाप्त हो जाता है। बीज मुख्यतः फल में ऑक्सिन हारमोन पैदा कर फल के आकार में बढ़ोतरी लाता है व इसे गिरने से रोकता है। बीज फल से अलग होने के कारण इसमें जल्दी रंग लाने वाले हारमोन, एथिलीन व इसे गिरने में मदद करने वाले रस धनिक, एबसैसिक एसिड का अनुपात बढ़ जाता है। इस कारण रोगग्रसित फलों में स्वस्थ फलों की अपेक्षा जल्दी रंग आता है व प्रभावित फलों में बढ़ोतरी रूक जाती है और उनका असामयिक गिरान हो जाता है।

अनुकूल वातावरण व परिस्थितियाँ

- फूल खिलने से फल बनने की अवस्था में सामान्य नमी

ISSN No. 2583-3316

औसतन तापमान 14-18 डिग्री सेल्सियस होने पर रोगजनक फफूँद अधिक पनपकर सफलतापूर्वक संक्रमण करते हैं।

- फल विकास अवस्था में गर्म व शुष्क मौसम इस रोग के फैलने में सहायक सिद्ध होता है। ऐसी परिस्थितियाँ प्रायः कम ऊँचाई, 4000 फीट वाले बगीचों में पायी जाती है।
- मई-जून में शुष्क मौसम के बाद जुलाई से फल तुडान तक अधिक वर्षा होती है तब भी औसतन तापमान 21-24 डिग्री सेल्सियस व औसतन नमी 70-82 % होने से भी यह रोग अधिक फैलता है।
- जिन सेब की किस्मों में साइनस; पुष्कोश अन्त से बीज तक का भाग की लम्बाई कम होती है या जो किस्में लम्बाई में कम व चौड़ाई में अधिक होती है उनमें यह रोग अधिक पनपता है।

कोर रॉट रोग का प्रबंधन

- बगीचों में रोगग्रसित फलों, सूखी टहनियों व पत्तों को इक्ट्ठा करके नष्ट करें। ऐसा करने से रोगजनक फफूँदों की संख्या में कमी आती है।
- फल विकास की अवस्था में उचित सिंचाई का प्रबन्ध करने से यह रोग कम फैलता है।
- गुलाबी कली की अवस्था पर कारबैंडाज़िम 100 ग्राम मैंकोजैब 500 ग्राम या कोम्बीप्रोडक्ट 500 ग्राम या डाइफैनाकोनाजोल 30 मि.ली. या प्रोपिनेव 600 ग्राम का प्रति 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
- पंखुड़ीपात से मटर पर हैक्साकोनाज़ोल 100 मि.ली. या किवंटल 300 ग्राम या परोपिकोनाजोल 100 मि.ली. का प्रति 200 लीटर पानी में डालकर छिड़काव करें।
- कन्चें से अखरोट की अवस्था पर डोडीन 150 ग्राम या मैंकोजेब 500 ग्राम हैक्साकोनाजोल 100 मि.ली या मैटीराम/ पोलीराम 400 ग्राम या कैप्टान 600 ग्राम नामक फफूँदनाशकों का प्रति 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
- फल तुड़ान के बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 600 ग्राम प्रति 200 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें जो कैंकर रोग के निवारण हेतु आवश्यक है। यह इस रोग के रोगजनकों, जो टहनियों या पत्तियों पर पनपते हैं का भी नियंत्रण करता है।
- अनुमोदित खादों का संतुलित प्रयोग करने से इस रोग का संक्रमण कम होता है।

नोट

ऊपर लिखित छिड़काव स्कैब, असामयिक पत्ता झड़न, पाउडरी मिल्डयू व पत्ता ध्ब्बा रोगों के लिए भी उपयोगी है, परन्तु कोर रॉट निवारण हेतु गुलाबी कली, पंखुड़ी पात व फल विकास अवस्था पर ऊपरलिखित फफूँदनाशकों का छिड़काव अति आवश्यक व अनिवार्य है।

निष्कर्ष

कोर रॉट सेब की दुनिया भर में बाद की फसल के नुकसान का एक प्रमुख कारण है जो विभिन्न रोगाणु फफूंदों, जिसमें कई आल्टर्नारिया और पेनीसिलियम प्रजातियाँ शामिल हैं, के द्वारा उत्पन्न होती है, सेबों की एक प्रमुख फसल पश्चात रोग है जो विश्वव्यापी है। बाग के अंदर बीमारी की घटनाएँ और गंभीरता यह प्रभावित कर सकती हैं कि उत्पादन में कितनी हानि होती है। कोर रॉट बीमारी से सेब के उत्पादकों को बड़े वित्तीय नुकसान उठाने पड़ सकते है, जैसे सड़ रहे या संक्रामक सेबों को छांटने, अलग करने और फेंकने की लागत भी वित्तीय नुकसान पर प्रभाव डाल सकती है। रोगग्रसित वाले सेब स्वस्थ फलों में इसे फैला सकते हैं, जिससे गुणवत्ता में ह्रास और बाजार मूल्य कम होता है। ये अध्ययन यह सुझाव देते हैं कि कोर रोट से सेब के बागों पर मापने योग्य प्रभाव पड़ सकता है, जिससे उत्पादन में कमी आ सकती है और इन क्षेत्रों में सेब उत्पादन की आर्थिक स्थिरता पर प्रभाव पड़ सकता है। इन नुकसानों के अलावा, कोर रोट संक्रमित फल में पोषण हानि भी पैदा कर सकता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

इनोकी या गोल्डेन निडिल मशरूम उत्पादन तकनीक

राम प्रवेश प्रसाद* एवं दयाराम

एडवांस सेंटर ऑफ मशरूम रिसर्च, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: rpprasad79@gmail.com

परिचय

इनोकी मशरूम या गोल्डेन निडिल, लिली या इनोकी टेक मशरूम से भी जाना जाता है। यह *फ्लैम्युलिना वेलुटिप्स* के नाम से वैज्ञानिक जगत में जाना जाता है। यह मशरूम CO_2 युक्त वातावरण में तथा साधारण प्रकाश युक्त वातावरण में अच्छी तरह उगता है। यह पीला श्वेत, रंग का होता है इसकी लम्बाई लगभग 5 ईच की होती है जो बिल्कुल पतला तथा इसकी छोटी टोपी होती है। बिहार की जलवायु मशरूम उत्पादन के अनुकूल पाया गया है क्योंकि यहाँ का तापक्रम कम से कम 10 डिग्री सेल्सियस (शीतकाल में) तथा अधिकतम 40 डिग्री सेल्सियस (गर्मियों में), आर्द्रता 40% से 100% तक पाया जाता है। मशरूम की सभी खाने वाली प्रजातियां 10 डिग्री सेल्सियस से 38 डिग्री सेल्सियस के बीच में ही प्राकृतिक रूप से उगती है। इन प्रजातियों को कृत्रिम ढंग से झोपड़ी (फूस), कच्चा या पक्का घर में मौसम के हिसाब से उगाकर (खेती) कुपोषण तथा गरीबी से छुटकारा पाया जा सकता है। इसके अलावा बाजार की मांग के अनुसार इन्हे कृत्रिम ढंग (नियन्त्रित कक्ष में) से सालो भर खेती करके अच्छी आय प्राप्त करने के साथ-साथ स्वरोजगार सृजन तथा रोजगार सृजित किया जा सकता है।

इस दिशा में डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय में कुपोषण उन्मूलन तथा आय एवं रोजगार सृजन हेतु मशरूम उत्पादन तथा प्रसंस्करण तकनीक हेतु एडवांस सेन्टर ऑफ मशरूम रिसर्च की स्थापना वर्ष 2019 में किया। मशरूम में शोध (अनुसंधान) शिक्षा एवं प्रसार कार्यक्रम के परिणामस्वरूप आज बिहार में कुल 10 प्रकार के मशरूम की खेती की तकनीक विकसित किया गया है। जिसमें ऑयस्टर मशरूम, बटन मशरूम, श्वेत दूधिया मशरूम एवं पैडी स्ट्रा मशरूम की व्यावसायिक खेती करने से बिहार 2021-22 से देश में प्रथम स्थान पर है। इसके अलावा शिटाकें, हेरीशियम, सीजाफाईलम, ऑरी कुलेरिया एवं किंग ऑयस्टर की खेती शुरू किया गया है। इसमें शिटाके मशरूम का उत्पादन व्यावसायिक स्तर पर शुरू किया गया शेष मशरूम किसानों के फार्म पर प्रत्यक्षण किया जा रहा है। वर्ष 2025-26 में इनोकी मशरूम प्रायोगिक तौर पर उगाने में सफलता प्राप्त हुआ है। इसकी माँग भारत के अलावा अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में अधिक है। अतः व्यावसायिक उत्पादन की दिशा में प्रयास किया जा रहा है। क्योंकि शीतकालें में बिहार का तापक्रम 10-22 डिग्री सेल्सियस 3 माह तक रहता है। अतः इस बीच में इस प्रजाति की तीन फसलें ली जा सकती है। इनोकी मशरूम को सलाद में कच्चा खाया जा सकता है।

पौष्टिक एवं औषधीय गुण

चीन में इनोकी मशरूम की खेती 800 शताब्दी से की जा रही है। आज इसकी खेती मुख्यतया चीन, साइवेरिया, एशिया, यूरोप, अफ्रीका उत्तरी अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ताइवान और जापान में व्यावसायिक स्तर पर किया जा रहा है, परन्तु भारत में यह अभी प्रयोगशालाओं में अनुसंधान अवस्था में है। इसका उपयोग फ्राई, सूप, स्टू में किया जा सकता है। इनोकी मशरूम को तोड़कर अच्छी तरह धोये आवश्यकतानुसार आकार में काट कर तेल में भूने और आवश्यकतानुसार प्रयोग करें।

ISSN No. 2583-3316

यह मशरूम खाने में स्वादिष्ट होता है, तथा लीवर, पेट एवं आँत के अल्सर से बचाव एवं इसका नियंत्रण करता है। इसके अतिरिक्त रोगरोधी क्षमता को बढ़ाता है तथा टयूमर को नियंत्रित करता है। इसकी खेती को बिहार सहित अन्य राज्यों में प्रबल सम्भावना है।

इनोकी मशरूम विटामिन बी और विटामिन डी का भी अच्छा स्रोत है। इनोकी मशरूम में पोटैशियम, फॉस्फोरस, सेलेनियम और आयरन जैसे पोषक तत्व पाए जाते है। यह पोषक तत्व शरीर को एनर्जी देने और बीमारियों से दूर रखने में मदद करते है। साथ ही, इनोकी मशरूम फलेवोनोइड्स, फिनोलिक यौगिकों और पॉलीसेकेराइड सहित एंटीऑक्सिडेंट से भरे होते है।

पौष्टिक एवं औषधीय गुण के आधार पर इसमें 31.2 प्रतिशत प्रोटीन, 3.3% रेशा, 5-8% वसा, और 7.6 प्रतिशत राख पाया जाता है। इसके अतिरिक्त मैग्निशियम 4 %, पोटैशियम 36%, आयरन 6%, विटामिन डी 1.0% होता है इन सभी तत्वो के कारण खून में सुगर की मात्रा घटाता है, रक्त चाप कम करता है। दिमागी कमजोरी दूर करने के साथ-साथ शरीर में रोगरोधी क्षमता का विकाश करता है।

स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से इसमें फिनोलिक यौगिक, फ्लेवेनाइड और पाली सैकराइडस भरपूर मात्रा में पाया जाता है, यह तत्व एक एन्टीआक्सीडेन्ट है, जो घातक बीमारी के खतरे से मुक्ति दिलाता है, तथा यह ब्लड प्रेशर एवं कोलेस्ट्रॉल भी कम करता है। यह रक्त धमनियों को सुदृढ़ करती है व इम्यूनिटी को बढ़ाता है। यह फाइवर का उत्तम स्रोत जो पाचन क्रिया को सुदृढ़ करता है। शरीर का वजन (मोटापा) एवं ब्लड शुगर को घटाता है। कैंसर जैसी घातक बीमारी के खतरे को कम करता हैं, विटामिन बी 3 (नियासिन) का उत्तम स्रोत है। इससे हमेशा व्यक्ति उर्जावान बना रहता है, इसके अलावा इस मशरूम का सेवन करने से दिमागी कमजोरी दूर होती हैं, लीवर मजबूत होता है और पेट सम्बन्धी गड़बड़ी दूर होती है।

खेती की विधि

इस मशरूम की खेती 15-22 डिग्री सेल्सियस पर किया जाता है। देश के मैदानी इलाको में इस प्रकार का तापक्रम नवम्बर से फरवरी-मार्च तक पाया जाता है। इस दौरान कुल तीन फसल आसानी से झोपड़ी में ली जा सकती है। इस मशरूम की खेती पापुलर जैसे चौड़ी पत्ती वाले पेड़ों के बुरादा पर आसानी से किया जा सकता है। इसका सबस्ट्रेट शिटाके मशरूम की तरह तैयार किया जाता है।

6.0 कि.ग्रा. चौड़ी पत्ती वाले पेड़ का बुरादा या मक्का का नेढ़ा रात भर पानी में फुलायें तत्पश्चात पानी निचोड़ कर उसमें 4.0 कि.ग्रा. चोकर, 200 ग्राम कैल्शियम कार्बोनेट तथा 200 ग्राम कैल्शियम सल्फेट अच्छी तरह मिलाकर 500 ग्राम मात्रा पी. पी. वैग में भरकर 15 पौण्ड पर 1.30 घंटे तक उपचारित करें तथा ठंडा करने के बाद लैमिनार फ्लों के अन्दर इन वैगों में इनोकुलेशन करके 22-25 डिग्री सेल्सियस तापक्रम पर 25-30 दिन तक रखते है। 30 दिन में पूरे बैग में माइसीलियम फैल जाता है। अब वैग का मुंह खोल देते है। इसके 10 दिन बाद पिन हेड दिखाई देता है। जो अगले 5-10 दिन में काटने लायक हो जाता है। इसे काटकर या तोड़कर उपयोग करते हे। एक फसल लेने में कुल 45-50 दिन का समय लगता है।

उपज की दृष्टिकोण से 500 ग्राम सबस्ट्रेट में 200-250 ग्राम तक मशरूम पैदा होता है। मक्का के नेढ़ा में अच्छी उपज (300-400 ग्राम तक) 500 ग्राम सबस्ट्रेट से प्राप्त होती हैं। अतः बिहार में इसकी खेती करने की अनुशंसा ठंडियों में झोपड़ी में, तथा नियंत्रित कक्ष में सालभर की जा सकती है।

विशेषः नवम्बर के प्रथम सप्ताह में बुवाई करें। अन्तिम सप्ताह में बैग का मुंह खोले ताकि दिसम्बर के द्वितीय सप्ताह तक फल की तुड़ाई हो सकें। इसकी फसल नवम्बर के अन्तिम सप्ताह या दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में लगाये ताकि जनवरी के प्रथम सप्ताह में फसल आयें। तीसरी फसल जनवरी के प्रथम सप्ताह में लगाये ताकि फरवरी मार्च तक फसल मिलती रहें। नियंत्रित कक्ष में सालभर इसकी उपज ली जा सकती है। इनोकी मशरूम की खेती से सम्बन्धित बीज उत्पादन तकनीक एवं प्रशिक्षण सम्बन्धी जानकारी के लिये डा0 राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा से सम्पर्क किया जा सकता है।

निष्कर्ष

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर द्वारा मशरूम में शोध (अनुसंधान) शिक्षा एवं प्रसार कार्यक्रम के परिणामस्वरूप आज बिहार में कुल 10 प्रकार के मशरूम की खेती की तकनीक विकसित किया गया है। वर्ष 2025-26 में इनोकी मशरूम प्रायोगिक तौर पर उगाने में सफलता प्राप्त हुआ है। यह मशरूम लंबे, पतले और सफेद होते हैं, जिन्हें अक्सर गुच्छों में बेचा जाता है, वे कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करते हैं, जिनमें पाचन में सुधार, वजन प्रबंधन और मस्तिष्क स्वास्थ्य में सुधार शामिल हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

बेर की खेती

सोनम, वेदांत सिंह, सुप्रिया गोपाल नाईक एवं हंस राज वर्मा*

फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्राद्यौगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: hansrajsr996@gmail.com

परिचय

बेर (*ज़िज़िफस मौरिटियाना*) भारत का एक बहुत पुराना फल देने वाला पेड़ है। इसे कई नामों से (जैसे गरीबों का फल, शुष्क फलों का राजा, चाइनीज फिग और ग्रीष्म पतझड़ी फल) जाना जाता है, बेर का मूल स्थान मध्य एशिया माना जाता है। यह पेड़ गर्म और कम नमी वाली जलवायु में सबसे अच्छा उगता है, इसलिए यह भारत के ज्यादातर हिस्सों में पाया जाता है, खासकर महाराष्ट्र, गुजरात, मध्य प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, बिहार, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और असम राज्यों में पाया जाता है। दुनिया भर में, बेर उगाने वाले देशों में भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर है, जहाँ लगभग 1 लाख हेक्टेयर भूमि पर यह उगाया जाता है। बेर का पेड़ जल्दी बढ़ता है और छोटा होता है और इसकी शाखाएँ लटकी हुई होती हैं। इसके फल का अकार गोल या अंडाकार होता है जिसमे 5.4-8.0% चीनी होता है और लगभग 100 ग्राम में 85-95 मिलीग्राम विटामिन C होता है यह पेड़ लैक कीट के लिए एक घर भी है, जिससे लैक नामक पदार्थ बनता है। बेर की जड़ों का पाउडर और तने की छाल का पाउडर का इस्तेमाल अल्सर, बुखार, घाव और दस्त के इलाज में दवा के रूप में भी किया जाता है।

जलवायु और मृदा आवश्यकताएँ

भारत में बेर की खेती उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में की जाती है, जबकि ज़िजीफस जुज्यूब, चीनी बेर एक पर्णपाती पेड़ है, जो समशीतोष्ण क्षेत्रों में पाया जाता है। बेर एक आदर्श फलवृक्ष है जो शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों में उग सकता है, जहाँ बहुत अधिक सिंचाई संभव नहीं होती। यह 40 डिग्री सेल्सियस तक उच्च तापमान सहन कर सकता है, लेकिन ठंडे तापमान से यह प्रभावित होता है। इसकी गहरी ताड़ की जड़ प्रणाली के कारण, यह अत्यधिक जलवायु तनाव और व्यापक मृदा की स्थिति में भी उग सकता है, जो प्रमुख फलों और अन्य फसलों के लिए अनुपयुक्त होती है। क्षारीय मृदा में उच्च पीएच (9.5 तक) और सोडिक मृदा में, प्रति गड्डे में 5 किलोग्राम जिप्सम डालना चाहिए, जो ऊपर की मिट्टी के साथ मिलाकर एक सप्ताह पहले गड्डे में पानी डालकर रोपण से पहले तैयारी करनी चाहिए। इस प्रकार, बेर का पौधा स्थापित किया जा सकता है। कुछ हद तक बेर पानी के ठहराव को भी सहन करता है।

बेर की उन्नत किस्में

अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए उन्नत किस्मो का चुनाव करना बहुत आवश्यक हैं। बेर की उन्नत किस्में निम्नलिखित दी गयी हैं, जिनसे अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा रहा हैं।

कैतिली: यह एक ऐसी उन्नत किस्म है, जिसमें कम मात्रा में सीधे कांटे होते हैं तथा पत्तियाँ अंडाकार होती हैं, जिनके किनारे थोड़े कटे होते हैं। फल अंडाकार-दीर्घाकार होते हैं, जिनका आकार 3.37 सेंटीमीटर लंबा और 1.9 सेंटीमीटर मोटा होता है, जिनका वजन 6.22 ग्राम होता है। बीज दीर्घाकार और नुकीला होता है।

उम्रान: इस किस्म में पेड़ मध्यम आकार के होते हैं और झाड़ीदार, शाखाएँ फैलने वाली होती हैं, जो लगभग ज़मीन को

ISSN No. 2583-3316

छूती हैं। कांटे मुड़े हुए होते हैं। पत्तियाँ अंडाकार-दीर्घाकार होती हैं, जिनके किनारे स्पष्ट रूप से कटे होते हैं। इस किस्म के फल दीर्घाकार होते हैं जिनका आकार 4.2 सेंटीमीटर लंबा और 3.2 सेंटीमीटर मोटा होता है। फल का वजन 35- 45 ग्राम होता है।

गोलाः गोला किस्म बेर की एक उन्नत किस्म है, इसकी शाखाएँ फैलने वाली होती हैं। फल लगभग गोल होते हैं जिनका आकार चपटा होता है। छिलका चमकीला पीला और चिकना होता है, प्रत्येक फल का वजन 14-25 ग्राम होता है। प्रत्येक पेड़ लगभग 100-125 किलोग्राम फल देता है। फल जनवरी-फरवरी में पकते हैं।

सेबः यह एक जल्दी पकने वाली किस्म है। इस किस्म के फल सुनहरे पीले रंग के होते हैं और हल्के दीर्घाकार के होते हैं (3.0 सेंटीमीटर x 2.5 सेंटीमीटर), इसके पेड़ प्रति वर्ष 90-100 किलोग्राम फल देता है और कई किस्मों के लिए एक अच्छा परागदाता की तरह व्यवहार करती है।

बनारसीः यह एक मध्य-ऋतु की किस्म है। इसके पेड़ 8-12 मीटर ऊँचे होते हैं। फल गोल से दीर्घाकार होते हैं और छिलका पकने के बाद सुनहरे पीले रंग का हो जाता है। यह किस्म तमिलनाडु की स्थितियों में अच्छा प्रदर्शन करती है। प्रत्येक पेड़ प्रति वर्ष 100-110 किलोग्राम फल देता है।

छुहाराः यह एक मध्य-ऋतु की किस्म है जिसमें पेड़ कम ऊँचाई वाले होते हैं और शाखाएँ फैलती हैं। फल अंडाकार-दीर्घाकार होते हैं, फल का आकार 2.9 सेंटीमीटर x 2.1 सेंटीमीटर होता है और इनका वजन 16.8 ग्राम होता है। पूरी तरह से पकने पर फल हरे-पीले रंग के होते हैं।

संधुरा नारनौल (सणौर नं.1): इस किस्म का पेड़ सीधा खड़ा होता है। जिसके फल अंडाकार-दीर्घाकार से लंबे होते हैं और निचला हिस्सा थोड़ा नुकीला होता है। फल हरे-पीले से सुनहरे पीले होते हैं। आकार 4.45 x 2.18 सेंटीमीटर होता है और छिलका पतला होता है। औसत उत्पादन 80 किलोग्राम/पेड़/वर्ष होता है।

एलाईचीः इस किस्म के पेड़ फैलने वाले होते हैं और फलों का आकार इलायची जैसा होता है, इसलिए इसे 'एलाईची' कहा जाता है। फल छोटे होते हैं, प्रत्येक का वजन 6 ग्राम होता है और आकार 2.05 सेंटीमीटर x 1.88 सेंटीमीटर होता है। औसत उत्पादन 115 किलोग्राम/पेड़/वर्ष होता है।

बेर का प्रवर्धन

बेर में टी-बडिंग, जिसे शील्ड बडिंग भी कहा जाता है, प्रवर्धन की एक प्रमुख और सफल विधि है। इसका उपयोग अच्छी किस्मों के बेर के पौधों को जंगली या स्थानीय रूप से अनुकूलित रूटस्टॉक (मूलवृंत) पर लगाने के लिए किया जाता है ताकि फल की गुणवत्ता अच्छी हो और पौधा स्थानीय परिस्थितियों में अच्छी तरह विकसित हो सके।

टी-बडिंग का उद्देश्य

- बेहतर गुणवत्ता वाले फलों (बड़े आकार, मीठे स्वाद) की किस्मों का प्रसार करना।
- रोग प्रतिरोधी किस्मों को लगाना और वांछित गुणों वाले पौधे तैयार करना जो बीज से उगाने पर समान नहीं होते।

टी-बडिंग का सही समय

बेर में टी-बडिंग के लिए सबसे अच्छा समय वह होता है जब पौधे में रस का प्रवाह (sap flow) अच्छा हो और छाल आसानी से लकड़ी से अलग हो जाए ('bark is slipping')। उत्तर भारत की परिस्थितियों (जैसे वाराणसी) में, इसके लिए दो मुख्य समय होते हैं।

- **मानसून का मौसम (जुलाई से सितंबर):** यह सबसे उपयुक्त समय माना जाता है क्योंकि इस दौरान हवा में नमी अधिक होती है और पौधे सक्रिय रूप से बढ़ रहे होते हैं, जिससे बडिंग के सफल होने की संभावना बढ़ जाती है।
- **बसंत ऋतु (फरवरी-मार्च):** इस समय भी बडिंग की जा सकती है, खासकर उन क्षेत्रों में जहाँ तापमान बहुत अधिक नहीं बढ़ता हो।

टी-बडिंग करने की विधि

क) मूलवृंत (Rootstock) का चुनावः एक स्वस्थ, पेंसिल जितनी मोटाई का मूलवृंत चुनें। यह आमतौर पर बीज से उगाया जाता है और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल होता है।

ख) मूलवृंत पर चीरा लगानाः जमीन से लगभग 15-20 सेमी ऊपर, मूलवृंत पर एक तेज चाकू से लगभग 2-3 सेमी लंबा सीधा (vertical) चीरा लगायें। इस चीरे के ऊपरी सिरे पर एक आड़ा (horizontal) चीरा लगाये, जिससे अंग्रेज़ी के अक्षर 'T' का आकार बन जाये।

ग) छाल को उठानाः चाकू की नोक से धीरे-धीरे 'T' चीरे के दोनों तरफ की छाल को थोड़ा उठाये ताकि कली (bud) को अंदर डालने के लिए जगह बन सके। ध्यान रखें कि लकड़ी को नुकसान न पहुंचे।

ग) साइन (Scion) या कली का चुनावः वांछित अच्छी किस्म वाले बेर के पौधे की स्वस्थ, परिपक्व और फूली हुई

कली (bud) चुनें। यह कली उसी वर्ष की शाखा से ली जानी चाहिए।

घ) कली (शील्ड) तैयार करनाः चुनी हुई कली के नीचे लगभग 1-1.5 सेमी से चीरा लगाना शुरू करें और कली के ऊपर लगभग 1 सेमी तक ले जाकर कली को छाल के एक छोटे, ढाल (shield) जैसे टुकड़े के साथ निकाल लें। यदि छाल के साथ थोड़ी लकड़ी आ गई है, तो उसे सावधानी से हटा दें (हालाँकि कुछ तकनीकों में इसे रहने दिया जाता है)।

ड़) कली को मूलवृंत में लगानाः तैयार की गई कली (शील्ड) को मूलवृंत पर बने 'T' आकार के चीरे में ऊपर से नीचे की ओर सावधानी से सरका कर डालें। यह सुनिश्चित करें कि कली का कैंबियम (छाल के नीचे की हरी परत) मूलवृंत के कैंबियम के संपर्क में आये। शील्ड का ऊपरी किनारा 'T' के आड़े चीरे से मिलना चाहिए।

च) बाँधनाः कली वाले भाग को छोड़कर, जोड़ को पॉलीथीन की पट्टी (लगभग 1.5-2 सेमी चौड़ी) या बडिंग टेप से कसकर लपेट दें। लपेटते समय नीचे से ऊपर की ओर जायें। यह कली को अपनी जगह पर बनाए रखने, नमी बनाए रखने और संक्रमण को रोकने में मदद करता है। कली को खुला छोड़ना है ताकि वह अंकुरित हो सके।

छ) देखभालः बडिंग के बाद पौधे को पानी दें। लगभग 2-3 सप्ताह में कली हरी दिखनी चाहिए, जो सफलता का संकेत है।

ज) पट्टी खोलना और मूलवृंत काटनाः जब कली सफलतापूर्वक जुड़ जाए और उसमें फुटाव शुरू हो जाये (आमतौर पर 3-4 सप्ताह बाद), तो पॉलीथीन की पट्टी को सावधानी से खोल दें या काट दें। जब कली से निकली नई शाखा थोड़ी बढ़ जाए, तो मूलवृंत को कली के जोड़ से कुछ सेमी ऊपर से काट दें ताकि सारी ऊर्जा नई कली से विकसित हो रहे प्ररोह को मिले।

कीट व रोग नियंत्रण

क) कीट

• **फल मक्खीः** सभी संक्रमित फलों को नष्ट कर दें। प्यूपा को नष्ट करने के लिए पेड़ की छतरी के नीचे मिट्टी खोदें और 30 ग्राम / पेड़ की दर से 1.3% लिंडेन धूल डालें। मैलाथियान 50 EC या क्लोरपाइरीफोस 20 EC या क्विनलफोस 25 EC का 2 मिली/लीटर की दर से छिड़काव करें।

• **स्केल कीटः** छँटाई के दौरान, सभी प्रभावित सामग्रियों को इकट्ठा करके जला देना चाहिए। पेड़ों पर फॉस्फैमिडोन 40 SL या मिथाइल डेमेटन 25 EC का 2 मिली/लीटर की दर से छिड़काव किया जाना चाहिए।

ख) रोग

• **काली पत्ती का धब्बीः** लक्षण के आरंभिक प्रकटन से 15 दिनों के अंतराल पर कार्बेन्डाजिम 1 ग्राम/लीटर या क्लोरोथालोनिल 2 ग्राम/लीटर का छिड़काव करें।

• **पाउडरी फफूँदः** रोग को नियंत्रित करने के लिए डायनोकैप 1 मिली/लीटर का छिड़काव करें।

बेर की तुड़ाई और उत्पादन

बेर में, केवल वही फल सही पकने के चरण में तोड़े जाते हैं, जो सही तरीके से पकते हैं। जब किसी विशेष किस्म का फल पूरा आकार प्राप्त कर लेता है और उसका रंग पीला या सुनहरा पीला हो जाता है, उस समय बेर को तोडना चाहिए। 10-20 वर्ष पुराने पेड़ से औसतन 100-200 किलोग्राम फल प्रति वर्ष प्राप्त होते हैं। यदि फलों को भंडारण करना हो, तो इन्हें 30 डिग्री सेल्सियस तापमान और 85-90% आर्द्रता पर 30 से 40 दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

बेर के फल का महत्व

बेर एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है। बेर में सैपोनिन और फ्लेवोनोइड्स होते हैं, जो नींद को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं। बेर में तनाव-रोधी गुण होते हैं, जो चिंता और तनाव को कम करने में मदद कर सकते हैं। बेर रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करता है।

भोजन के रूप में बेर को ताजा खाया जा सकता है, बेर में संतरे से भी अधिक विटामिन सी होता है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करने और त्वचा को स्वस्थ रखने में मदद करता है। बेर में एंटीऑक्सीडेंट होते हैं, जो शरीर को मुक्त कणों से होने वाले नुकसान से बचाते हैं। बेर में फाइबर की मात्रा अच्छी होती है, जो पाचन क्रिया को बेहतर बनाने और कब्ज से राहत दिलाने में मदद करती है। बेर में पोटेशियम, कैल्शियम और आयरन जैसे खनिज होते हैं, जो हड्डियों को मजबूत बनाने और रक्तचाप को नियंत्रित करने में मदद करते हैं। या इसका उपयोग अचार, चटनी, मुरब्बा और सूखे फल बनाने में किया जा सकता है।

सावधानियाँ

बेर का अधिक सेवन करने से पेट में गैस या सूजन हो सकती है। कुछ लोगों को बेर से एलर्जी हो सकती है। यदि आपको कोई स्वास्थ्य समस्या है, तो बेर का सेवन करने से पहले

डॉक्टर से सलाह लें।

बेर का प्रसंस्करण

बेर एक स्वादिष्ट और पौष्टिक फल है, जिसका प्रसंस्करण विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है। यहाँ कुछ सामान्य विधियाँ दी गई हैंः

क) सुखाना

- यह सबसे आम तरीका है, जिसमें बेर को धूप में या डिहाइड्रेटर में सुखाया जाता है।
- सूखे बेर को 'छुहारा' कहा जाता है, जो एक लोकप्रिय सूखा मेवा है।
- सुखाने से बेर की शेल्फ लाइफ बढ़ जाती है और इसे लंबे समय तक संग्रहीत किया जा सकता है।

ख) जैम और जेली बनाना

- बेर से स्वादिष्ट जैम और जेली बनाई जा सकती है।
- इसके लिए, बेर को चीनी और नींबू के रस के साथ पकाया जाता है, जब तक कि मिश्रण गाढ़ा न हो जाए।
- जैम और जेली को जार में भरकर संग्रहीत किया जा सकता है।

ग) अचार बनाना

- बेर का अचार एक लोकप्रिय व्यंजन है, खासकर भारत में।
- इसके लिए, बेर को मसालों, तेल और सिरके के साथ मिलाया जाता है और कुछ दिनों के लिए धूप में रखा जाता है।
- बेर का अचार तीखा और चटपटा होता है।

घ) कैंडी बनाना

- बेर से स्वादिष्ट कैंडी बनाई जा सकती है।
- इसके लिए, बेर को चीनी की चाशनी में पकाया जाता है और फिर सुखाया जाता है।
- बेर की कैंडी बच्चों और वयस्कों दोनों को पसंद आती है।

ड़) जूस बनाना

- बेर का जूस एक ताज़ा और पौष्टिक पेय है।
- इसके लिए, बेर को पानी के साथ मिलाकर ब्लेंड किया जाता है और फिर छाना जाता है।
- बेर के जूस में विटामिन सी और अन्य पोषक तत्व भरपूर मात्रा में होते हैं।

च) चटनी बनाना

- बेर की चटनी एक तीखी और चटपटी साइड डिश है।
- इसके लिए, बेर को मसालों, प्याज, लहसुन और अदरक के साथ पकाया जाता है।
- बेर की चटनी को रोटी, चावल या अन्य व्यंजनों के साथ परोसा जा सकता है।

बेर के प्रसंस्करण के फायदे

- बेर की शेल्फ लाइफ बढ़ जाती है।
- बेर को विभिन्न रूपों में संग्रहीत किया जा सकता है।
- बेर के पोषक तत्वों को संरक्षित किया जा सकता है।
- बेर से विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाए जा सकते हैं।

बेर के प्रसंस्करण के लिए सावधानियाँ

- बेर को अच्छी तरह से धो लें और साफ कर लें।
- प्रसंस्करण के दौरान स्वच्छ उपकरणों का उपयोग करें।
- उत्पादों को ठीक से संग्रहीत करें ताकि वे खराब न हों।

निष्कर्ष

बेर की खेती भारत के शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्रों में किसानों के लिए एक लाभदायक विकल्प बन गई है। यह फल अपने पोषण मूल्य, स्वाद और औषधीय गुणों के कारण बाजार में निरंतर मांग में बना रहता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे कम लागत, न्यूनतम जल आपूर्ति और सीमित देखभाल के साथ भी अच्छी पैदावार के लिए उगाया जा सकता है, जिससे यह छोटे और मध्यम स्तर के किसानों के लिए एक उपयुक्त विकल्प बनता है। वर्तमान समय में, जब पारंपरिक फसलों की लागत लगातार बढ़ रही है और मुनाफा घट रहा है, बेर की खेती किसानों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने का एक प्रभावी साधन हो सकती है। इसके लिए जरूरी है कि वे पारंपरिक खेती से आगे बढ़कर आधुनिक तकनीकों, उन्नत किस्मों, जैविक पद्धतियों, प्रसंस्करण और बेहतर विपणन रणनीतियों को अपनाये। बेर का उपयोग केवल ताजे फल के रूप में ही नहीं, बल्कि अचार, मुरब्बा, कैंडी, पाउडर और सूखे मेवे जैसे उत्पादों के रूप में भी किया जा सकता है। ये उत्पाद न केवल घरेलू बल्कि अंतरराष्ट्रीय बाजारों में भी बड़ी संभावनाएं रखते हैं। यदि इन सभी अवसरों का सही तरीके से लाभ उठाया जाए, तो बेर की खेती से प्रति हेक्टेयर लाखों रुपये तक की आय अर्जित की जा सकती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

आँवला में लगने वाली प्रमुख बीमारियों का प्रबंधन

सुप्रिया गोपाल नैक*, वेदांत सिंह, सोनम एवं हंस राज वर्मा

फल विज्ञान विभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्राद्यौगिकी विस्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: hansrajsr996@gmail.com

परिचय

आँवला, जिसे अंग्रेजी में इंडियन बेरी, गुज बेरी या 'वंडर फ्रूट' कहा जाता है, इसका वानस्पतिक नाम *एम्बलिका ओफीसीनेलिस* है। यह भारतीय उपमहाद्वीप की एक महत्वपूर्ण फल फसल है, जो अपनी पोषण और स्वास्थ्यवर्धक गुणों के लिए प्रसिद्ध है। यह फल विटामिन C का बहुत अच्छा स्रोत है, जिसमे संतरे से भी ज्यादा विटामिन C होता है, साथ ही इसमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन और मैग्नीशियम जैसे महत्वपूर्ण खनिज भी होते हैं। आँवला का उपयोग पारंपरिक जैसे चिकित्सा में फेफड़ों की समस्याओं, अस्थमा, गैस्ट्रिक, मधुमेह, पीलिया, खांसी, सिरदर्द, त्वचा रोग और बालों के सफेद होने जैसे रोगों के इलाज में किया जाता है। शोधों ने आँवला के हृदय, फेफड़ों, पेट और किडनी पर सुरक्षात्मक प्रभावों को भी साबित किया है।

आँवला के पेड़ विभिन्न बीमारियों का शिकार हो सकते हैं और इन बीमारियों का सही प्रबंधन न करने पर उत्पादन और गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए, इन बीमारियों के प्रभावी प्रबंधन के लिए उचित तकनीकों को अपनाना जरूरी है। सही उपचार न होने पर, यह उत्पादन और गुणवत्ता को प्रभावित कर सकता है।

आँवला की प्रमुख बीमारियाँ और उनके प्रबंधन

क) पाउडरी फफूँद

पाउडरी फफूँद एक कवकनाशी रोग है, जो पत्तियों, टहनियों और फलों पर सफेद पाउडर की परत के रूप में दिखाई देता है। यह पौधे की वृद्धि को रोकता है और फलों की गुणवत्ता को भी प्रभावित करता है।

प्रबंधन

- प्रभावित शाखाओं की छँटाई करें और हवा परिसंचरण में सुधार करें।
- सल्फर आधारित कवकनाशकों का छिड़काव करें जैसे नीम के तेल और काओलिन।
- नमी के स्तर को कम करने के लिए ऊपर से पानी देने से

बचें।

ख) एन्थ्रेक्नोज

एन्थ्रेक्नोज के कारण पत्तियों, फलों और तनों पर काले धंसे हुए धब्बे बनते हैं, जो पौधे की वृद्धि को बाधित करते हैं।

प्रबंधन

- संक्रमित भागों की छँटाई करके हटा दें।
- सुप्त अवस्था में आवश्यकता पड़ने पर कॉपर आधारित फफूँदनाशकों का प्रयोग करें।
- पेड़ों के बीच उचित दूरी रखें।

ग) लीफ स्पॉट

यह फंगस से होने वाला रोग है जो आँवला की पत्तियों पर छोटे काले धब्बे उभरते हैं, जो समय के साथ बड़े हो कर पत्तियों को नुकसान पहुँचाते हैं।

प्रबंधन

- रोगो से प्रभावित पौधों को हटाने और नष्ट करने के लिए कार्बेंडाजिम या कार्बेंडाजिम + मैनकोजेब की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें।

घ) बैक्टीरियल ब्लाइट

इस रोग में पत्तियों पर पानी से लथपथ काले धब्बे बनते हैं और पत्तियाँ पिली या भूरी पड़ जाती है जिससे पत्तियाँ गिरने लगती हैं।

प्रबंधन

- संक्रमित भागों की कटाई-छँटाई करें और उन्हें नष्ट करें।
- कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का छिड़काव करें, जिससे बैक्टीरिया को नियंत्रित किया जा सकता है।

ड) फलों का गिरना

आँवला के पौधों में बोरान जिंक और कॉपर जैसे सूक्ष्म तत्वों की कमी के कारण फलों का विकास रुक जाता है और वे जल्दी गिरने लगते हैं।

प्रबंधन

- पौधों पर नियमित रूप से कार्बेंडाजिम या मैनकोजेब की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

एकीकृत रोग प्रबंधन

प्रभावी रोग प्रबंधन के लिए विभिन्न रणनीतियों को मिलाकर एक समग्र दृष्टिकोण अपनाये।

- **अच्छी कृषि पद्धतियाँः** रोपण, दूरी और स्वच्छता जैसी अच्छी कृषि पद्धतियाँ अपनाये।
- **जैविक नियंत्रणः** लाभकारी जीवाणुओं और कीटों का उपयोग करें।
- **रासायनिक नियंत्रण**ः कवकनाशक का उपयोग अंतिम विकल्प के रूप में करें।
- **निगरानीः** रोग के लक्षणों के लिए नियमित निरीक्षण करें।
- **शिक्षाः** नवीनतम शोध और विकास के बारे में जानकारी प्राप्त करते रहें।

निष्कर्ष

आप इस प्रकार से आँवला के पेड़ों में होने वाली विभिन्न बीमारियों का प्रबंधन के लिए उपयुक्त उपायों को अपनाकर, आँवला की फसल को सुरक्षित रख सकते है और एक अच्छा उत्पादन एवं खेती में उच्च गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

नींबू में लगने वाला कैंकर रोगः एक खतरनाक बीमारी एवं उसका उपचार

सुनील कुमार[1]*, प्रद्युम्न कुमार सिंह[2] एवं रोहिताश कुमार[3]

[1]पादप संरक्षण विभाग, [2एवं3]पादप रोग विज्ञान विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ताः sksunilphd@gmail.com

परिचय

भारत में नींबू वर्गीय फलों की खेती एक प्रमुख कृषि गतिविधि है। ये फल स्वाद में अच्छे होने के साथ-साथ पोषण से भरपूर होते हैं। खासकर इनमें पाया जाने वाला विटामिन 'सी' शरीर की रोगों से लड़ने की ताकत को बढ़ाने में मदद करता है। इसी कारण इन फलों की मांग पूरे साल बनी रहती है। घरेलू उपयोग, औषधीय गुणों और व्यापारिक दृष्टिकोण से भी ये बहुत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इन फलों की खेती किसानों के लिए आय का एक अच्छा स्त्रोत बन चुका है। नींबू का उपयोग लगभग हर घर में होता है। खाने का स्वाद बढ़ाने से लेकर औषधीय प्रयोगों तक इसका महत्व है। नींबू वर्गीय फलों की खेती मुख्य रूप से महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, असम, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और गुजरात जैसे राज्यों में होती है। कई क्षेत्रों में विशेष किस्मों की खेती (जैसे पश्चिम बंगाल का गंधराज) कर उन्हें दूसरे राज्यों और देशों में भेजा भी जाता है, जिससे किसानों को अच्छा लाभ मिलता है और स्थानीय अर्थव्यवस्था को भी सहारा मिलता है। हालाँकि, इस खेती में कई चुनौतियाँ अति भी हैं। जैसे मौसम में बदलाव, कीटों और रोगों का खतरा हमेशा बना रहता है। जब कोई गंभीर बीमारी फसल को अपनी चपेट में लेती है, तो उत्पादन घटता है और किसानों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ता है। नींबू वर्गीय फसलों में कई तरह की बीमारियाँ लगती हैं, लेकिन उनमें से सबसे घातक रोग है 'कैंकर'। यह रोग विशेष रूप से संतरा, नींबू और मौसंबी की फसलों पर बुरा असर डालता है। इससे पत्तियों और फलों पर भूरे रंग के उभरे हुए दाग पड़ जाते हैं, जिससे पत्तियाँ झड़ने लगती हैं और फल समय से पहले गिरने लगते हैं। इससे न केवल फसल की मात्रा घटती है बल्कि फल की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। इसलिए नींबू वर्गीय फलों की खेती करते समय फसल की देखभाल, रोगों से बचाव, समय पर उपचार, संतुलित खाद और पानी का सही प्रबंधन करना जरूरी होता है। साथ ही, किसानों को खेती से जुड़ी जानकारी समय-समय पर मिलती रहे, इसके लिए प्रशिक्षण और मार्गदर्शन की व्यवस्था भी जरूरी है। इससे न केवल उत्पादन में सुधार होगा, बल्कि किसान भी अधिक मुनाफा कमा सकेंगे और खेती को एक सुरक्षित व्यवसाय के रूप में अपना सकेंगे।

नींबूवर्गीय फलों का कैंकर रोग

नींबूवर्गीय फलों का कैंकर रोग एक खतरनाक रोग है। जो नींबू वर्गीय फलों जैसे संतरा, नींबू, मौसंबी आदि की फसलों को प्रभावित करता है। यह रोग एक प्रकार के जीवाणु के द्वारा होता है, जिसे *जैंथोमोनास काम्पेस्ट्रिस* कहा जाता है। यह रोग मुख्य रूप से पौधे की पत्तियों, टहनियों, तनों और फलों पर असर डालता है। यह रोग लगने पर इन हिस्सों पर छोटे-छोटे उभरे हुए भूरे रंग के दाग दिखाई देने लगते हैं, जो समय के साथ बढ़ते जाते हैं। यह रोग बहुत तेजी से फैलता है, खासकर जब वातावरण में गर्मी और नमी अधिक होती है, जैसे कि वर्षा

ऋतु में। एक बार यदि बाग में यह रोग फैल जाये, तो अन्य स्वस्थ पौधों में भी बड़ी आसानी से फैल सकता है। हवा, बारिश के छींटे, कीड़े-मकोड़े और संक्रमित औजारों के जरिये यह रोग एक पौधे से दूसरे पौधे तक पहुँच जाता है। यदि समय पर इसकी रोकथाम न की जाए, तो यह पूरी फसल को बर्बाद कर सकता है। इसलिए इसकी पहचान और नियंत्रण बहुत जरूरी होता है।

कैंकर रोग के लक्षण

कैंकर रोग नींबूवर्गीय पौधों के पत्तों, फलों, टहनियों और तनों को प्रभावित करता है। यह रोग धीरे-धीरे पूरे पौधे को कमजोर बना देता है। इसके लक्षण प्रत्येक भाग में अलग-अलग रूप में प्रकट होते हैं। यदि इसकी समय रहते पहचान न की जाए, तो यह रोग पूरे बाग को प्रभावित कर सकता है। नीचे इस रोग के मुख्य लक्षणों का विस्तार से वर्णन किया गया है।

अ) पत्तियों पर लक्षणः कैंकर का सबसे पहला प्रभाव पौधे की पत्तियों पर दिखाई देता है। प्रारंभ में पत्तियों की सतह पर छोटे-छोटे पीले रंग के धब्बे बनते हैं, जो पानी के छींटे जैसे प्रतीत होते हैं। कुछ समय बाद ये धब्बे धीरे-धीरे भूरे रंग के हो जाते हैं और उनके चारों ओर हल्के उभरे हुए किनारे दिखाई देने लगते हैं। ये किनारे खुरदरे होते हैं और उंगलियों से छूने पर साफ महसूस होते हैं। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, पत्तियाँ पीली पड़ने लगती हैं और समय से पहले सूखकर गिर जाती हैं। इससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण की क्षमता कम हो जाती है और वह कमजोर हो जाता है।

ब) फलों पर लक्षणः रोग का असर फलों पर भी स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। फलों की ऊपरी परत पर गोलाकार घाव बनने लगते हैं, जिनके किनारे मोटे और उभरे हुए होते हैं। ये घाव धीरे-धीरे गहरे होकर दरारों में बदल जाते हैं, जिससे फल की त्वचा फटने लगती है। फल अपना प्राकृतिक आकार खो बैठता है और विकृत दिखाई देने लगता है। ऐसे फल देखने में खराब लगते हैं और उनका स्वाद भी प्रभावित हो सकता है

स) टहनियों और तनों पर लक्षणः पौधे की टहनियाँ और तने भी इस रोग से अछूते नहीं रहते। विशेष रूप से छोटे और कोमल पौधों की शाखाओं पर फफोले जैसे घाव दिखाई देते हैं। इन घावों से कभी-कभी हल्का चिपचिपा तरल भी रिसने लगता है, जो पौधे के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। यदि संक्रमण लंबे समय तक बना रहे, तो ये घाव धीरे-धीरे सूखकर लकड़ी जैसे कठोर भाग में बदल जाते हैं। इससे पौधे की वृद्धि रुक जाती है और वह सूखने लगता है।

रोग फैलने की प्रक्रिया

कैंकर रोग का जीवन चक्र बहुत जटिल और खतरनाक होता है। यह रोग एक बार नींबूवर्गीय पौधे में लग जाये, तो उचित देखभाल के बिना बहुत तेजी से पूरे बाग में फैल सकता है। इस रोग को फैलाने में अनेक कारक भूमिका निभाते हैं, जिनमें संक्रमित पौधों के अवशेष, मौसम, कीट और नर्सरी से लाए गए कच्चे पौधे प्रमुख हैं। इस रोग को फैलाने वाले जीवाणु संक्रमित पौधों की सूखी पत्तियों, गिरी हुई शाखाओं और छाल के टुकड़ों में लंबे समय तक जीवित रह सकते हैं। जैसे ही अनुकूल मौसम आता है विशेषकर जब वातावरण में नमी अधिक होती है और तापमान ऊँचा होता है तो ये जीवाणु फिर से सक्रिय हो जाते हैं और नये पौधों को संक्रमित करने लगते हैं। बारिश और तेज हवाएँ इस रोग के प्रसार में बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। जब बारिश के दौरान संक्रमित पत्तियों और टहनियों से पानी के छींटे उड़ते हैं, तो उन छींटों के साथ जीवाणु भी पास के स्वस्थ पौधों तक पहुँच जाते हैं। इसी तरह तेज हवा के झोंकों से संक्रमित सूक्ष्म कण उड़कर अन्य पौधों पर गिरते हैं और उन्हें भी रोगग्रस्त बना देते हैं।

इसके अलावा, लीफ माइनर नामक कीट भी इस रोग को फैलाने में मदद करते हैं। ये कीट पौधों की पत्तियों पर छोटे-छोटे घाव बना देते हैं, जिससे जीवाणु आसानी से उन घावों के माध्यम से पौधे के अंदर प्रवेश कर जाते हैं। जहाँ-जहाँ ये कीट चलते हैं, वहाँ-वहाँ रोग के फैलने की संभावना बढ़ जाती है। रोग के फैलाव का एक और बड़ा कारण है संक्रमित नर्सरी से लाये गये कच्चे पौधे। यदि नर्सरी में तैयार किये गये पौधे पहले से ही इस रोग से प्रभावित हैं और बिना जांचे-परखे उन्हें खेतों में लगा दिया जाये, तो पूरा बाग खतरे में पड़ सकता है। इसलिए नर्सरी से पौधे खरीदते समय पूरी सावधानी बरतनी चाहिए और केवल प्रमाणित तथा रोगमुक्त पौधों का ही चयन करना चाहिए।

रोग के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ

कैंकर रोग कुछ विशेष वातावरणीय परिस्थितियों में बहुत तेजी से फैलता है। जब मौसम और खेत की दशाये इस रोग के अनुकूल होती हैं, तो यह बहुत कम समय में एक पौधे से दूसरे पौधों तक पहुँचकर पूरे बाग को संक्रमित कर सकता है। इसलिए यह जानना आवश्यक है कि किन परिस्थितियों में यह रोग सबसे अधिक फैलता है, ताकि समय रहते सावधानी बरती जा सके।

- **तापमानः** इस रोग के फैलने के लिए मध्यम से ऊँचे तापमान की आवश्यकता होती है। विशेषकर जब वातावरण

का तापमान 25 डिग्री सेल्सियस से 30 डिग्री सेल्सियस के बीच होता है, तब यह जीवाणु बहुत सक्रिय हो जाते हैं और तेजी से वृद्धि करते हैं। यह तापमान गर्मी के अंत और वर्षा ऋतु की शुरुआत में आम तौर पर पाया जाता है।

- **नमी (आर्द्रता):** हवा में नमी की मात्रा इस रोग के फैलाव में बहुत बड़ा योगदान देती है। जब वातावरण में आर्द्रता 80% या उससे अधिक हो जाती है, तब यह रोग आसानी से एक पौधे से दूसरे पौधे तक फैलने लगता है। नमी के कारण पत्तियाँ और टहनियाँ अधिक समय तक गीली रहती हैं, जिससे जीवाणुओं को पनपने के लिए अनुकूल स्थिति मिल जाती है।
- **मौसमः** मानसून का मौसम और उसके तुरंत बाद का समय इस रोग के लिए सबसे अनुकूल माना जाता है। बारिश के कारण खेतों में पानी के छींटे उड़ते हैं और हवा में नमी बढ़ जाती है, जो जीवाणुओं के फैलाव के लिए उपयुक्त माहौल बनाता है। इसी समय कीटों की संख्या भी अधिक होती है, जो रोग को फैलाने में सहायक बनते हैं।
- **घनी बुवाई और हवा का कम प्रवाहः** अगर पौधों को बहुत पास-पास बोया गया हो, या खेत में हवा का पर्याप्त आवागमन न हो, तो वहां यह रोग अधिक तीव्रता से फैलता है। क्योंकि हवा की कमी के कारण पत्तियाँ देर तक गीली रहती हैं और संक्रमित पौधों से रोग के कण पास के पौधों तक आसानी से पहुँच जाते हैं।

रोग प्रबंधन के उपाय

कैंकर रोग के प्रकोप से फसल को बचाने और उत्पादन में होने वाले नुकसान को कम करने के लिए कई तरह के उपाय अपनाए जाते हैं। इस रोग को पूरी तरह समाप्त करना कठिन होता है, लेकिन यदि समय पर प्रभावी प्रबंधन किया जाये, तो इसके फैलाव को रोका जा सकता है। नीचे इसके नियंत्रण के लिए सांस्कृतिक, रासायनिक, जैविक तथा कीट प्रबंधन के उपायों का नीचे विस्तार से उल्लेख किया गया है।

(क) सांस्कृतिक प्रबंधन

- **संक्रमित भागों की छँटाई और नष्ट करनाः** जो शाखाएँ, पत्तियाँ या टहनियाँ इस रोग से संक्रमित हो चुकी हों, उन्हें समय-समय पर काटकर जला देना चाहिए या खेत से दूर फेंक देना चाहिए। इससे रोग का फैलाव रुकता है और स्वस्थ पौधों की रक्षा होती है।
- **छँटाई के औजारों की सफाईः** पौधों की कटाई-छँटाई के लिए उपयोग किए जाने वाले औजारों को प्रत्येक प्रयोग के बाद किसी कीटाणुनाशक घोल (जैसे ब्लीच या फॉर्मेलिन) से अच्छी तरह धोना चाहिए, ताकि किसी पौधे से दूसरे पौधे में रोग न फैले।
- **खेत में जल निकासी की व्यवस्थाः** खेतों में पानी के ठहराव से नमी बढ़ती है, जो इस रोग को फैलाने में सहायक होती है। अतः खेत में जल निकासी की उचित व्यवस्था होनी चाहिए जिससे पानी जमा न हो।
- **स्वस्थ और प्रमाणित पौधों का चयनः** पौधारोपण के लिए हमेशा प्रमाणित, रोग-मुक्त और अच्छे स्रोत से लाई गई पौधों का ही उपयोग करें।

(ख) रासायनिक प्रबंधन

- **कॉपर आधारित रसायनों का छिड़कावः** रोग की रोकथाम के लिए 'कॉपर ऑक्सीक्लोराइड' (0.3% घोल) का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर 2 से 3 बार किया जा सकता है। यह दवा जीवाणुओं की वृद्धि को रोकती है और नए संक्रमण को फैलने से रोकती है।
- **स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोगः** स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट का 200 पी.पी.एम. काघोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करना लाभकारी होता है। यह जीवाणु पर प्रभावी रूप से कार्य करता है।
- **बोर्डो मिश्रण का उपयोगः** पारंपरिक 'बोर्डो मिश्रण' (ताँबा सल्फेट, चूना और पानीः: अनुपात 1:1:100) का छिड़काव भी साइट्रस कैंकर के नियंत्रण में प्रभावशाली माना जाता है।

(ग) जैविक नियंत्रण

- **पौधों के लिए लाभकारी सूक्ष्म जीवों का उपयोगः** *प्यूडोमोनास फ्लोरेसेन्स* और *बैसिलस सबटिलिस* जैसे उपयोगी सूक्ष्म जीवों का खेतों में प्रयोग किया जा सकता है। ये सूक्ष्म जीव भूमि में मौजूद हानिकारक रोगाणुओं की संख्या को कम करते हैं और पौधों की रोगों से लड़ने की क्षमता को बढ़ाते हैं।
- **जैविक दवाओं का छिड़कावः** जैविक दवाओं का छिड़काव करने से पौधों की सतह पर एक प्रकार की सुरक्षात्मक परत बन जाती है, जो रोग फैलाने वाले जीवाणुओं को अंकुरित होने और फैलने से रोकती है। इससे पौधे स्वस्थ रहते हैं और रोग से बचाव होता है।

(घ) कीट नियंत्रण

- **साइट्रस लीफ माइनर का नियंत्रणः** यह कीट पत्तियों पर सूक्ष्म घाव करता है, जिनसे होकर कैंकर का जीवाणु पौधे में प्रवेश करता है। इसके नियंत्रण के लिए

नीम के तेल जैसे जैविक कीटनाशकों का छिड़काव करना लाभकारी है।

• **रासायनिक कीटनाशकों का सीमित प्रयोगः** जब संक्रमण अधिक हो, तो इमिडाक्लोप्रिड (3 मिली प्रति 10 लीटर पानी) जैसे कीटनाशकों का नियंत्रित मात्रा में उपयोग किया जा सकता है, लेकिन यह तभी करें जब बहुत आवश्यक हो, ताकि पर्यावरण पर असर न पड़े।

रोग से बचाव के लिए सुझाव

- **पौधरोपण से पहले उपचारः** नये पौधों को लगाने से पहले उनके जड़ों को 1% बोर्डो मिश्रण में कुछ समय के लिए डुबोकर उपचार करना चाहिए ताकि यदि उनमें कोई रोगाणु हो तो वह समाप्त हो जाये।
- **बुवाई में दूरी बनाए रखनाः** पेड़ों के बीच पर्याप्त दूरी रखनी चाहिए, जिससे हवा का अच्छा प्रवाह हो सके और नमी अधिक समय तक न टिके।
- **सदृढ़ स्त्रोत से पौधों की खरीदारीः** रोपण के लिए पौधे हमेशा विश्वसनीय और रोगमुक्त क्षेत्रों से ही मँगवाने चाहिए।
- **रोग के लक्षण दिखते ही उपाय अपनानाः** जैसे ही पौधों में कैंकर के प्रारंभिक लक्षण दिखाई दें, तुरंत आवश्यक उपचार करना चाहिए ताकि रोग फैलने से पहले ही उसे रोका जा सके।

निष्कर्ष

कैंकर नींबू वर्गीय फसलों के लिए एक बड़ा खतरा है, जो उत्पादन में भारी गिरावट और आर्थिक नुकसान का कारण बनता है। यह रोग अत्यधिक संक्रामक होता है और यदि समय रहते रोका न जाये, तो एक पौधे से पूरे बाग में फैल सकता है। इस रोग के नियंत्रण के लिए केवल एक ही उपाय पर्याप्त नहीं होता, बल्कि सांस्कृतिक, रासायनिक, जैविक और यांत्रिक सभी उपायों का एक साथ पालन करना आवश्यक होता है। यदि किसान समय रहते रोग के लक्षणों की पहचान कर उचित प्रबंधन तकनीकों को अपनाएँ, तो इस गंभीर रोग के प्रभाव को काफी हद तक कम किया जा सकता है और अच्छी गुणवत्ता वाली, अधिक मात्रा में फसल प्राप्त की जा सकती है। सतर्कता, जागरूकता और वैज्ञानिक पद्धति से खेती करना ही इसका सबसे कारगर समाधान है।

❖❖

Pen to a Book

A Small journey from a pen to a book, keeping the thoughts with their struggle.

STEP TO A STEP FOR PUBLICATION

1. SUBMIT YOUR BOOK ON OUR PORTAL OR SEND US ON E-MAIL
2. GET THE ISBN NUMBER
3. PUBLISH YOUR BOOK IN A E-BOOK PORTAL ALONG WITH FEW HARD COPIES
4. GET THE ROYALTY

agro India

Agro India Publications
Add. 5, Vivekananda Marg
Opp. Hotel R INN
Prayagraj – 211003

: 7505907954/9565006333
agroindiapublications@gmail.com

ISSN No. 2583-3316

पारंपरिक और आधुनिक बागवानी पद्धतियाँः एक तुलनात्मक अध्ययन

नीलम उपाध्याय

उद्यानिकी विभाग, हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल विश्वविद्यालय (केंद्रीय विश्वविद्यालय), श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड

पत्राचारकर्ता: upadhyayneelam917@gmail.com

परिचय

बागवानी एक ऐसी प्राचीन कला है, जिसे सहेजने और सँवारने के लिए विभिन्न पद्धतियाँ अपनाई जाती रही हैं। समय के साथ-साथ बागवानी की तकनीकें बदलती गयी और अब हमें पारंपरिक और आधुनिक बागवानी पद्धतियों का एक मिश्रण देखने को मिलता है। पारंपरिक बागवानी जो स्थानीय ज्ञान और प्राकृतिक संशाधनो पर निर्भर करती है, जैव विविधता को बढ़ावा देती है और पर्यावरण पर कम प्रभाव डालती है जबकि आधुनिक बागवानी जो तकनीकी प्रगति पर जोर देती है, जो अधिक उत्पादन और वैश्विक बाजार की माँग को पूरा करती है इसलिए, इस लेख में हम पारंपरिक और आधुनिक बागवानी पद्धतियों का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे और समझेंगे कि इन दोनों में क्या अंतर हैं और किस पद्धति को अपनाना अधिक लाभकारी हो सकता है।

अ) पारंपरिक बागवानी पद्धतियाँ

पारंपरिक बागवानी पद्धतियाँ प्राचीन काल से चली आ रही हैं और इनका मुख्य उद्देश्य प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करते हुये पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देना है। इन पद्धतियों में भूमि की तैयारी, पानी की व्यवस्था और पौधों की देखभाल प्राकृतिक तरीकों से की जाती है।

मुख्य विशेषताएँ

क) कृषि पद्धतियाँः पारंपरिक बागवानी में सामान्यतः प्राकृतिक खाद, पानी और औजारों का उपयोग किया जाता है। इसके तहत फसल की बुवाई और देखभाल में स्थानीय ज्ञान का प्रयोग होता है।

ख) संसाधन का कम उपयोगः पारंपरिक पद्धतियों में कम से कम संसाधनों का उपयोग किया जाता है, जैसे कि जैविक खाद, वर्षा के पानी का संग्रहण, आदि।

ग) स्थानीय उपजः यह पद्धति स्थानीय जलवायु और मृदा के अनुकूल होती है, जिससे पर्यावरणीय प्रभाव कम होते हैं।

लाभः पर्यावरण के प्रति अनुकूल।

- यह कम लागत वाली खेती है।
- जैविक उत्पादों की पैदावार।
- जैविक पद्धतियों के कारण पर्यावरण पर कम प्रभाव।
- कम संसाधनों का उपयोग।
- यह रासायनिक उर्वर्को और कीटनाशकों के संपर्क में ना आने के कारण अधिक पौष्टिक माना जाना।

चुनौतियाँः- कम उत्पादन की दर।

- मौसम की अनिश्चितता पर निर्भरता।
- तकनीकी सुधार की कमी।
- उच्च गुणवत्ता वाले उपज की कमी

ब) आधुनिक बागवानी पद्धतियाँ

आधुनिक बागवानी पद्धतियाँ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उपयोग से विकसित हुई हैं। इन पद्धतियों में सिंचाई, उर्वरक और पेस्ट कंट्रोल के लिए उन्नत तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता है। इस पद्धति में कृषि विज्ञान, जैव प्रौद्योगिकी और कृत्रिम खादों का उपयोग अधिक होता है।

मुख्य विशेषताएँ

क) उन्नत तकनीकी उपकरणः ड्रिप इरिगेशन, हाइड्रोपोनिक्स और ग्रीनहाउस जैसी उन्नत तकनीकें आधुनिक बागवानी का हिस्सा हैं।

ख) उर्वरक और रासायनिक नियंत्रणः अधिक उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है।

ग) वैज्ञानिक दृष्टिकोणः आधुनिक बागवानी में वैज्ञानिक अनुसंधान और डेटा का उपयोग करके पौधों की देखभाल और फसल उत्पादन को बढ़ाया जाता है।

लाभः उच्च उत्पादन दर।

- नियंत्रित पर्यावरण में पौधों की बेहतर वृद्धि।
- नई तकनीकों के माध्यम से जल और संसाधनों का अधिकतम उपयोग।
- उच्च उपज वाली फसलों के उपयोग से उत्पादकता में वृद्धि।
- आधुनिक उपकरण किसानों की मेहनत को कम कर सकते हैं।
- मशीनें बीज बोने के लिए उपयोगी हैं।

चुनौतियाँः पर्यावरणीय प्रभाव (जैसे रासायनिक प्रदूषण, मृदा प्रदूषण)।

- उच्च लागत वाली तकनीकें और उपकरण।
- किसानों को नई तकनीकों के लिए प्रशिक्षण की आवश्यकता।
- कीटो और रोगो का अधिक प्रभाव।

पारंपरिक खेती और आधुनिक खेती का तुलनात्मक अध्ययन

पहचान	पारंपरिक बागवानी	आधुनिक बागवानी
उपकरण	साधारण औजार और प्राकृतिक संसाधन	उन्नत तकनीकी उपकरण (जैसे ड्रिप इरिगेशन, हाइड्रोपोनिक्स)
खाद और उर्वरक	जैविक खाद और स्थानीय उपाय	रासायनिक उर्वरक और कृत्रिम तत्व
संसाधन उपयोग	सीमित संसाधनों का उपयोग	अधिक संसाधन और जल का नियंत्रित उपयोग
उत्पादन दर	कम उत्पादन	उच्च उत्पादन
पर्यावरणीय प्रभाव	पर्यावरण के प्रति अनुकूल	पर्यावरणीय प्रभाव अधिक (रासायनिक प्रदूषण)
लागत	कम लागत	उच्च लागत

निष्कर्ष

पारंपरिक और आधुनिक बागवानी पद्धतियाँ दोनों ही अपने-अपने स्थान पर महत्वपूर्ण हैं। पारंपरिक पद्धतियाँ पर्यावरण के अनुकूल और लागत में कम होती हैं, जबकि आधुनिक पद्धतियाँ अधिक उत्पादन और नियंत्रित पर्यावरण प्रदान करती हैं। हालाँकि, यह कहना सही होगा कि यदि पारंपरिक और आधुनिक पद्धतियों का समुचित मिश्रण किया जाये, तो हम अधिक लाभकारी परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। किसानों को आधुनिक बागवानी की तकनीकों को अपनाते हुये पारंपरिक पद्धतियों से भी जुड़ा रहना चाहिए, ताकि दोनों के लाभ का पूर्ण उपयोग किया जा सके।

संदर्भ

- Barstow, Stephen (2014). Around the World in 80 Plants. Permanent Publications.
- Food and Agriculture Organization of the United Nations (FAO). The Future of Food and Agriculture - Trends and Challenges. FAO, 2017.
- Indian Council of Agricultural Research (ICAR). Annual Reports and Research Bulletins on Horticulture, Government of India, 2021-2024.
- Ministry of Agriculture and Farmers Welfare, Government of India. Horticulture Mission Reports and Schemes, 2020-2023.
- Pandey, A., & Mishra, S. (2018). पारंपरिक कृषि पद्धतियाँ और उनका वैज्ञानिक आधार, कृषि विज्ञान केंद्र प्रकाशन।
- Sharma, R. K., & Mehta, P. (2019). Traditional vs. Modern Horticultural Practices: A Comparative Study. Journal of Agricultural Sciences, 11(2), 56-63.
- Singh, D., & Verma, A. (2020). 'Modern Techniques in Indian Horticulture: Scope and Sustainability.' Indian Journal of Sustainable Agriculture, 8(1), 22-29.

❖❖

ISSN No. 2583-3316

लो-टनलः कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती के लिए एक प्रभावी तकनीक

विनय कुमार[1]*, अर्जुन सिंह[2], राजेंद्र भट्ट[3] एवं अर्चना कुशवाहा[4]

[1]सब्जी विज्ञान विभाग, [4]पादप रोग विभाग, गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर, उत्तराखण्ड

[2]सब्जी विज्ञान विभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

[3]सब्जी विज्ञान विभाग, वी.सी.एस.जी., यू.यू.एच.एफ., भरसार, पौडी गढ़वाल, उत्तराखंड

पत्राचारकर्ता: gangwarv586@gmail.com

परिचय

लो-टनल या रो कवर्स एक अत्यंत प्रभावशाली और किफायती संरक्षित खेती तकनीक है, जिसका उद्देश्य कम लागत में अच्छे उत्पादन प्राप्त करना है। यह तकनीक खासतौर पर किसानों के लिए लाभकारी साबित हो सकती है, क्योंकि यह सर्दी के मौसम में बेमौसमी फसलें उगाने का अवसर प्रदान करती है, जिससे अतिरिक्त आय अर्जित की जा सकती है। इस तकनीक में खेतों में धोरेनुमा क्यारियाँ तैयार की जाती हैं, जिन पर एक विशेष प्रकार से सुरंग का आकार देकर प्लास्टिक की फिल्म लगाई जाती है। इसके लिए 200 माइक्रॉन मोटी प्लास्टिक फिल्म का उपयोग करना सही रहता है। इस तकनीक में लोहे के सरियों या बाँस की डंडियों की मदद से एक सुरंग का निर्माण किया जाता है, जिसकी ऊँचाई 1-1.5 फीट तक होती है और लंबाई खेत के आकार के अनुसार निर्धारित की जाती है। सुरंग के दोनों सिरों को बंद कर दिया जाता है, जिससे फसल की अनुचित बढ़वार के लिए उपयुक्त तापमान बना रहेता है तथा समय समय पर सुरंग के दोनों सिरों को उठा कर फसल की निराई गुड़ाई जैसे कार्य किये जाते है। इस सुरंग में ड्रिप सिंचाई सिस्टम लगाया जाता है, जिसे ट्यूबवेल से जोड़ा जाता है। इस तकनीक से करेला, लौकी, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, खीरा, धारीदार तोरई, कद्दू, टिंडा और कद्दू जैसी फसलें पहले ही सर्दी के मौसम में बोई जाती हैं। लो-टनल बुवाई इन फसलों को सर्दी से बचाने का कार्य करती है, साथ ही इसके भीतर का वातावरण भी फसलों के लिए अनुकूल बना रहता है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली के माध्यम से पौधों को आवश्यकतानुसार पानी मिलता है और प्लास्टिक की चादर पानी के वाष्प को बाहर जाने से रोकती है, जिससे सुरंग में नमी बनी रहती है। सर्दी के मौसम में लो-टनल में बोई गई फसलें समय से पहले तैयार हो जाती हैं, जिससे किसानों को बेमौसमी सब्जियों से दोगुना लाभ प्राप्त होता है।

लो-टनल की उत्पादन तकनीक

यह तकनीक राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती के लिए उपयोगी है, जहाँ सर्दी के मौसम में रात का तापमान बहुत अधिक गिर जाता है। लो-टनल तकनीक से फसल निम्न तापमान व पाले से सुरक्षित रहती है। इसमें जनवरी में बीजों की बुवाई डिपयुक्त नाली (ट्रेंच) में करते हैं। तत्पश्चात् इसको प्लास्टिक की चादर से ढक देते हैं, जिससे कद्दूवर्गीय सब्जियों को उनके सामान्य समय से पहले उगाना संभव होता है। इससे सामान्य दशाओं की फसल की तुलना में यह फसल 30-40 दिनों पहले तैयार हो जाती है। दिसंबर के अंत में खेत में फसल के अनुसार 2-2.5 मीटर की दूरी पर 45 सें.मी. चौड़ी तथा 45 से 60 सें.मी. गहरी नालियाँ पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाते हैं। इन नालियों में सड़ी गोबर की खाद तथा रासायनिक उर्वरकों की बोई जाने वाली फसल के लिए सन्तुलित मात्रा मिला देनी चाहिए। पानी में घुलनशील नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश तथा सूक्ष्म तत्वों के मिश्रण को ड्रिप द्वारा सिंचाई के साथ भी फसल में दे सकते हैं। नाइट्रोजन की अधिक मात्रा देने से बचना चाहिए अन्यथा पौधों की वनस्पतिक बढ़वार अधिक होगी। इसके परिणामस्वरूप फलत कम होगी। सिंचाई के लिए 4 लीटर प्रति घण्टा पानी

ISSN No. 2583-3316

के डिस्वाजं वाली 12-16 मि.ली. आकार वाली ड्रिप पाइप (लेटरल), जिन पर 60 सें.मी. की दूरी पर ड्रिपर लगे हों, नालियों में बिछा देनी चाहिए।

लो-टनल तकनीक से लाभ

- इस तकनीक द्वारा कम लागत में किसानों को अधिक उत्पादन एवं लाभ प्राप्त होता है।
- इससे बीजों का जमाव शीघ्र होता है तथा पौधों की समुचित बढ़वार में कम समय लगता है।
- विपरीत मौसम, अधिक गर्मी, ठंड, ओला वृष्टि से पौधों की क्षति नहीं होती।

कद्दूवर्गीय सब्जियों की उन्नत किस्में

1. खीरा	सामान्य किस्में	पंत खीरा-1, प्वाइनसेट, स्ट्रेट-8, जापानी लाँग ग्रीन, पूना खीरा, बालमखीरा, कल्यानपुर ग्रीन, सोलन ग्रीन, शीतला, स्वर्ण शीतल, स्वर्ण पूरना, स्वर्ण अगेती, पूसा उदय, पूसा बरखा।
	संकर किस्में	पंत संकर खीरा-1, पूसा संयोग, सोलन हाइब्रिड-1, ए.ए.यू.सी.-1, ए.ए.यू.सी.-2, प्रिया, सतीस, नुन्हेम्स-9729, नुन्हेम्स-3019, अमन, अमृत, हिंमागी।
2. लौकी	सामान्य किस्में	पंत लौकी-3, पंत लौकी-4, पूसा समर प्रालौफिक लाँग, पूसा समर प्रालौफिक राउन्ड, पूसा नवीन, पूसा सन्तुष्टी, पूसा समृद्धि, पूसा सन्देश, काशी गंगा, काशी बहार, अर्का बहार, कोयंबटूर-1, पंजाब राउन्ड, पंजाब कोमल, कल्यानपुर लाँग ग्रीन, पूसा सन्तुष्टि, पूसा संदेश, नरेन्द्र रश्मि।
	संकर किस्में	पंत संकर लौकी-1, पंत संकर लौकी-2, पूसा मंजरी, पूसा मेघदूत, एन.डी.बी.एच.-7, एन.डी.एच.जी.एच.-4, पूसा हाइब्रिड-3, केतन, गुटका, कावेरी, एन.एस. 421
3. करेला	सामान्य किस्में	पंत करेला-1, पंत करेला-3, कोयंबटूर लाँग, अर्का हरित, काशी उर्वशी, प्रिया, कोयंबटूर-1, पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, कल्यानपुर बारहमासी, कल्यानपुर सोना, एम.डी.यू.-1, प्रिती।
	संकर किस्में	पूसा हाइब्रिड-1, पूसा हाइब्रिड-2, समरग्रीन, एन.एस.-431, एन.एच. 432।
4. खरबूज	सामान्य किस्में	पंजाब सुनेहरी, हरा मधु, पूसा सरबती, पूसा मधुरस, दुर्गापुर मधु, अर्का जीत, अर्का राजहंस, पूसा सुनेहरी, पंजाब रसिला, हिसार मधुर, हिसार सरस।
	संकर किस्में	पंजाब हाइब्रिड-1, पूसा रसराज, एम.एच.-10, डी.एम.एच.-4, एम.एच.वाई-3, एम.एच.वाई-5
5. तरबूज	सामान्य किस्में	शूगरबेबी, आसाई यामाटो, दुर्गापुर मीठा, इम्प्रूव्ड शिपर, दुर्गापुर केसर, अर्का मानिक, धार मानक, न्यूहैम्पशायर मिजेट, पूसा बेदाना।
	संकर किस्में	अर्का ज्योति, नुन्हेम्स-295, नाथ-102, एम.एच.डब्ल्यू.-6, नाथ-102, एच.एम.डब्ल्यू.-11, नामधारी हाइब्रिड।
6. चिकनी तोरई	सामान्य किस्में	पूसा चिकनी, कल्यानपुर चिकनी, पूसा सुप्रिया, कल्यानपुर हरा, पूसा स्नेहा, काशी दिव्या।
नसदार तोरई	सामान्य किस्में	पंत तोरई-1, पूसा नसदार, पूसा नूतन, कोयंबटूर-1, अर्का सुमित अर्का सुजात, पंजाब सदाबहार, कल्यानपुर धारीदार, सतपुतिया।
7. कद्दू (सीताफल)	सामान्य किस्में	पूसा विश्वास, पूसा विकास, काशी हरित, नरेन्द्र अमृत, अर्का चन्दन, कोयंबटूर-1, कोयंबटूर-2, अम्बीली, अर्का सूर्यमुखी, सी.एम.-14, सोलन बादामी।
	संकर किस्में	पूसा हाइब्रिड-1, पूसा अलंकार हाइब्रिड
8. चप्पन कद्दू (पेपो)	सामान्य किस्में	अर्ली यलो प्रोलीफिक, आस्ट्रेलियन ग्रीन, पंजाब चप्पन कद्दू-1, पैटीपेन।
	संकर किस्में	पूसा अलंकार, डुकाटो, सियोलग्रीन, ब्लम हाउस।
9. ककड़ी	सामान्य किस्में	अर्का शीतल, पंजाब लांग मेलन, कर्नाल सलेक्सन।

10. टिण्डा	सामान्य किस्में	अर्का टिन्डा, पंजाब टिन्डा, अन्नामलाई टिन्डा।
11. पेठा	सामान्य किस्में	पंत पेठा-1, कोयंबटूर-1, कोयंबटूर-2, मडलियर।
12. चिचिन्डा	सामान्य किस्में	कोयंबटूर-1, कोयंबटूर-4।
13. परवल	सामान्य किस्में	स्वर्ण अलौकिक, स्वर्ण रेखा, एफ.पी.-1, एफ.पी.-3, एफ.पी.-4, राजेन्द्र परवल 1, राजेन्द्र परवल 2, वी.आर.पी. 101, वी.आर.पी. 102, वी.आर.पी. 103, वी.आर.पी. 104।

- इस तकनीक से खेती करने पर कीटो एवं रोगों का अपेक्षाकृत प्रकोप कम होता है।

लो-टनल के अंतर्गत उगायी गयी करेले की फसल

बुवाई करने से पूर्व बीजों का अंकुरण करवाना आवश्यक है। जनवरी में कम तापमान के कारण इनका अंकुरण देर से होता है। अंकुरण के लिए बीजों को पानी में भिगोना चाहिए। पानी में भिगोने की अवधि बीज के छिलके की मोटाई पर निर्भर करती है। तीन-चार घंटा खरबूजा एवं खीरा, 6-8 घण्टे लौकी एवं तोरई, 10-12 घण्टा टिंडा, तरबूज, खरबूजा है। भिगोने के बाद बीज को कैप्टॉन दो ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज से उपचारित करना चाहिए। इसके बाद बोरों के टुकड़े में लपेटकर गर्म स्थान जैसे बिना सड़ी हुई गोबर की खाद में दो-तीन दिनों तक दबाने से बीजों का अंकुरण शीघ्र हो जाता है। अंकुरित बीजों की बुवाई तैयार नालियों में जनवरी के प्रथम सप्ताह में कर देनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास कम से कम दो बीजों की बुवाई करते हैं। प्लास्टिक से ढकने से नालियों के अंदर का तापमान सामान्य से 8 से 10 डिग्री सेल्सियस अधिक बना रहता है। इससे बीजों का अंकुरण जल्दी हो जाता है तथा पौधों का विकास भी सुचारू रूप से होता है। फरवरी के दूसरे सप्ताह में मौसम का तापमान बढ़ जाता है तो प्लास्टिक को हटाकर खरपतवार को निकाल देना चाहिए। प्लास्टिक की टनल को कभी भी एकदम से नहीं हटाना चाहिए। ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है तथा वे मुरझा जाते हैं, जिससे उनकी वानस्पतिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्लास्टिक को शाम के समय तापमान कम होने पर हटाना चाहिए तथा अगले दिन सुबह पौधों को फिर प्लास्टिक से ढक देना चाहिए। यह प्रक्रिया 2-3 दिनों तक करने से पौधों में कठोरीकरण आ जाता है तथा पौधे, मौसम के अनुकूल बल जाते हैं। पौधों की वानस्पतिक वृद्धि के दौरान पंक्तियों के सापेक्ष सरकंडा लगा देते हैं, जिससे प्रतिकूल या तेज हवाओं से पौधों को बचाया जा सके। इस प्रकार की तकनीकी से बोई गई फसल सामान्य दशा में 40-50 दिनों पहले तैयार हो जाती है, जिसे बाजार में अच्छा भाव मिलता है। इससे प्रति हैक्टयर 1 से 1.5 लाख तक आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

निष्कर्ष

यह तकनीक उत्तर भारत के समस्त मैदानों तथा खासकर बडे शहरों के आसपास सब्जी की खेती करने वाले किसानो के लिए बहुत लाभदायक है। यह तकनीक उत्तर भारत के पहाडी क्षेत्रों के लिए भी लाभदायक है। यह तकनीक सर्दी में उगने वाली बेमौसमी फसलों के लिए आदर्श है और किसानों को अधिक उत्पादन और आय प्राप्त करने का अवसर देती है। इस तकनीक के माध्यम से किसान न केवल अपनी आय बढ़ा सकते हैं, बल्कि उन्हें कृषि में नवाचार की दिशा में एक कदम और बढ़ने का भी मौका मिलता है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

हर्बल गुलालः एक प्राकृतिक और पर्यावरण अनुकूल विकल्प

हेली पंचाल* एवं ध्वनी ए. पटेल

फ्लोरिकल्चर एवं लैंडस्केप आर्किटेक्चर विभाग, बागवानी महाविद्यालय, एस. डी. कृषि विश्वविद्यालय, जगुदण, मेहसाणा, गुजरात

पत्राचारकर्ताः helipanchal15@gmail.com

परिचय

होली भारत का एक प्राचीन त्योहार है जो मस्ती, आनंद, रंगों और सामंजस्य से मनाया जाता है। यह हर साल फाल्गुन (फरवरी-मार्च) महीने की पूर्णिमा को मनाया जाता है। इस त्योहार में पुरुष, महिलाएँ और बच्चे, उम्र या संपत्ति की परवाह किये बिना, 'विविधता में एकता' को दर्शाते हुये रंगों का आनंद लेते हैं। राष्ट्रीय जैव विविधता रणनीति और कार्य योजना के तहत हाल ही में किये गये एक अध्ययन से पता चला है कि रासायनिक रंगों ने भारत के अद्भुत प्राकृतिक रंगों को लगभग समाप्त कर दिया है। रासायनिक रंग देखने में तो सुंदर होते हैं, लेकिन साथ ही वे गंभीर प्रदूषक एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक भी हो सकते हैं। भारत में ये रंग छोटे पैमाने पर तैयार किये जाते हैं और इन पर किसी भी प्रकार की गुणवत्ता की जाँच नहीं होती। फलस्वरूप, त्वचा के लिए सुरक्षित और पर्यावरण के लिए बेहतर, अधिक जैविक और प्राकृतिक विकल्पों का उपयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इस दिशा में एक प्रभावी उपाय यह है की है फूलों का उपयोग करना, जो सदियों से भारतीय त्योहारों और रीति-रिवाजों का अभिन्न हिस्सा रहे हैं। उनके प्राकृतिक रंगद्रव्य होली के लिए जीवंत रंग बनाने में अत्यंत उपयुक्त होते हैं। बागवानी महाविद्यालय, सरदार कृषि नगर दांतीवाड़ा कृषि विश्वविद्यालय, जगुदन के पुष्प विज्ञान एवं लैंडस्केप आर्किटेक्चर विभाग में, हम अपने छात्रों को इन हर्बल रंगों के निर्माण का प्रशिक्षण देते हैं।

कृत्रिम (सिंथेटिक) रंगों के हानिकारक प्रभाव

सालों से, कृत्रिम रंगों को कई स्वास्थ्य खतरों से जोड़ा गया है। होली के रंगों में मौजूद लेड, पारा, कृत्रिम रंग, काँच के कण, धात्विक तत्व आदि त्वचा के लिए हानिकारक होते हैं। ये विषाक्त पदार्थ जल स्रोतों को प्रदूषित कर दीर्घकालिक पारिस्थितिकीय क्षति पहुँचा सकते हैं। इस कारण अब अधिक जैविक और प्राकृतिक विकल्पों को अपनाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है, जो त्वचा के लिए सुरक्षित और पर्यावरण के अनुकूल हैं। हर्बल रंगों का उपयोग होली के दौरान रासायनिक रंगों के लिए एक बेहतरीन विकल्प हो सकता है, जो हानिकारक रसायनों से भरे होते हैं और पर्यावरण को नुकसान पहुंचाते हैं।

हर्बल गुलाल

हर्बल गुलाल प्राकृतिक रंग होते हैं जो पौधों, फूलों, फलों और अन्य जैविक सामग्रियों से प्राप्त किये जाते हैं। प्राचीन काल से ही हर्बल रंगों का उपयोग वस्त्र को रंगने, सौंदर्य प्रसाधनों, खाद्य पदार्थों और पारंपरिक अनुष्ठानों में किया जाता रहा था। हर्बल गुलाल त्वचा के लिए सुरक्षित, जहरीले रसायनों से मुक्त, सुगंधित एवं पर्यावरण के अनुकूल होते है। आज, जब लोग पर्यावरण और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक हो रहे हैं, तो इन का महत्व और भी बढ़ गया है।

हर्बल गुलाल के फायदे

क) पर्यावरण-अनुकूलः ये पानी को प्रदूषित नहीं करते और हानिकारक रसायन से मुक्त होते हैं।

ख) त्वचा और स्वास्थ्य के लिए सुरक्षितः कोई एलर्जी, जलनया खुजली नहीं होती।

ग) बायोडिग्रेडेबलः ये पूरी तरह से प्राकृतिक रूप से विघटित हो जाते हैं।

घ) औषधीय गुणों से भरपूरः कुछ हर्बल रंग एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते हैं और त्वचा व बालों के लिए फायदेमंद होते हैं।

ङ) पारंपरिक और सांस्कृतिक महत्वः इन्हें त्योहारों, अनुष्ठानों और आयुर्वेदिक उपचारों में प्रयोग किया जाता है।

हर्बल रंगों के स्रोत

हर्बल रंग विभिन्न प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं, जिनमें से प्रत्येक एक विशिष्ट रंग प्रदान करता है।

रंग	पौधे का नाम	उपयोग किए जाने वाले पौधे के भाग
नारंगी	पलाश (*Butea monosperma)*	फूल
लाल	गुड़हल (*Hibiscus rosasinensis*)	फूल
लाल	चुकंदर (*Beta vulgaris*)	फल
गुलाबी	'बोगनवेलिया'	फूल
पीला	गेंदा (*Tagetes* spp.)	फूल
	हल्दी (*Curcuma longa*)	
हरा	पालक (*Spinaciaoleracea*)	पत्तियाँ
	नीम (*Azadirachtaindica*)	पत्तियाँ
नीला	अपराजिता (*Clitoriaternatea)*	फूल

प्राकृतिक रंग बनाने की विधि

प्राकृतिक रंग बनाने की प्रक्रिया को व्यवस्थित रूप से अपनाने से सर्वोत्तम परिणाम प्राप्त होते हैं।

फूलों को इकट्ठा करना और तैयार करना

- **चयनः** ऐसे फूल चुनें जो जीवंत रंग प्रदान करें, जैसे गेंदा (पीला), गुलाब (गुलाबी/लाल), गुड़हल (लाल/मैजेंटा) और नीला गुड़हल (नीला)।
- **संग्रहः** ताजे फूल एकत्र करें, यह सुनिश्चित करते हुये कि वे किसी भी कीटनाशक या हानिकारक पदार्थों से मुक्त हों।
- **सफाईः** फूलों को हल्के हाथों से धो कर उन पर लगी धूल और गंदगी को हटा दें।

- **पंखुड़ियों को अलग करनाः** ध्यानपूर्वक फूलों से पंखुड़ियों को अलग करें।

रंग निकालना

- **भिगोनाः** ताजे या सूखे फूलों की पंखुड़ियों को एक बर्तन या कंटेनर में रखें और पंखुड़ियों को पानी (ठंडा या गुनगुना) में पूरी तरह डुबो दें।
- **सोखनाः** पंखुड़ियों को कुछ घंटों या रात भर भिगोने दें, जिससे वांछित रंग गाढ़ा हो सके।
- **छाननाः** जब वांछित रंग प्राप्त हो जाए, तो इस तरल को महीन छलनी से छान कर उसमें बची हुई पंखुड़ियों और अवशेषों को हटा दें।

पाउडर मिश्रण तैयार करना

- फूलों से निकाले गए रंग को आटे (कॉर्नस्टार्च, अरारोट बेसन या चावल का आटा) के साथ मिलाएँ।
- इसे अच्छी तरह मिलाकर एक महीन पाउडर मिश्रण तैयार करें, जिससे इसे अधिक उपयोगी और मुलायम बनाया जा सके।
- इस मिश्रण को कुछ समय के लिए धूप में सुखाएँ ताकि इस में मौजूद नमी पूरीतरह से निकल जाए।
- इसके बाद इसे अच्छी तरह से पीस लें ताकि यह बारीक पाउडर का रूप ले सके।
- इनमें आप खुशबू के लिए गुलाब जल या चन्दन पाउडर भी मिला सकते है।
- यदि आप चाहें, तो इसमें टैल्कम पाउडर भी मिला सकते हैं, जिससे इसकी बनावट और गुणवत्ता बेहतर हो सके।

पंखुड़ियों को सुखाना और पीसना (सूखे पाउडर के लिए)

सुखाना

- पंखुड़ियों को एक गर्म और सूखी जगह पर एक परत में फैला दें, लेकिन सीधे सूर्य के प्रकाश से बचाएँ।
- आप डिहाइड्रेटर या हल्के तापमान पर ओवन का भी उपयोग कर सकते हैं।

गुड़हल

अपराजिता

गुलाबी

पलाश

पीसना

- जब पंखुड़ियाँ पूरी तरह से सूख जाएँ, तो उन्हें मूसल और ओखली या मसाले पीसने वाली ग्राइंडर की मदद से बारीक पाउडर में बदललें।
- आटे के साथ मिलाना (वैकल्पिक)

यदि आप चाहें, तो पिसे हुए फूलों के पाउडर को कॉर्नस्टार्च या चावल के आटे के साथ मिलाकर इसकी मात्रा बढ़ा सकते हैं और इसे अधिक बारीक बना सकते हैं।

हर्बल गुलाल की बढ़ती लोकप्रियता

आने वाले कुछ वर्षों में, भारत में जैविक और प्राकृतिक रंगों की मांग बढ़ी है। यह बदलाव कृत्रिम रंगों से होने वाले स्वास्थ्य और पर्यावरणीय खतरों की बढ़ती जागरूकता के कारण है। पोस्ट-कोविड अवधि के दौरान स्वास्थ्य और सुरक्षा के प्रति उपभोक्ताओं की सतर्कता बढ़ी है, जिससे जैविक रंगों की प्राथमिकता में वृद्धि हुई है। आँकड़ों के अनुसार, हर्बल गुलाल की माँग साल-दर-साल 124% बढ़ी है।

निष्कर्ष

प्राकृतिक रंगों का चयन करना एक सरल लेकिन महत्वपूर्ण तरीका है जिससे हम न केवल इस पर्व का सम्मान कर सकते हैं, बल्कि अपने स्वास्थ्य और पर्यावरण की भी सुरक्षा सुनिश्चित कर सकते हैं। ये रंग पौधों पर आधारित स्रोतों से प्राप्त होते हैं, त्वचा पर कोमल होते हैं, आसानी से नष्ट होने वाले (बायोडिग्रेडेबल) होते हैं और हानिकारक रसायनों से मुक्त होते हैं। फूलों, सब्जियों और फलों से बने प्राकृतिक गुलाल का उपयोग कर के हम न केवल खुद और अपने प्रियजनों की रक्षा करते हैं, बल्कि एक स्वच्छ और टिकाऊ ग्रह की दिशा में भी योगदान करते हैं। प्राकृतिक होली रंगों को अपनाना एक ऐसे उत्सव की ओर कदम है जो अधिक स्वास्थ्य वर्धक, सुरक्षित और पर्यावरण के प्रति जागरूक हो।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

कुशल नर्सरी प्रबंधन की सामान्य विधियाँ

अरुण प्रकाश[1]*, विनय प्रकाश[2] एवं तृप्ति नेगी[3]
[1एवं2]कृषि विभाग, डॉल्फिन (पीजी) बायोमेडिकल और प्राकृतिक विज्ञान संस्थान, देहरादून, उत्तराखंड
[3]जंतु विज्ञान विभाग, देवभूमि उत्तराखंड विश्वविद्यालय, देहरादून, उत्तराखंड
पत्राचारकर्ता: apkohli101@gmail.com

परिचय

कुशल नर्सरी प्रबंधन आज के कृषि और बागवानी क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। इसका अर्थ है नर्सरी के सभी कार्यों को इस तरह से संचालित करना, जिससे संसाधनों का अधिकतम और प्रभावी उपयोग हो, पौधों की गुणवत्ता उच्च रहे और लागत न्यूनतम हो। यह केवल पौधों को उगाने से कहीं अधिक है। इसमें योजनाबद्ध तरीके से काम करना, नई तकनीकों को अपनाना और हर प्रक्रिया को बेहतर बनाना शामिल है। एक कुशल नर्सरी न केवल स्वस्थ पौधे तैयार करती है, बल्कि यह पर्यावरण के प्रति भी जागरूकता है और आर्थिक रूप से भी सफल रहती है।

कुशल नर्सरी प्रबंधन की विधियाँ

नर्सरी में अच्छी गुणवत्ता वाले पौधों की सामग्री तैयार करने के लिए कुछ खास काम सावधानी से किये जाने चाहिए। ये काम नर्सरी में पौधों की बढ़ोतरी और विकास के लिए बहुत ज़रूरी हैं। नीचे कुशल नर्सरी प्रबंधन की विधियाँ विवरण दिया गया हैः

क) काट-छाँट और कटाई

नर्सरी में हेज (बाड़) और झाड़ियों को सही आकार देने के लिए उनकी नियमित काट-छाँट और छँटाई बहुत ज़रूरी है। इससे वे स्वस्थ और आकर्षक दिखते हैं। हेज (बाड़) को अलग-अलग आकार दिये जा सकते हैं, लेकिन आमतौर पर चौकोर आकार की हेज (बाड़) सुंदर दिखती हैं और उन्हें बनाये रखना आसान होता है। इसके विपरीत, शंकुधारी हेज (बाड़) अगर पिरामिडनुमा आकार में तैयार की जाये तो वे ज़्यादा आकर्षक लगती हैं, जो उनका प्राकृतिक रूप भी है। आमतौर पर, तेज़ी से बढ़ने वाली हेज (बाड़) को बार-बार छँटाई की ज़रूरत होती है। हेज (बाड़) की छँटाई किसी भी मौसम में की जा सकती है, लेकिन बरसात का मौसम सबसे अच्छा होता है। काट-छाँट और छँटाई एक तेज प्रूनिंग शियर से की जा सकती है और लकड़ी की शाखाओं को सेकेटर या प्रूनिंग आरी की मदद से काटा जा सकता है।

ख) पत्ती हटाना

यह पौधे की बड़ी पत्तियों को नर्सरी से हटाने का काम है। यह मुख्य रूप से फूल वाले पौधों में उनकी वानस्पतिक वृद्धि को कम करने और उनमें फूल आने को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है। यह उन पौधों में भी उतना ही महत्वपूर्ण है, जो खासकर शुष्क जलवायु में उगाये जाते हैं, जहाँ पौधों के लिए पानी की उपलब्धता हमेशा एक समस्या होती है, मूल रूप से वाष्पोत्सर्जन के माध्यम से होने वाले पानी के नुकसान को कम करने के लिए। पतियों की काट चाट छाँट करना उपयुक्त होता है। पौधों को खेत में लगाते समय या दूर के स्थानों पर पौधों की पैकिंग करते समय भी पत्ती हटाई जाती है। यह हाथ से या कुछ औजारों से या कुछ रसायनों के उपयोग से किया जा सकता है। पत्ती हटाने वाले रसायन भारत में शायद ही कभी उपयोग किए जाते हैं, हालाँकि, पेंटाक्लोरोफेनोल का उपयोग चमेली और कुछ अन्य बागवानी फसलों में पत्ती हटाने के लिए व्यापक रूप से किया जाता है।

ग) डिशूटिंग (पौधों से अतिरिक्त शाखाओं को हटाना)

इसमें पौधे की उन शाखाओं को हटाना शामिल है जिनकी

आवश्यकता नहीं होती। मूल रूप से, कुछ फूल वाले पौधे कई पार्श्व शाखाएँ पैदा करते हैं, और यदि उन सभी को फूलने दिया जाए, तो फूलों का आकार और गुणवत्ता प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है। इस प्रकार, शुरुआत में, केवल कुछ ही शाखाओं को रखा जाता है और शाखाओ लोगों को हटा दिया जाता है। डिशूटिंग हाथों से या ब्लेड से की जा सकती है। यह विशेष रूप से गमलों में उगाये गये पौधों के लिए या यदि पौधों को किसी प्रदर्शनी के लिए तैयार करना हो तो उपयोगी और आवश्यक है। डिस्बडिंग (पौधों से अतिरिक्त कलियों, फूलों और शाखाओं को हटाना) यह पौधों से अतिरिक्त कलियों, फूलों और शाखाओं को हटाने को संदर्भित करता है। डिस्बडिंग का मुख्य उद्देश्य गुणवत्ता वाले फूल प्राप्त करना है। कई बागवानी पौधों में, पत्ती के अक्षों में कई अतिरिक्त कलियाँ (वानस्पतिक और फूल की कलियाँ) विकसित होती हैं। ये कलियाँ मुख्य तनों, शाखाओं और शाखाओं के पोषक तत्वों और पानी को साझा करती हैं। इसलिए, मुख्य शाखाओं, कलियों या आवश्यक पौधे के हिस्से में रस को मोड़ने के लिए, नर्सरी में उगाये गये पौधों के विकास के शुरुआती चरण में अवांछित कलियों को हटा दिया जाता है।

घ) मल्चिंग (मिट्टी के तापमान को नियंत्रित करना व नमी संरक्षण)

मल्चिंग का अभ्यास मुख्य रूप से मिट्टी के तापमान को नियंत्रित करने, नमी संरक्षण और खरपतवार के विकास को दबाने के लिए है। क्यारियों में बीज को बार-बार सींचा जाता है और ये आसानी से बह सकते हैं। इस प्रकार, कुछ मल्च सामग्री रखने से बीज को उड़ने से रोका जा सकता है। मल्च बीजों को पक्षियों द्वारा चुराए जाने से भी बचाता है। इसी तरह, सर्दियों में पाले के नुकसान से और गर्मियों में चिलचिलाती धूप से युवा पौधों को बचाने के लिए बीज क्यारियों को ढंकना समान रूप से उपयोगी है। विभिन्न प्रकार की मल्च सामग्री जैसे सूखी घास (पुआल), पत्थर के कंकड़, सूखे पत्ते, मकई के भुट्टे, मूंगफली के छिलके, कपास के बीज के छिलके, प्लास्टिक की चादरें आदि का उपयोग विभिन्न बागवानी फसलों में किया जाता है, लेकिन सूखी घास या पुआल बीज क्यारियों को ढंकने के लिए सबसे उपयुक्त सामग्री हैं। ये न केवल सस्ते होते हैं बल्कि आसानी से उपलब्ध भी होते हैं। ये पौधों के उचित अंकुरण को भी सुनिश्चित करते हैं। हालांकि, सर्दियों के दौरान नींबू की नर्सरी पर टेंट हाउस का निर्माण बेहतर अंकुरण और पौधों के आगे के विकास के लिए अत्यधिक उपयुक्त माना जाता है। इसी तरह, स्ट्रॉबेरी के प्रसार क्यारियों पर सर्दियों में कम लागत वाली पॉली सुरंगों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

ड़) पिंचिंग (कुछ पत्तियों के साथ पौधे की शाखाओं के बढ़ते बिंदुओं को हटाना)

पिंचिंग में कुछ पत्तियों के साथ पौधे की शाखाओं के बढ़ते बिंदुओं को हटाना शामिल है। इस ऑपरेशन को स्टॉपिंग के नाम से भी जाना जाता है। पिंचिंग के मुख्य उद्देश्य झाड़ीदार विकास को प्रेरित करना और एक पौधे में अधिक संख्या में फूलों के डंठल पैदा करना है। यह डहेलिया, कार्नेशन, गुलदाउदी, ब्रेचीकोम और गेंदा में सबसे वांछित कार्य है। फलों के पौधों में, फूल वाले पौधों में, पिंचिंग आमतौर पर तब की जाती है जब पौधे छोटे होते हैं और उनकी ऊंचाई 7 से 15 सेमी होती है। पिंचिंग में आमतौर पर किसी उपकरण की आवश्यकता नहीं होती है और इससे आसानी से अपने पौधों को किसी प्रदर्शनी के लिए तैयार किया जा सकता है, जहाँ गुणवत्ता, न कि मात्रा, सर्वोत्तम पौधों के चयन का मुख्य मानदंड होता है।

च) प्रिकिंग (पौधों को उनके मूल स्थान से दूसरे गमले या जगह पर स्थानांतरित करना)

यह युवा पौधों को उनके मूल स्थान से दूसरे गमले, ट्रे या जगह पर स्थानांतरित करने का अभ्यास है। प्रिकिंग तब की जाती है जब पौधे पर्याप्त ऊंचाई प्राप्त कर लेते हैं। यह विकास के लिए आवश्यक है। प्रिकिंग आमतौर पर तब की जाती है जब पौधे सुरक्षित हों क्योंकि पौधों की नाजुक जड़ और प्ररोह प्रणाली एक झटके से क्षतिग्रस्त हो सकती है। एक नुकीली छड़ी की मदद से पौधों को एक गमले या ट्रे में सफलतापूर्वक प्रिक किया जा सकता है जब वे पर्याप्त बड़े हों। प्रिकिंग के बाद, पौधों को खेत में तब प्रत्यारोपित किया जा सकता है जब उनमें 4 से 6 पत्तियां विकसित हो चुकी हों।

छ) छाया गृह (पौधों का छायांकन करना)

नर्सरी में लगभग सभी पौधे बहुत नाजुक होते हैं और गर्मियों में अत्यधिक गर्मी और सर्दियों में कम तापमान से आसानी से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। इसलिए, गर्मियों में चिलचिलाती धूप से नर्सरी के पौधों का छायांकन और सुरक्षा आवश्यक है। यदि ठीक से संरक्षित नहीं किया गया, तो नाजुक पौधों की पत्तियां झुलस सकती हैं या मर भी सकती हैं। सर्दियों के दौरान, पाला नर्सरी के पौधों के लिए बहुत हानिकारक हो सकता है, इसलिए उपोष्णकटिबंधीय जलवायु में इनकी सुरक्षा महत्वपूर्ण है, हालाँकि उष्णकटिबंधीय जलवायु में पाला कोई समस्या नहीं

ISSN No. 2583-3316

है। अतः, पौधों की सुरक्षा अत्यंत महत्वपूर्ण है। पौधों के छायांकन और सुरक्षा के लिए विभिन्न सामग्रियों का उपयोग किया जा सकता है, लेकिन आमतौर पर धान के पुआल का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। आजकल, नर्सरी संचालक और प्रवर्धक सर्दियों में पॉलीथीन टेंट या कम लागत वाले पॉली हाउस का उपयोग तापमान बढ़ाने और बीज अंकुरण प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाने तथा पाले से बचने के लिए करते हैं। सर्दियों के दौरान अलग-अलग मातृ पौधों को धान के पुआल से छावला जा सकता है, लेकिन बेहतर धूप के लिए पूर्वी और दक्षिणी भाग को खुला रखने का ध्यान रखना चाहिए। इसी तरह, एक पंक्ति में लगाए गए विंडब्रेक (जैसे यूकेलिप्टस, बबूल या कुछ फलदार पौधे आदि) भी गर्मियों के दौरान नर्सरी के पौधों को छाया प्रदान करते हैं और सर्दियों के दौरान पाला बनने से भी रोकते हैं।

ज) मिट्टी का कीटाणुशोधन या रोगाणु-रहित करना

यह विभिन्न रोगजनकों के कारण होने वाले मिट्टी जनित रोगों को खत्म करने के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य है। मिट्टी का कीटाणुशोधन या तो भाप से या रसायनों से किया जा सकता है। मिट्टी को रोगजनकों से बचाने के लिए जीवाणुरहित किया जाता है। भाप कीटाणुशोधन एक कक्ष में भाप या गर्मी के साथ किया जा सकता है। मिट्टी के कीटाणुशोधन के लिए एक और तरीका 2% फॉर्मेलिन या फॉर्मेल्डिहाइड का उपयोग है। इस विधि में, फॉर्मेलिन या फॉर्मेल्डिहाइड को मिट्टी के साथ अच्छी तरह मिलाया जाता है और मिट्टी को 48 घंटे के लिए तिरपाल या बोरी से ढक दिया जाता है। बाद में, मिट्टी को अच्छी तरह से काम में लिया जाता है (यानी, उसे खोलकर हवा लगने दी जाती है)।

सहारा देना कुछ पौधे गमलों में या यहाँ तक कि खेत में भी शुरुआती वर्षों में पतले होते हैं और इसलिए उन्हें कुछ सहारे की आवश्यकता होती है। ऐसे पौधों को उपयुक्त सहारा प्रदान किया जाना चाहिए क्योंकि यह न केवल पौधे को सहारा देता है बल्कि पौधों को तेज हवाओं से हिलने या उड़ने से भी रोकता है। सहारा स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री जैसे बांस, छंटे हुए लकड़ी की छड़ें, जूट, कपास, मक्का और अरहर के सूखे तने आदि से किया जा सकता है। यहां तक कि एंगल आयरन की छड़ें भी सहारा देने के लिए उपयोग की जाती हैं। एकल तने वाले पौधों के लिए, केवल एक सहारे की आवश्यकता होती है, जबकि बहु-तने वाले पौधों के लिए, 4 से 5 या अधिक सहारे की आवश्यकता हो सकती है, खासकर यदि पौधों को प्रदर्शनी के उद्देश्य से तैयार किया जाना हो। सौंदर्यपूर्ण रूप देने के लिए, सहारे को हरा रंग दिया जा सकता है। पौधों को सहारे से कसकर बांधने के लिए, उन्हें हरे धागे की मदद से बांधा जा सकता है लेकिन पौधों को चोट से बचाने के लिए सावधानी बरतनी चाहिए। पौधों को नियमित अंतराल पर जांचना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि यह विकास में बाधा न डाले और पौधे को चोट न पहुँचाए।

झ) प्रशिक्षण और छँटाई

प्रशिक्षण और छंटाई नर्सरी और खेत में आवश्यक दो अंतर-संबंधित कार्य हैं। प्रशिक्षण मुख्य रूप से नर्सरी में उगाये गये पौधों को उचित आकार देने के लिए किया जाता है, जबकि छँटाई मुख्य रूप से पौधों की उत्पादकता या जीवन शक्ति से संबंधित है। इन दोनों प्रथाओं में एक पौधे के अवांछनीय पौधों के हिस्सों (शाखाएं, अंग, टहनियां, फूल, अंकुर या जड़ें आदि) को विवेकपूर्ण ढंग से हटाना शामिल है। इन प्रथाओं के लिए पौधों के फूलने और फलने की आदत का तकनीकी ज्ञान आवश्यक है, लेकिन नर्सरी में, एक पौधा प्रचारक समय, अनुभव, अवलोकन और अभ्यास के साथ इन तकनीकों को सीख सकता है। डिस्बडिंग, पिंचिंग और डिफोलिएशन प्रथाएं भी नर्सरी में बागवानी पौधों के प्रशिक्षण और छँटाई से संबंधित कुछ रूप हैं।

ञ) पानी और खाद देना

शुरुआती लोगों द्वारा की जाने वाली सबसे आम गलती स्थापित पौधों को रोजाना पानी देना है, जो बहुत हानिकारक है। अंकुरों को केवल लगभग एक सप्ताह तक ही रोजाना पानी की आवश्यकता होती है, लेकिन बाद में, क्यारियों में पानी भरना सबसे अच्छी विधि है। आजकल, स्प्रिंकलर और ड्रिप सिंचाई के तरीके नर्सरी चलाने वालों के बीच लोकप्रियता प्राप्त कर रहे हैं। ये दोनों तरीके न केवल पौधों और अंकुरों को पानी की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करते हैं बल्कि पानी की काफी हद तक बचत भी करते हैं। यह बेहतर होगा यदि पौधों द्वारा पोषक तत्वों के कुशल अवशोषण और बेहतर उपयोग के लिए नर्सरी पौधों को तरल उर्वरक या पर्णीय पोषण दिया जाए।

निष्कर्ष

कुशल नर्सरी प्रबंधन केवल पौधों को जीवित रखने से कहीं अधिक यह एक व्यवस्थित, वैज्ञानिक और पर्यावरण के प्रति जागरूक दृष्टिकोण है जो नर्सरी को आर्थिक रूप से व्यवहार्य और पारिस्थितिक रूप से टिकाऊ बनाता है। इन विधियों को अपनाकर, कोई भी नर्सरी अपनी उत्पादकता बढ़ा सकती है, लागत कम कर सकती है और उच्च गुणवत्ता वाले पौधे प्रदान कर सकती है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

आलू की उन्नत खेती एवं प्रबंधन

एस. एल. वास्केल*, ए. के. त्रिपाठी, रिंकू वास्केल, डी.पी. सिंह एवं प्रियंका धुर्वे

कृषि विज्ञान केंद्र, सागर-2, बिजोरा, सागर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: sukhlalwaskel98@gmail.com

परिचय

आलू की खेती कंदवर्गीय सब्जी के रूप में की जाती है। आलू उत्पादन के क्षेत्र में भारत को विश्व में तीसरा स्थान प्राप्त है। भारत में आलू को बहुत अधिक पसंद किया जाता है, यह एक ऐसी सब्जी है, जिसे किसी भी सब्जी के साथ आसानी से बनाया जा सकता है। केरल और तमिलनाडु राज्यों को छोड़कर, भारत के अन्य राज्य में आलू की खेती सभी जगहों पर की जाती है। आलू का सेवन शरीर के लिए लाभदायक होता है, किन्तु इसके अधिक सेवन से शरीर में चर्बी बढ़ने जैसी समस्या उत्पन्न हो सकती है। आलू में अनेक प्रकार के पोषक तत्व विटामिन सी, बी, मैंगनीज, कैल्शियम, फॉसफोरस और आयरन पाया जाता है। इसके साथ ही इसमें कार्बोहाइड्रट एवं पानी की मात्रा भी सबसे अधिक होती है। सब्जी के अलावा आलू के इस्तेमाल से अनेक प्रकार की खाने की चीजे बनाई जाती है, जैसे वड़ापाव, आलू भरी कचौड़ी, चिप्स, टिक्की और चोखा, फ्रेंच फ्राइज, समोसा, पापड़, चाट आदि शामिल है, जिस वजह से बाजार में आलू की माँग भी हमेशा बनी रहती है। आलू के कंद भूमि के अंदर पाये जाते है, जिस वजह से इसकी खेती के लिए भूमि कार्बनिक तत्व से भरपूर और उचित जल निकासी वाली होनी चाहिये। भारत में आलू की खेती रबी की फसल के साथ की जाती है। आलू की खेती में कार्बनिक तत्वों से भरपूर उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी खेती के लिए उचित जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी की आवश्यकता होती है। सामान्य 5.5-6.5 पी.एच मान वाली भूमि में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है। समशीतोष्ण और उष्णकटिबंधीय जलवायु आलू की फसल के लिए उचित मानी जाती है। भारत में इसकी खेती सर्दियों के मौसम में की जाती है, किन्तु सर्दियों में गिरने वाला पाला इसके पौधों को हानि पहुँचाता है।

अधिक गर्म जलवायु में भी इसके फल खराब हो जाते है। जिस वजह से इसके पौधों को हल्की बारिश की आवश्यकता होती है। आलू के अच्छे उत्पादन के लिए सामान्य तापमान की आवश्यकता होती है, अधिक तथा कम तापमान इसके पौधों को हानि पहुँचाता है। इसके पौधे अधिकतम 25 डिग्री तथा न्यूनतम 15 डिग्री तापमान को सहन कर सकते है। इससे अधिक तापमान पौधों के लिए हानिकारक होता है।

खेत की तैयारी और उर्वरकः आलू की खेती भुरभुरी मिट्टी में की जाती है। इसके लिए सबसे पहले खेत में मिट्टी पलटने वाले हलो से गहरी जुताई कर दी जाती है। जुताई के बाद खेत को कुछ दिनों के लिए ऐसे ही खुला छोड़ दिया जाता है। इसके बाद खेत में प्राकृतिक खाद के रूप में 150-200 क्विंटल/हे. पुरानी गोबर की खाद या 800-1000 क्विंटल/हे. वर्मी कम्पोस्ट को डालकर उसकी फिर से जुताई कर दी जाती है। इससे खेत की मिट्टी में गोबर की खाद अच्छे से मिल जाती है। इसके बाद खेत में पानी लगाकर पलेव कर दिया जाता है, पलेवा के बाद जब खेत की मिट्टी ऊपर से सूखी दिखाई देने लगती है, तब रासायनिक खाद के रूप में डी.ए.पी के दो बैग/हे. खेत में डालकर जुताई कर दी जाती है। इसके बाद रोटावेटर लगाकर खेत की मिट्टी को भुरभुरा कर दिया जाता है, मिट्टी के भुरभुरा होने के पश्चात् पाटा लगाकर खेत को समतल कर दिया जाता है। इसके बाद खेत में पौधों की रोपाई के लिए मेड़ को तैयार कर लिया जाता है। इसके अलावा पौधों के विकास के समय 25 किलोग्राम यूरिया की मात्रा को सिंचाई के साथ देना होता है।

बीज दरः आलू की बीज दर रोपण की किस्म, आकार और समय पर निर्भर करती है। प्रति हेक्टेयर बीज दर पर रोपण के समय का आधार, बीज का आकार और अंतराल नीचे दिया गया है।

अगेती किस्मः कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी जवाहर, ऊपरी लोवकर, कुफरी सीतमान, कुफरी ज्योति, कुफरी सूर्य, कुफरी अशोक, कुफरी भास्कर।

ISSN No. 2583-3316

मध्य किस्मः कुफरी बाहर, कुफरी सतलज, कुफरी आनंद, कुफरी अरुण कुकरी, पुखराज कुफरी, पुष्कर कुफरी लालिमा, कुफरी कंचन, कुफरी जामनिया।

पछेती किस्मः कुफरी सिंदरी, कुफरी बादशाह।

फसल का प्रकार	बीज का आकार	बुवाई की दुरी	कंद की आवश्यकता
अगेती	2.5-.3.0	45-15	18-20
मध्यम	3.0-4.0	60-25	20-25
पछेती	4.0-5.0	50-20	25-30

आलू की उन्नत किस्म जिसमे प्रसंस्करण हेतु चिप्स बनाई जाती है

कुफरी चिप्सोना-1, कुफरी चिप्सोना-2, कुफरी चिप्सोना-3, कुफरी बादशाह, कुफरी ज्योति, कुफरी चमत्कार, कुफरी अलंकार, कुफरी फ्राईसोना, कुफरी चिप्सोना, ऊपरी सूर्य।

आलू की बुवाई की विधि

आलू के बीजो की रोपाई आलू के रूप में की जाती है। इसके लिए छोटे आलू के कंदो को खेत में लगाया जाता है उसके बाद कंदो की रोपाई के पहले उन्हें कार्बेन्डाजिम एवं मेन्कोजेब की 3 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से पानी में डालकर मिला लिया जाता है, जिसके बाद कंद को इस घोल में 15-20 मिनट तक रखा जाता है। इसके बाद इन कंदो की रोपाई की जाती है। एक हेक्टेयर के खेत में 15-25 क्विंटल कंदो की आवश्यकता होती है। कंदो की रोपाई के लिए समतल भूमि में 45-60 से.मी. की दूरी रखते हुये मेड़ो को तैयार कर लिया जाता है तथा प्रत्येक मेड़ की चौड़ाई 45 से.मी. तक रखी जाती है। इसके बाद इन कंदो को 20 से 25 बेड की दूरी रखते हुये 5 से 7 बेड की गहराई में लगाया जाता है। आलू की खेती रबी मौसम की जाति है। अक्टूबर और नवंबर माह के मध्य इसके कंदो की रोपाई करना उचित माना जाता है।

क) मिट्टी चढ़ानाः मिट्टी चढ़ाने का कार्य बुवाई के 40 से 50 दिन बात करते हैं जो आलू कान जमीन के ऊपर रहते हैं वह सूर्य की किरणों के सीधे संपर्क में ना आ सके यदि आलू का कंद सूर्य की किरणों के सीधे संपर्क में आने से उनमें हरापन उत्पन्न होने लगता है, ऐसे हारापन आलू का कंद मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है, इसलिए मिट्टी चढ़ाने से सूर्य की रोशनी सीधे आलू के कंद पर नहीं पड़ती है।

ख) सिंचाईः यदि आलू के कंदो की रोपाई नमी वाली भूमि में की जाती है, तो इन्हे रोपाई के 5-6 दिन बाद पहली सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसके बाद पौधों को विकास करने के लिए 10 से 15 दिन के अंतराल में पानी देना होता है। आलू के खेत में कंदो का विकास अच्छे से हो इसके लिए खेत में नमी बनाई रखनी होती है।

ग) खरपतवार नियंत्रणः आलू के खेत में खरपतवार पर नियंत्रण पाने के लिए रासायनिक और प्राकृतिक दोनों ही विधियों का इस्तेमाल किया जाता है। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार पर रसायनिक विधि द्वारा नियंत्रण पाने के लिए पेंडामेथालिन 350 मि.ली/हे. की उचित मात्रा का छिड़काव बीज रोपाई के पश्चात किया जाता है इससे खरपतवार कम मात्रा में खेत में जन्म लेती है। प्राकृतिक विधि में खरपतवार पर नियंत्रण पाने के लिए निराई-गुड़ाई की जाती है। इसकी पहली गुड़ाई बीज रोपाई के तकरीबन 20 से 25 दिन बाद की जाती है। आलू के पौधों को दो से तीन गुड़ाई की ही आवश्यकता होती है। जिसमे पहली गुड़ाई के बाद बाकी की गुड़ाइयो को 15 से 20 दिन बाद करना होता है।

घ) आलू की खुदाई, सफाईः आलू की उन्नत किस्मो को तैयार होने में 80 से 90 दिन का समय लग जाता है। अधिक तापमान होने से पहले इसके कंदो को खोद कर निकाल लिया जाता है। वर्तमान समय में कंदो की खुदाई मशीन से भी की जा रही है। खुदाई के बाद उन्हें पानी से धोकर साफ कर लिया जाता है। इससे आलू की मिट्टी साफ हो जाती है। इसके बाद कंदो को उनके आकार के अनुसार अलग कर लिया जाता है। एक हेक्टेयर के खेत में 350-400 क्विंटल की पैदावार प्राप्त

हो जाती हैं।

ड़) डिहोलींगः आलू निकालने के 10 दिन से 15 दिन पहले आलू के वायवी भागों को निकाल देना चाहिए, जिससे एफिड का आक्रमण भी नहीं होगा और जो पोषक तत्व पौधे के विधिया भागों के विकास खर्च होगा उन पोषक तत्वों का उपयोग आलू के कान बनने में होगा जिससे आलू का आकार बड़ा और स्वस्थ रहेगा।

च) सीड प्लॉट तकनीक का विकासः इस तकनीक का विकास डॉ पुष्कर नाथ के द्वारा सन् 1965 में किया गया, जिससे विषाणु रहित आलू के कंद प्राप्त होते है। जब आलू में वायरस की बीमारी नहीं लगेगी तो फसल की लागत कम होगी, जिससे किसानों को अधिक आय प्राप्त होगी।

प्रमुख रोगों एवं कीटो का प्रबंधन

क) पछेती अंगमारी रोग

• **रोगचक्र एवं अनुकूल वातावरणः** मैदानी क्षेत्रों में शीत भंडार में तथा पहाड़ी क्षेत्रों में देशी भंडारों में रखे संक्रमित बीज कन्द के माध्यम से रोगजनक पूरे साल जीवित रहता है। संक्रमित बीज कंद, प्राथमिक स्त्रोत के रूप में एक मौसम से अगले मौसम तक रोग का संचरण करते है। पहाड़ियों और शीतोष्ण दशाओ में रोगजनक ग्रसित तनों और कंद में जीवित रह सकते है। रोगजनक ए1 एवं ए2 मेटिग टाइप के मिलाप से विकसित स्पोर के रूप में भी जीवित रह सकते है। आलू और टमाटर इस रोगजनक के मुख्य परपोषी फसलों के रूप में जाने जाते है।

प्रबंधन

कम अवधि में शीघ्र बनाने में सक्षम पिछेता झुलसा प्रतिरोधी/ सहनशील किस्मों जैसे कुफरी गिरधारी हिमालिनी एवं कुफरी शैलजा (पहाड़ी क्षेत्रों के लिए), कुफरी, अरुण, कुफरी बादशाह, कुफरी चिपसोना-1, कुफरी चिपसोना-2, कुफरी चिपसोना-3, कुफरी हिमसोना, कुफरी ललित, कुफरी पुखराज (मैदानी क्षेत्रों के लिए) आदि के बीज का इस्तेमाल करें।

पिछेता झुलसा रोग प्रकट होने के संकेत मिलने पर प्रति हैक्टर 1.5 कि.ग्रा. कि दर से मैंकोजेब या प्रोपिनेब का पहला छिड़काव करें। जैसे ही बीमारी खेत में दिखाई देने लगे तभी दूसरा छिडकाव 10 दिनों के बाद फेमोक्साडोन 16.6% एवं साइमोक्सानिल 22.1% 200 ग्राम प्रति एकड या कासुकामाईसिन एवं कॉपर-आक्सिक्लोराइड का 300 ग्राम प्रति एकड छिड़काव करना चाहिए।

यदि मौसम बादलों से घिरा दिखाई दे तो सिचाई को तुरंत रोक दे। जब 75% तक फसल पिछेता झुलसा रोग से नष्ट हो जाये तो उस स्थिति में डंठलों को काट दे तथा किसी गड्ढे में दबा दें। संक्रमित पत्तियों और कंदों को खुदाई से पहले नष्ट कर दे तथा खुदाई डंठल काटने के 12-15 दिन बाद ही करें।

ख) अगेती झुलसा पर्ण धब्बा

• **लक्षणः** आलू में अगेती झुलसा रोग से आमतौर पर पत्तियाँ और कंद ग्रसित होते है। यह रोग आलू कि फसल को कंद विकसित होने कि आवस्था से पूर्व संक्रमित करता है। सबसे पहले निचली पत्तियों पर संक्रमण दिखाई देता है। इन पत्तियों पर भूरे रंग के कोणीय या गोले धब्बे दिखाई देते है। बड़े धब्बे छल्ले का आकर ले लेते है। झुलसा से पत्तियाँ सूखी हुई तथा भूरी कागज कि तरह दिखाई देती है। ग्रसित पत्तियों पर प्रायः गोल-गोल छल्ले पड़ जाते है। जबकि कंदों पर गोलाकार से टेढ़े-मेढ़े और दबे हुए निशान दिखाई देते है। ग्रसित कंदों का गुदा सूख कर भूरा और कार्क जैसा हो जाता है।

प्रबंधन

• स्वस्थ बीज हमेशा किसी विश्वसनीय स्त्रोत से प्राप्त कर ही इस्तेमाल करें। उर्वरकों कि संतुलित मात्रा का इस्तेमाल करने से इस रोग कि रोकथाम आसानी से कि जा सकती है, विशेष कर नाइट्रोजन कि मात्रा का।

• बीजाई के 40 दोनों के बाद पत्तियों पर 1.0% यूरिया का छिड़काव करना लाभदायक रहता है। रोग के लक्षण दिखाई देने पर प्रति हैक्टर 1.5 कि.ग्रा. कि दर से मैंकोजैब या प्रोपिनेबका छिड़काव करें। फिर लक्षण दिखाई देने पर 10 दिनों के बाद फेमोक्साडोन 16.6% एवं साइमोक्सानिल 22.1% 200 ग्राम प्रति एकड का छिड़काव करना चाहिए।

• आवश्यकता पड़ने पर ही सिचाई करें तथा संक्रमित पत्तियो, तनों और कंदों को उखाड़ कर नष्ट दें कर।

ग) काली रुसी

लक्षणः यह रोग कंदों, अंकुरों, तने एवं भूस्तारी को प्रभावित करता है। इस रोग से कंदों पर कहीं-कहीं गहरे भूरे रंग से काले रंग के पिण्ड सक्लेरोशिका के रूप में जम जाते है, जिससे कंद भददे दिखाई देने के कारण उनका बाजार मूल्य कम हो जाता है। बीजाणुओं के अलावा रोगकारक फफूँद द्वारा कंदों के छिलकों पर गेरू रंग कि पतली पपड़ी पड़ जाती है। रोगकारक खुदाई के उपरांत खेतों में तथा भंडार ग्रहों में रखे कंदों के अंकुरों को नुकसान पहुँचाते है। बुरी तरह ग्रासित कंदों के अंकुर नष्ट हो जाते है। ऐसे कंदों को लगाने पर उनमे आँखे नही निकल पते है। इससे पौधों कि संख्या कम होती है और

पौधे दूर-दूर छितरे हुये नजर आते है। अंकुर के ग्रस्त होंने से तने के निचले हिस्से पर घेरे बन जाते है। परिणामस्वरूप पत्तियाँ किनारों से गुलाबी या बैगनी रंगत सहित अन्दर कि तरफ मुड जाती है और अच्छी पत्तियों में हरे या लाल रंग के वायवीय कंद बन जाते है।

प्रबंधन

• रोगजनक के स्कलेरोशिया से मुक्त स्वस्थ बीज का प्रयोग रोग प्रबंधन में सहायक होता है।

• स्वस्थ बीज, किसी विश्वसनीय स्त्रोत से प्राप्त कर ही इस्तेमाल करें।

• भारतीय उपोषणकटिबंधीय मैदानी इलाकों में गर्मी के महीनों के दौरान पारदर्शी पॉलीथीन पलवार के साथ मिट्टी का सौरीकरण मृदा से होने वाले प्रभाव के नियंत्रण के लिए प्रभावी पाया गया है।

• आलू कि बुवाई अपेक्षाकृत शुष्क और गर्म मिट्टी में कि जानी चाहिए, जिससे तेजी से फसल कि वृद्धि हो सके।

• आलू के बाद मक्का का ढ़ेचा का फसल चक्र अपनाने से काफी हद तक रोग का नियंत्रण हो जाता है।

• प्रभावित खेतों में गर्मियों में ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करे। खुदाई के बाद बीज आलुओ को शीत भंडार में भण्डारण करने से पूर्व 3% बोरिक एसिड (30 ग्राम प्रति लीटर पानी) से 20-30 मिनट तक घोल में डूबो कर या घोल का छिड़काव करके उपचारित करे।

• शुष्क गलन

• स्कलेरोशियम मुरझान

• काली गलन

कीट प्रबंधन

• **एफिड या माहूः** आलू सहित कई फसलों के लिए एक कीट हैं। ये छोटे (1/20-1/10 इंच लंबे), हरे से काले रंग के, मुलायम शरीर वाले कीट आमतौर पर पत्तियों के नीचे पाये जाते हैं। अपरिपक्व कीड़े वयस्कों की तरह दिखते हैं। एफिड मक्खी, यह कट पत्तियों का रस चुस्ती है और आलू की फसलों में वायरस फैलाती है इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरोप्रिड 250 मिली प्रति एकड की दर से या थायोमेंथाजम 200 ग्राम प्रति एकड की दर से यदि एफिड का आक्रमण दिखाई दे तो लेमडासाईहेल्थ्रिन और थायोमेंथाजम 80 मिली. प्रति एकड की दर से 15 दिन के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें इस प्रकार से किट का नियंत्रण कर सकते हैं।

• **सफेद मक्खीः** सफेद मक्खी के द्वारा पत्तियों का रस चुस्ती है और आलू की फसलों में वायरस फैलती है, जिससे आलू की पत्तियां सिकुडने लगती है। जब आलू की पत्तियां सिकुड जाती है तो उसमें फोटोसिंथेसिस का नहीं हो पता है। इससे पौधे में भोज्य पदार्थ नहीं बन पाता जिससे पौधे का विकास और वृद्धि अच्छे से नहीं होती है। इस किट के नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरोप्रिड या थायोमेंथाज्म का 160 मिली प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें यदि इसका प्रकोप ओर दिखाई दे तो डाईफेंथ्युरॉन दवाई का 120 ग्राम प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

• **आलू कट वर्मः** यह के फसलों पर शाम के समय आक्रमण करके युवा पौधों को नुकसान पहुँचाते हैं। इस किट को हाथ लगाने पर यह सिकुडकर बेलनाकार हो जाता है अर्थात ये कीट मिट्टी के अंदर रहता है और आलू के कंद को क्षतिग्रस्त करते रहता है।

उपजः 400 से 450 क्विंटल प्रति हे.।

निष्कर्ष

आलू की उन्नत खेती से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आलू एक महत्वपूर्ण सब्जी है, जो दुनिया भर के लोगों के लिए महत्वपूर्ण है। यह एक मुख्य भोजन है, जो लोगों को पोषण और ऊर्जा प्रदान करता है, साथ ही यह कई तरह से उपयोगी भी है, जैसे कि पशु आहार, नकदी फसलें और विभिन्न औद्योगिक अनुप्रयोगों के लिए भी उपयोगी है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

आधुनिक युग में फूलों की खेती: नवाचार और चुनौतियाँ

जय राम, अजय कुमार सिंह, अमित कनौजिया, अजय कुमार, कुमारी अंजलि* एवं आस्था सिंह

पुष्प विज्ञान और भूदृश्य विभाग, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: km.anjali6307@gmail.com

परिचय

आधुनिक युग ने तकनीकी, नवाचार और विकसित होती उपभोक्ता माँगों के माध्यम से फूलों की खेती को बदल दिया है। यह शोधपत्र जलवायु परिवर्तन, स्थिरता और वैश्विक प्रतिस्पर्धा जैसी चुनौतियों को संबोधित करते हुए, उद्योग के भविष्य को आकार देते हुए, परिशुद्धता कृषि, नियंत्रित वातावरण कृषि और जैव प्रौद्योगिकी सहित प्रमुख प्रगति की जाँच करता है, फूलों की खेती की जीवंत दुनिया, सजावटी फूलों और पौधों की खेती आधुनिक युग में एक नाटकीय परिवर्तन से गुज़री है। तकनीकी छलाँग और बदलती उपभोक्ता माँगों से प्रेरित होकर, उद्योग नवाचार और चुनौती के एक जटिल परिदृश्य को निर्वहन कर रहा है।

नवप्रवर्तन का उत्कर्ष

वैश्विक पुष्पकृषि उद्योग वर्तमान में एक जीवंत पुनर्जागरण का अनुभव कर रहा है, जिसे 'नवाचार' के रूप में वर्णित किया गया है। सरल खेत की खेती की अपनी पारंपरिक छवि से बहुत दूर, यह क्षेत्र अब कृषि प्रौद्योगिकी के मामले में सबसे आगे है, जो उच्च गुणवत्ता वाले, विविध और स्थायी रूप से उत्पादित फूलों और सजावटी पौधों की बढ़ती वैश्विक मांग को पूरा करने के लिए अत्याधुनिक विज्ञान और स्मार्ट समाधानों का लाभ उठाता है। फूलों की खेती के इस आधुनिक युग की विशेषता खेती के तरीकों, पौधों के प्रजनन, कटाई के बाद की देखभाल और बाजार की रणनीतियों में अभूतपूर्व प्रगति है, जो मौलिक रूप से पौधों के बढ़ने, बेचने और प्रकृति की क्षणभंगुर सुंदरता का आनंद लेने के तरीके को नया रूप दे रही है। आधुनिक युग ने फूलों को उगाने, विपणन करने और आनंद लेने के तरीके को नया रूप देने वाली प्रगति की एक लहर की शुरुआत की है।

प्रमुख नवाचारों में शामिल हैं

• परिशुद्धता कृषि

सेंसर नेटवर्क और ड्रोन इमेजरी जैसी परिष्कृत प्रौद्योगिकियाँ संसाधन प्रबंधनको अनुकूलित कर रही हैं। इससे सटीक सिंचाई, लक्षित निषेचन और कीटों और बीमारियों का जल्दी पता लगाना, अपशिष्ट को कम करना और उपज को अधिकतम करना संभव हो जाता है।

- **सेंसरः** तापमान, आर्द्रता, प्रकाश स्तर और कार्बन डाइ ऑक्साइडकी निगरानी करते हैं, जिससे सटीक समायोजन संभव होता है।
- **ड्रोन और सेंसरः** खेतों की निगरानी, सिंचाई और उर्वरक प्रबंधन के लिए ड्रोन और सेंसर का उपयोग किया जा रहा है। ड्रोन फसलों की विस्तृत तस्वीरें खींच सकते हैं, जिससे पौधों के स्वास्थ्य, पोषक तत्वों की कमी और बीमारी की मौजूदगी के बारे में जानकारी मिलती है। ड्रोन और सेंसर मिट्टी की नमी के स्तर की निगरानी कर सकते हैं, जिससे सिंचाई का सटीक शेड्यूल बनाया जा सकता है।
- **स्वचालित सिंचाईः** पानी की बचत और सटीक सिंचाई के लिए स्वचालित सिंचाई प्रणालियों का उपयोग किया जा रहा है।
- **बायोटेक्नोलॉजीः** नई किस्मों के विकास और रोगों से बचाव के लिए बायोटेक्नोलॉजी का उपयोग किया जा रहा है।
- **उर्वरीकरणः** सटीक पोषक समाधान प्रदान करते हुए निषेचन के साथ सिंचाई को जोड़ता है।
- **रोग और कीट प्रबंधनः** फूलों की खेती में रोगों और कीटों का समय से पहले पता लगाना महत्वपूर्ण है।

पुष्प कृषि में सटीक निगरानी

- **नियंत्रित वातावरण कृषिः** लाइटिंग, जलवायु नियंत्रण

प्रणाली और हाइड्रोपोनिक सेलैस अत्याधुनिक ग्रीनहाउस बाहरी मौसम की स्थिति के बावजूद साल भर उत्पादन को सक्षम कर रहे हैं। यह निरंतर आपूर्ति और गुणवत्ता सुनिश्चित करता है।

• **एलईडी लाइटिंगः** एलईडी लाइटें पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक विशिष्ट तरंग दैर्ध्य प्रदान करती हैं। यह उत्पादकों को प्रकाश की तीव्रता और अवधि को नियंत्रित करने की अनुमति देता है, जिससे फूलों की गुणवत्ता और उपज में सुधार होता है। एलईडी लाइटें पारंपरिक प्रकाश व्यवस्था की तुलना में अधिक ऊर्जा-कुशल भी हैं।

• **हाइड्रोपोनिक्स और एक्वापोनिक्सः** ये मिट्टी रहित खेती की तकनीकें हैं, जो पानी और पोषक तत्वों के कुशल उपयोग की अनुमति देती हैं। हाइड्रोपोनिक्स में, पौधों को पोषक तत्वों से भरपूर पानी में उगाया जाता है, जबकि एक्वापोनिक्स में, मछली और पौधों को एक साथ उगाया जाता है। ये प्रणालियाँ पानी की बर्बादी को कम करती हैं और रसायनों के उपयोग को कम करती हैं।

• **ऊर्ध्वाधर खेतीः** ऊर्ध्वाधर खेत बहु-स्तरीय संरचनाएं हैं जो सीमित स्थान में फूलों की खेती की अनुमति देती हैं। वे शहरी क्षेत्रों में फूलों की खेती के लिए विशेष रूप से उपयुक्त हैं, जहाँ भूमि सीमित है। कम जगह में अधिक पैदावार होती है।

• **ग्रीनहाउस प्रौद्योगिकीः** आधुनिक ग्रीनहाउस तापमान, आर्द्रता और प्रकाश को नियंत्रित करने के लिए उन्नत तकनीकों का उपयोग करते हैं। इसमें जलवायु नियंत्रण, स्वचालित सिंचाई और पोषक तत्व वितरण प्रणाली शामिल हैं

• **जैव प्रौद्योगिकी का उदयः** आनुवंशिक इंजीनियरिंग और ऊतक संवर्धन तकनीकें पौधों के प्रजनन में क्रांति ला रही हैं। वैज्ञानिक बेहतर रंग, लंबे फूलदान जीवन और रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोध के साथ नई फूलों की किस्में विकसित कर रहे हैं, जो उपभोक्ताओं की बदलती प्राथमिकताओं को पूरा कर रहे हैं।

• **स्वचालन और रोबोटिक्सः** रोबोटिक सिस्टम रोपण, कटाई और पैकेजिंग जैसे श्रम-गहन कार्यों को स्वचालित कर रहे हैं, जिससे दक्षता में सुधार हो रहा है और श्रम लागत कम हो रही है।

ई-कॉमर्स और डिजिटल प्लेटफ़ॉर्म

ऑनलाइन मार्केट प्लेस और सोशल मीडिया ने बाज़ार की पहुँच का विस्तार किया है, उत्पादकों को सीधे उपभोक्ताओं से जोड़ा है और व्यक्तिगत अनुभव की सुविधा दी है।

• **ऑनलाइन प्लेटफॉर्मः** फूलों की बिक्री और विपणन के लिए ऑनलाइन प्लेटफॉर्म का उपयोग किया जा रहा है।

• **शीत श्रृंखलाः** फूलों की ताजगी बनाए रखने के लिए शीत श्रृंखला का उपयोग किया जा रहा है।

• **प्रत्यक्ष विपणनः** किसानों को सीधे उपभोक्ताओं से जोड़ने के लिए प्रत्यक्ष विपणन को बढ़ावा दिया जा रहा है।

• **स्मार्ट पैकेजिंगः** पैकेजिंग सामग्री में नवाचार जो नमी को नियंत्रित करते हैं, एथिलीन अवशोषण प्रदान करते हैं या बेहतर शॉक सुरक्षा प्रदान करते हैं, जिससे पारगमन के दौरान क्षति कम होती है।

उन्नत किस्में

रोग प्रतिरोधी किस्मेंः ऐसी किस्मों का विकास किया जा रहा है, जो रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोधी हैं।

क) अधिक उपज वाली किस्मेंः ऐसी किस्मों का विकास किया जा रहा है, जो अधिक उपज देती हैं।

ख) लंबे समय तक ताजा रहने वाली किस्मेंः ऐसी किस्मों का विकास किया जा रहा है, जो लंबे समय तक ताजा रहे।

प्रमुख चुनौतियाँ

अपनी प्रगति के बावजूद, पुष्प उद्योग को महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा हैः

क) स्मार्ट पैकेजिंगः पैकेजिंग सामग्री में नवाचार जो नमी को नियंत्रित करते हैं, एथिलीन अवशोषण प्रदान करते हैं या बेहतर शॉक सुरक्षा प्रदान करते हैं, जिससे पारगमन के दौरान क्षति कम होती है।

ख) जलवायु परिवर्तन के प्रभावः अत्यधिक तापमान, सूखा और बाढ़ सहित अप्रत्याशित मौसम पैटर्न, फूलों के उत्पादन के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं।

ग) अनिश्चित मौसमः जलवायु परिवर्तन के कारण मौसम में अनिश्चितता बढ़ रही है, जिससे फूलों की खेती प्रभावित हो रही है।

घ) तापमान में वृद्धिः तापमान में वृद्धि से फूलों की गुणवत्ता और उपज में कमी आ रही है।

ड़) जल की कमीः सूखे और अनियमित वर्षा के कारण जल की कमी हो रही है, जिससे सिंचाई में समस्या आ रही है।

कीट और रोग

• **नए कीट और रोगः** जलवायु परिवर्तन और वैश्विक व्यापार के कारण नए कीट और रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

• **कीटनाशक प्रतिरोधः** कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से कीटों में प्रतिरोध विकसित हो रहा है।

• **जैविक नियंत्रणः** कीटों और रोगों के जैविक नियंत्रण के लिए प्रभावी तकनीकों का विकास करना एक चुनौती है।

• **स्थिरता अनिवार्यताएँ:** बढ़ती पर्यावरण जागरूकता ने स्थायी प्रथाओं को अपनाने, कीटनाशकों और उर्वरकों पर निर्भरता कम करने और पानी की खपत को कम करने के लिए दबाव बढ़ा दिया है।

• **वैश्विक प्रतिस्पर्धा:** वैश्विक पुष्प उत्पादन बाजार में कड़ी प्रतिस्पर्धा है, जिसके लिए निरंतर नवाचार और लागत अनुकूलन की आवश्यकता है। उपभोक्ताओं की गुणवत्ता संबंधी अपेक्षाएँ बढ़ रही हैं।

• **शीत श्रृंखला:** फूलों की ताजगी बनाए रखने के लिए प्रभावी शीत श्रृंखला का विकास करना एक चुनौती है।

• **ऑनलाइन विपणन:** ऑनलाइन विपणन के लिए प्रभावी प्लेटफॉर्म और रणनीतियों का विकास करना एक चुनौती है।

श्रम की कमी

कई क्षेत्रों में कुशल श्रमिकों को ढूंढना और उन्हें बनाए रखना एक चुनौती बनी हुई है।

• **श्रम की कमी:** ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में पलायन के कारण श्रम की कमी हो रही है।

• **उत्पादन लागत:** उर्वरकों, कीटनाशकों और ऊर्जा की बढ़ती कीमतों के कारण उत्पादन लागत बढ़ रही है।

• **तकनीकी ज्ञान:** किसानों को उन्नत तकनीकों और सर्वोत्तम प्रथाओं का ज्ञान प्रदान करना एक चुनौती है।

उपभोक्ता की बदलती माँग

उपभोक्ता तेजी से स्थायी रूप से प्राप्त, स्थानीय रूप से उगाए गये और अद्वितीय फूलों की किस्मों की तलाश कर रहे हैं, जिसके लिए अनुकूलन शीलता और जवाबदेही की आवश्यकता है।

अन्य चुनौतियाँ

• **भूमि की कमी:** शहरीकरण और औद्योगीकरण के कारण कृषि के लिए भूमि की कमी हो रही है।

• **वित्तीय सहायता:** किसानों को वित्तीय सहायता और ऋण प्रदान करना एक चुनौती है।

अनुसंधान और विकास

फूलों की खेती के लिए अनुसंधान और विकास में निवेश करना एक चुनौती है। इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए, किसानों, वैज्ञानिकों, नीति निर्माताओं और अन्य हितधारकों को मिलकर काम करना होगा।

उज्ज्वल भविष्य

पुष्प उत्पादन उद्योग का भविष्य नवाचार को अपनाने और अपनी चुनौतियों का समाधान करने की इसकी क्षमता पर निर्भर करता है। प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर, स्थिरता को प्राथमिकता देकर और बदलती उपभोक्ता प्राथमिकताओं के अनुकूल ढलकर, उद्योग एक जीवंत और समृद्ध भविष्य सुनिश्चित कर सकता है। आधुनिक युग में फूलों की खेती में नवाचारों से इस क्षेत्र में उत्पादकता, स्थिरता और लाभप्रदता में वृद्धि होगी। तकनीकी प्रगति और टिकाऊ खेती के तरीकों को अपनाने से फूलों की खेती का भविष्य उज्ज्वल है। आने वाले समय में, हम फूलों की खेती में और भी अधिक उन्नत तकनीकों और नवाचारों को देखेंगे।

निष्कर्ष

फूलों की खेती का आधुनिक युग एक गतिशील और रोमांचक परिदृश्य है, जिसकी विशेषता तकनीकी नवाचार में तेजी से उछाल है, जो उद्योग के हर पहलू को नया रूप दे रहा है। हाई-टेक ग्रीनहाउस की सटीकता और नई किस्मों के आनुवंशिक चमत्कारों से लेकर स्वचालन की दक्षता और ई-कॉमर्स की वैश्विक पहुँच तक, ये प्रगति फूलों की खेती को उत्पादकता, गुणवत्ता और बाजार की पहुँच के अभूतपूर्व स्तरों की ओर ले जा रही है, जो जलवायु परिवर्तन, संधारणीय संसाधन प्रबंधन की अनिवार्यता, जटिल आपूर्ति श्रृंखला रसद और विकसित हो रही उपभोक्ता माँगों से उत्पन्न महत्वपूर्ण चुनौतियों का सामना कर रहा है। पारंपरिक संसाधन-गहन प्रथाएँ अब पर्यावरणीय प्रभाव के प्रति बढ़ती जागरूकता वाली दुनिया में व्यवहार्य नहीं हैं। आखिरकार, फूलों की खेती का भविष्य नवाचार और स्थिरता दोनों के लिए एक रणनीतिक और निरंतर प्रतिबद्धता पर टिका है। AI और उन्नत प्रजनन तकनीकों जैसी अत्याधुनिक तकनीकों को अपनाना उत्पादन को अनुकूलित करने और अपशिष्ट को कम करने के लिए महत्वपूर्ण होगा। इसके साथ ही, पर्यावरण के अनुकूल खेती के तरीकों, कुशल संसाधन उपयोग और मजबूत, स्थानीय आपूर्ति श्रृंखलाओं की ओर एक ठोस बदलाव दीर्घकालिक लचीलापन और उपभोक्ता विश्वास के लिए सर्वोपरि होगा। इन चुनौतियों को कुशलता से नेविगेट करके और लगातार आगे की सोच वाले दृष्टिकोण को अपनाकर, फूलों की खेता आर्थिक क्षेत्र के रूप में फलती-फूलती रहेगी, बल्कि वैश्विक दर्शकों के लिए सुंदरता, खुशी और प्रकृति की कलात्मकता का स्पर्श लाने की अपनी कालातीत भूमिका भी निभाएगी। कल की फूलों की खेती का खिलना वास्तव में मानव सरलता और हमारे ग्रह के प्रति गहरे सम्मान का प्रमाण होगा।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

किसान कॉल सेंटर और IVRS सेवाएँ: किसानों के लिए डिजिटल समाधान

कु. अंजना गुप्ता

कम्प्यूटर साइंस, कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: Blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ की अधिकांश जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती-बाड़ी पर निर्भर है। लेकिन बदलते समय के साथ किसानों को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे-मौसम की अनिश्चितता, फसलों में रोग-कीट, बाजार में मूल्य अस्थिरता, उपयुक्त तकनीकी जानकारी का अभाव आदि। इन समस्याओं का समाधान समय पर और सही जानकारी द्वारा ही किया जा सकता है। इसी दिशा में भारत सरकार ने सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के उपयोग से किसानों को सशक्त बनाने के लिए 'किसान कॉल सेंटर' और 'IVRS' जैसी सेवाओं की शुरुआत की।

किसान कॉल सेंटर क्या है?

किसान कॉल सेंटर भारत सरकार की एक दूरदर्शी योजना है, जिसकी शुरुआत 21 जनवरी 2004 को की गई थी। इसका उद्देश्य किसानों को उनकी भाषा में कृषि विशेषज्ञों द्वारा उचित तकनीकी सलाह प्रदान करना है। यह सेवा एक टोल-फ्री नंबर (1800-180-1551) के माध्यम से देश के किसी भी कोने से उपयोग की जा सकती है।

मुख्य विशेषताएँ

क) यह सेवा सप्ताह के सातों दिन, सुबह 6 बजे से रात के 10 बजे तक उपलब्ध रहती है।

ख) किसानों को उनकी स्थानीय भाषा में सलाह दी जाती है।

ग) इसमें तीन स्तरों पर विशेषज्ञ सहायता मिलती है –

स्तर 1: कॉल अटेंडेंट (कृषि स्नातक) प्रारंभिक सलाह देते हैं।

स्तर 2: जटिल प्रश्नों को कृषि वैज्ञानिकों और विषय विशेषज्ञों तक पहुँचाया जाता है

स्तर 3: आवश्यकता पड़ने पर राज्य/ज़िले के वरिष्ठ अधिकारियों को भी जोड़ा जाता है।

सेवाओं का दायरा

किसान कॉल सेंटर के माध्यम से कृषि, बागवानी, पशुपालन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन, कृषि उपकरण, उर्वरक, कीटनाशक, जैविक खेती आदि विषयों पर जानकारी ली जा सकती है। यह सेवा किसानों के लिए एक मंच के रूप में कार्य करती है, जहाँ वे अपनी समस्याओं को रख सकते हैं और तुरंत समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

IVRS (इंटरैक्टिव वॉयस रिस्पांस सिस्टम) क्या है?

IVRS एक ऐसी टेलीफोन सेवा है, जो पूरी तरह स्वचालित होती है। इसमें किसानों को की-पैड के माध्यम से विकल्प चुनने होते हैं और सिस्टम से उन्हें संबंधित जानकारी प्राप्त होती है। यह प्रणाली 24x7 सक्रिय रहती है और विशेषतः उन किसानों के लिए उपयोगी है जिनके पास स्मार्टफोन नहीं है।

IVRS सेवाओं की प्रमुख विशेषताएँ

- यह सेवा भी टोल-फ्री होती है।
- स्वचालित विकल्पों के माध्यम से किसानों को मौसम की जानकारी, मंडी भाव, सरकारी योजनाओं की स्थिति, फसल बीमा जानकारी आदि प्राप्त होती है।
- यह सेवा स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध होती है, जिससे साक्षरता का स्तर कम होने के बावजूद इसका उपयोग संभव हो पाता है।

सेवाओं का प्रभाव

ICT आधारित किसान कॉल सेंटर और IVRS सेवाओं ने भारतीय कृषि क्षेत्र में कई सकारात्मक परिवर्तन किये हैं

क) समय पर जानकारीः अब किसान अपने क्षेत्र विशेष की समस्याओं को लेकर तत्काल सलाह प्राप्त कर सकते हैं।
उपयोगी बनाया जा सकता है।

ख) उत्पादकता और आय में वृद्धिः किसानों को समय पर और सटीक जानकारी मिलने से, वे बेहतर निर्णय ले पाते हैं, जिससे उनकी उत्पादकता और आय में वृद्धि होती है।

ग) गुणवत्ता में सुधारः आईसीटी उपकरण किसानों को फसल की गुणवत्ता में सुधार करने में मदद करते हैं, जिससे उन्हें बेहतर कीमतें मिल सकती है।

घ) किसानों की पहुँच में वृद्धिः ये सेवाएँ किसानों को दूरदराज के क्षेत्रों में भी कृषि सलाह और सहायता प्रदान करती हैं, जिससे उनकी पहुँच में वृद्धि होती है।

सफलता की कहानियाँ

- उत्तर प्रदेश के एक किसान ने गेहूँ की बुवाई से पहले मिट्टी परीक्षण करवाने के बारे में जानकारी ली और विशेषज्ञ की सलाह के अनुसार खाद का प्रयोग किया, जिससे उसकी पैदावार में 25% की वृद्धि हुई।
- महाराष्ट्र की महिला किसान ने IVRS सेवा के माध्यम से मक्का की फसल में लगने वाले रोग की पहचान की और समय पर छिड़काव कर फसल को बचा लिया।

तकनीकी चुनौतियाँ

हालाँकि इन सेवाओं ने कृषि क्षेत्र में क्रांति लाई है, परंतु कुछ चुनौतियाँ अब भी बनी हुई हैंः

- ग्रामीण क्षेत्रों में 'डिजिटल साक्षरता' की कमी।
- मोबाइल नेटवर्क और इंटरनेट कनेक्टिविटी की समस्या।
- कई किसान अभी भी इन सेवाओं के प्रचार से अनभिज्ञ हैं।
- भाषा की विविधता के चलते कई बार सूचना का सही संप्रेषण नहीं हो पाता।

समाधान और सुझाव

- सरकार को ICT सेवाओं का प्रचार-प्रसार पंचायत स्तर तक करना चाहिए।
- किसानों के लिए 'डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रम' चलाये जाने चाहिए।
- किसान मेलों, रेडियो, टेलीविज़न और सोशल मीडिया के माध्यम से जागरूकता फैलानी चाहिए।

भविष्य की संभावनाएँ

जैसे-जैसे भारत डिजिटल इंडिया की ओर बढ़ रहा है, वैसे-वैसे किसान कॉल सेंटर और IVRS सेवाओं की उपयोगिता और भी बढ़ेगी। भविष्य में इसमें आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, चैटबॉट और वॉयस असिस्टेंट जैसे उन्नत फीचर जोड़कर इसे और भी उपयोगी बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष

किसान कॉल सेंटर और IVRS सेवाएँ न केवल किसानों को तकनीकी रूप से सशक्त बनाती हैं, बल्कि उन्हें आत्मनिर्भर और जागरूक भी बनाती हैं। इन सेवाओं के माध्यम से एक आम किसान भी विशेषज्ञों की राय लेकर अपने कृषि उत्पादन को बढ़ा सकता है और आर्थिक रूप से समृद्ध हो सकता है। यदि सरकार और निजी क्षेत्र मिलकर इन सेवाओं का विस्तार करते हैं, तो यह भारत की कृषि प्रणाली को एक नई दिशा दे सकती हैं।

संदर्भ

- https://ebooks.inflibnet.ac.in/
- https://www.iima.ac.in/
- https://www.researchgate.net/
- https://www.ibm.com/think/topics/interactive-voice-response
- https://globalresearchonline.net/journal contents/

❖❖

ISSN No. 2583-3316

पशुओं में गल घोटू रोग कारण एवं बचाव

प्रमोद प्रभाकर[1]* एवं राजेश कुमार[2]

[1]पशु विज्ञान विभाग, मंदन भारती कृषि महाविद्यालय, अगवानपुर, सहरसा, बिहार

[2]पशु विज्ञान विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर, बिहार

पत्राचारकर्ता: ppmbac@gmail.com

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है। जहाँ कृषि के साथ-साथ पशुओं पर भी विशेष ध्यान देने की जरूरत है क्योंकि कृषि तभी अच्छी होगी जब हम पशुओ का उचित देखरेख करेगें। खासकर वर्षा ऋतु मे पशुओं में होने वाली गलघोटू घातक संक्रामक रोग है। यह रोग जीवाणु द्वारा फैलता है। यह जीवाणु छोटा, ग्राम नगेटिव, नॉन मोटाईल होता है। इस रोग को डकहा, गलघोटू, एच. एस. शिपिंग फिवर, इत्यादि नामो से भी जाना जाता है।

गलघोंटू रोग के लक्षण

इस रोग के होने पर पशु के ऊपर इसके कई लक्षण दिखाई देते हैं, जो कुछ इस प्रकार हैं

लक्षणः इसमें पशुओं को तेज ज्वर, मुँह ओर गले पर शोथ वाली सूजन होती है। इसमे आमाशय और आंत मे पीड़ा होती है। जिसमे पशु का पेट फूल जाता है ओर पतला दस्त आता है। मुँह से लार और नाक से गाढ़ा स्त्राव निकलता है।

यह रोग वर्षाकाल मे अचानक उत्पन्न होता है वैसे यह कभी भी हो सकता है। खासकर उन स्थानों में इसका संक्रमण कुछ अधिक होता है जहाँ जल भरा रहता है। यह रोग जुगाली करने वाली पशु और विशेषकर भैंस पर हमला करता है। इस रोग मे 80-90% तक पशुओं की अकाल मोत हो जाती है। इस रोग की भयानकता इतनी अधिक होती है कि चिकित्सा और बचाव के बावजूद भी गाँव के गाँव साफ हो जाते है।

रोग के कारणः यह रोग जीवाणु पाश्चुरेला बोवीसेप्टिका के द्वारा उत्पन्न होता है। इसका संक्रमण मुँह ओर गले के भीतर चारा, दाना, पानी के द्वारा जाता है और शरीर के अन्दर रक्त प्रणाली मे रहकर जीवाणु अपना विकास करता है तथा रोग को फैलाता है। इस रोग को फैलाने में अचानक खराब मौसम , अस्वस्थ वातावरण, पशु की थकान एवं कुपोषण तथा वातावरण की आर्द्रता विशेष रूप से सहायक होते है।

रोग फैलने का ढंग

- **आहार द्वाराः** जब कोई रोगग्रस्त पशु चारा चरने जाता है तौ वहाँ की घास को दूषित कर देता है और जव स्वथ्य पशु का बहना कष्टप्रद श्वास प्रस्वास, अत्यधिक बैचैनी, आँखे एवं शरीर की सभी श्लैस्मिक झिल्लियो का सूजकर लाल हो जाता है।
- **श्वासनालिका द्वाराः** इस रोग के जीवाणु वायु से पशु के श्वास के साथ शरीर मे प्रवेश कर जाते है।
- **परजीवी द्वाराः** यह रोग स्वस्थ पशुओं मे मक्खियों, मच्छरों द्वारा फैलता है। यह परजीवी रोगग्रस्त पशु का खुन चुसकर जब स्वस्थ पशु का शरीर को काटते है, तो रोग के जीवाणु उनके शरीर मे प्रवेश कर जाते है और पशु से प्रभावित हो जाते है।

उद्भन अवधिः रोग के लक्षण प्रायः 1-3 दिन मे प्रकट हो जाते है।

लक्षणः रोग ग्रस्त पशु में तीन अवस्थाये मिलती है

• **तीव्र रक्त पुतित अवस्थाः** इसमे पशु चारा चरकर आता है और कान नीचे की और लटका कर बगैर जुगाली किये एक स्थान पर सुस्त खड़ा हो जाता है। पशु का तापक्रम एकाएक 104-108^{0} (40^{0}-42^{0} सेल्सियस) फारेनहाइट तक पहुँच जाता है। पशु खाना बंद कर देती है, पेट मे ऐठन होती है और पतला दस्त आता है। दाँत पीसना, दस्त मे रक्त या म्यूक्स का मिला होना, पेट फूल जाना रोग का लक्षण है और पशु मे अतिशय दुर्वलता आ जाती है।

• **त्वचा अवस्थाः** इस अवस्था में लक्षण प्रायः पशु की त्वचा से सम्बंधित होते है। पशु को तेज बुखार नीचे जबड़े के बीच सूजन जीभ का सूजकर बाहर निकल आना, मुँह से लार का बहना कष्टप्रद श्वास प्रस्वास, अत्ययधिक बैचैनी, आँखे एवं शरीर की सभी श्लैस्मिक झिल्लियो का सूजकर लाल हो जाना।

• **फुफ्फुसीय अवस्थाः** इस अवस्था में पशु को स्वास गहरी एवं जल्दी-जल्दी आने लगती है श्वास के साथ धसका (जोर से खाँसना) हो जाता है। ऐसी अवस्था में पशु की नाक से सफेद एवं लाल रंग का स्त्राव निकलना प्रारम्भ हो जाता है। स्त्राव गाढ़ा होने पर नाक से लटका हुआ दिखायी देता है। स्त्राव प्रायः बदबुदार होता है। सांस मे घड़घड़ाहट अथवा धुर्र - धुर्र की आवाज दूर से सुना जा सकता है। सूजन सख्त होती है ओर छुने पर गरम तथा दबाने पर दुखाती नहीं और मुँह खुला रहता है।

रोगी पशुओं मे कभी कभी देखा जाता है कि जबड़े मे सुजन के उपरी भाग में एक तरफ या दोनों तरफ हल्की सी बड़ी सूजन आ जाती है जो धीरे-धीरे बढती जाती है। सूजन के बढने पर पशु की पूरी थुथन ही शोथ युक्त हो जाती है, जो पत्थर जैसी कड़ी होती है। पशु के नाक सूजन के कारण बंद होने लगते है और उनसे गाढा मवाद जैसा म्यूकस आता है। अंत मे नाक बिल्कुल बंद हो जाते है और श्वास आना-जाना बंद हो जाता है।

रोग निदानः उपरोक्त लक्षणों को देखकर रोग का निदान आसानी से हो जाता है। पशु का धुर्र-धुर्र करना इस रोग का प्रधान निदानात्मक लक्षण है। माइक्रोस्कोपिक परीक्षण मे रोगी के रक्त अथवा शारिरीक स्त्रावो को लेकर स्लाइड पर रखकर माक्रोस्कोप पर जाँच करते है और जाँच मे द्विध्रुवी जीवाणु देखते है। यह रोग बहुत धातक एवं जानलेवा होता है।

चिकित्सा

• पोटेशियम परमैंगनेट पानी मे मिलाकर पिलायें आठ घंटे के अन्तराल पर पिलायें।

• बीमारी का जोर कम करने के लिए कार्वोलिक एसिड पानी मे मिलाकर पिलायें।

• एविल 10 मि.ली. मांस में लगाना।

• इन्जेक्शन डाइक्रिस्टासीन 5 डोज मांस में लगाये।

• पशुपालक अपने रोगी पशु को सल्फाडामिडीन सोडियम इन्जेक्शन की मात्रा पहला डबल तो अगला दिन से हाफ डोज देना होगा। इसका चिकित्सा 4-5 दिन लगातार कराने पर पाया गया है कि रोगी ठीक हो जाता है ।

घरेलू उपचार

• पशुपालक, खाने के लिए पशु को जौ का दलिया एवं पानी प्रचुर मात्रा मे दें।

• सहायक चिकित्सा के रूप में सूजन की तीव्र सेंक दें।

रोकथामः इस रोग को पशुपालक वर्षा ऋतु के शुरू होने से पहले और बाद मे एच.एस. आयल एडजुवेन्ट वेक्सीन 3 मि.ली./सवकुटेनियस विधि से अवश्य दिलायें। बहुत हद तक टीकाकरण कराकर पशुपालक इस रोग से होनी वाली अकाल मृत्यु से पशु को बचा सकते है।

आवश्यक निर्देश एवं सुझाव

• रोगग्रस्त पशुओं को अन्य पशुओं से अलग रखें।

• स्वस्थ पशुओं को बरसात शुरू होने के पहले इस रोग का टीका एच. एस. वैक्सीन अवश्य लगवा लेना चाहिए।

• रोग से मरे हये पशुओं को 6 फुट गहरा जमीन में गाढ़ देना चाहिए।

• रोगग्रस्त चरागाह में स्वस्थ पशुओं को चरने नही भेजना चाहिए।

• पशुओं को बरसाती घास नहीं खिलाये एवं गड्ढो तथा तलाब पोखरो का पानी नहीं पिलाना चाहिए।

• रोगी पशु को स्वच्छ तथा खुली हवा मे रखना चाहिए।

• पशुओं का आहार पौष्टिक तथा स्वादिष्ट होना चाहिए।

• पशुओं के रहने का स्थान साफ होना चाहिए।

निष्कर्ष

ज्यादा बारिश वाले इलाकों में इस बीमारी का खतरा ज्यादा रहता है ये बीमारी पशुओं में चुपके से फैलकर पशुओं की अकाल मृत्यु का कारण बनती है, अतः पशुपालक अपने-अपने पशुओं का उचित देख रेख एवं समय रहते हये चिकित्सा कराकर इस बीमारी से होनी वाली मोत को कम कर सकते है। पशुपालक पशुओं में होने वाली उत्पादकता को बनाये रख सकते है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

हरा चारा एवं चारागाह फसलों में सूत्रकृमियों का प्रकोप और उनका समाधान

राकेश कुमार सिंह

के.वी.के - II, लखीम पुर, खीरी, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: rksaskvkiisr@yahoo.in

परिचय

भारत में दुधारू जानवरों की संख्या संसार की कुल संख्या का लगभग 15% है। जब कि खेती योग्य भूमि की अपेक्षा चारे की खेती के लिए मात्र 4.5% भूमि ही उपलब्ध है। जिससे चारे की कमी होना स्वाभाविक है। चारागाह के लिए काफी भूमि की आवश्यकता होती है और इसकी उपलब्धता अब अपने देश में बहुत कम है। अतः उन्नत ढंग से हरे चारे की फसल की खेती करके ही चारे की उपलब्धता पूरी की जा सकती है। सूत्रकृमि (निमैटोड) एक अत्यन्त निम्न श्रेणी के अकशेरू वर्ग के जन्तु होते है। इनका आकार मुख्यतः 0.5 से 1.0 मि.मी. लम्बा होता है। ये अनेक प्रकार से फसलों को हानि पहुँचाते है। कुछ सूत्रकृमि पौधों की जड़ों के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं और उनकी वृद्धि जड़ो की कोशिकाओं में होती है। यह अपना जीवन चक्र पूरा करते हैं। कुछ सूत्रकृमि ऐसे होते हैं कि उनका कुछ हिस्सा जड़ों की कोशिकाओं में और कुछ बाहर होता है। कुछ अन्दर बाहर घूमते रहते हैं। बाकी बाहर रह कर पौधों की जड़ों से अपना भोजन लेते रहते हैं और अपना जीवन चक्र पूरा करते हैं।

यह सूत्रकृमि कृषि उत्पादन में समस्या उत्पन्न करते हैं। पौधों की जड़ों के उपयुक्त कार्य न करने पर एवं उचित मात्रा में भोजन न लेने से फसल की पैदावार में काफी अन्तर आ जाता है। सूत्रकृमियों द्वारा जड़ों के क्षय से पौधा मिट्टी से उपयुक्त मात्रा में जल व उर्वरक नहीं ले पाता है। जिससे पौधों की पर्याप्त वृद्धि नहीं हो पाती है। मृदाजनित सूत्रकृमियों में काफी भिन्नता पायी जाती है। इसलिये देश के अलग-अलग भागों में अलग-अलग प्रजाति के सूत्रकृमियों का प्रकोप पाया जाता है। इसके अतिरिक्त, सूत्रकृमियों द्वारा ग्रसित जड़ों में विभिन्न प्रकार के हानिकारक कवक और जीवाणु आक्रमण कर देते हैं। कुछ सूत्रकृमि विषाणु भी पौधे के अन्दर पहुँचते हैं। सूत्रकृमियों द्वारा ग्रसित पौधे सामान्यतः छोटे रह जाते हैं, पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और मुरझा जाती हैं। अत्यन्त गंभीर प्रकोप होने पर कभी-कभी पौधे मर जाते हैं।

सूत्रकृमियों के प्रकार

निम्न रूप से सूत्रकृमियों का प्रकोप देश में हर जगह पाया जाता है और इनके विभिन्न प्रकार होते है जिनका विस्तृत वर्णन निम्नवत है

क) रूटनाट सूत्रकृमि (मेलोडोगाइन)

यह सूत्रकृमि चारा फसलों में बहुत लगते हैं। इनके आक्रमण से पौधों की जड़ें फूल कर गांठ बना लेती हैं। मादा जड़ों के उतकों में रहती हैं। उसकी योनि बाहर की तरफ रहती है। ये अंडे एक चिपचिपे पदार्थ में देती है। मादा 150-300 तक अंडे देती है। अंडे मिट्टी में रहते हैं। जब दूसरी फसल बोई जाती है तो ये अंडे नमी और उपुयक्त ताप पर हैच हो जाते हैं। जिनसे इनके लार्वा बाहर आ जाते हैं। वहाँ उनका विकास नर और मादा सूत्रकृमि में हो जाता है। फलस्वरूप पौधों की जड़ें क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। भारत में मुख्यतः मेलोडागाइन इनकागनिटा और मे. जवानिका प्रजातियाँ पायी जाती हैं, जो फसलों को नुकसान पहुँचाती हैं।

ख) सिस्ट सूत्रकृमि (हेटरोड)

इस प्रकार की सूत्रकृमि की मादा जब परिपक्व हो जाती है, तो मजबूत सिस्ट बना लेती है। जिसमें अंडे भरे रहते हैं। ये सिस्ट जड़ों से अलग होकर मिट्टी में पड़े रहते हैं और जब दूसरी फसल बोई जाती है तो उपयुक्त वातावरण (नमी और ताप) पाकर अंडों से बच्चे बाहर निकल आते हैं और नयी जड़ों में भेदकर जड़ के अन्दर पहुँच जाते हैं। जहाँ उनका विकास नर और मादा सूत्रकृमि के रूप में होता है। चारा फसलों

में मुख्यतः हेटरोडेरा जिया, हेटरोडेरा सोर्घाही, हेटरोडेरा कैजनी भारत में पाये जाते हैं।

ग) रोटाइलेन्कुलस सूत्रकृमि

ये सूत्रकृमि पौधों की जड़ों में घुसे रहते हैं ये प्रजाति मादा अंडे को चिपचिपे पदार्थ में देती है। ये अंडे मिट्टी में पड़े रहते हैं। नयी फसल बोने पर अंडों से बच्चे निकलकर जड़ों को भेदकर अन्दर चले जाते हैं। वहाँ उनका विकास नर और मादा सूत्रकृमि में होता है। चारा फसलों में रोटाइलेकुलस ऐनीफार्मिस का प्रकोप पाया जाता है।

घ) स्टंट सूत्रकृमि (टाइलेकोरिकस)

ये सूत्रकृमि मिट्टी में रहते हैं कभी-कभी जड़ों में भी प्रवेश कर जाते हैं। इनका जीवन मिट्टी और जड़ दोनों में ही रहता है। ये अंडे बच्चे दोनों जगह देते हैं अर्थात् जड़ों में और मिट्टी में। इनके प्रकोप से पौधे छोटे रह जाते हैं। यह प्रायः जड़ गलने वाले कवकों को और प्रोत्साहित कर देते हैं। भारत में टाइलेकोरिस की बहुत सी प्रजातियाँ पायी जाती हैं।

ड़) लेजन सूत्रकृमि (प्रेटिलें कस)

यह सूत्रकृमि भी टाइलेकोरिक की भांति जड़ों के अन्दर और बाहर मिट्टी में वयस्क, अंडों और बच्चों के रूप में पाये जाते हैं। प्रभावित जड़ों में गांठे कत्थई रंग के घाव (लेजन) बन जाते है। ये सूत्रकृमि भी जड़ को गलाने वाले कवकों को उकसाया करते हैं। चारा फसलों में मुख्यतः प्रेटिलेंकस जिआ आदि प्रजातियाँ पायी जाती हैं।

चारा फसलों में पाये जाने वाले अन्य सूत्रकृमि

इसके अतिरिक्त हेलीकोटाइलेंकस, रोटाइलेंकस, हापलॉलैम्स, जीफीनिमा, लॉजीडोरस आदि पाये जाते है।

रोकथाम एवं प्रबंधन

- सिस्ट सूत्रकृमि के लिये उपयुक्त फसल चक्र को उपयोग में लाते हैं। ज्वार में लगने वाले हेटरोडेरा सोर्धाई के लिये अगली फसल रिजका या बरसीम लगाना चाहिये। यादि लोबिया में हेटरोडेरा कैजनी का प्रकोप हो, तो अगली फसल में जई लगानी चाहिये।
- गर्मी के दिनों में गहरी जुताई से सूत्रकृमियों का प्रकोप कम हो जाता है।
- सूत्रकृमि के जैविक नियंत्रण के लिए नीम की खली 10 कुं/हे. मिट्टी में मिलाकर पानी से सींच दे और खेत को कुछ दिनों के लिये खाली छोड़ दें।
- बुवाई से पूर्व बीज का उपचार कार्बोफ्यूरान 1 ग्रा/कि.ग्रा. अथवा नीम की गुठली का पाउडर 5 ग्रा./ कि.ग्रा. के हिसाब से करें।
- यदि सूत्रकृमियों का प्रकोप अत्यन्त तीव्र हो तो बुवाई के समय बीच के साथ कार्बोफ्यूरान 1.5 कि.ग्रा./हे. क्रियाशील तत्व (ए.आई.) उपयोग करें।
- सूत्रकृमि अवरोधी प्रजाति की बुवाई से भी कुछ सीमा तक इनके प्रकोप में कमी की जा सकती है।

तालिका-1 चारा एवं चारागाह फसलों में लगने वाले सूत्रकृमि

क्र.सं.	फसल	मुख्य सूत्रकृमि
1	लोबिया	मेलोडागाइन इनकागनिटा, मे. जवनिका, हेटरोडेरा, कैजनी, रोटाइलेक्लस रेनीफार्मिस
2	बरसीम	टाइलेकोरिकस वेलोनिलैमस, मे. इनकागनिटा
3	लूर्सन	मे. इनकागनिटा, मे. जवनिका, प्रेटिलेंकस थार्नी
4	स्टाइलो	मे. इनकागनिटा, प्रेटिलॅकस थार्नी, टा. ब्रेविनेटस
5	ज्वार	हेटरोडेरा सोर्घाइ, प्रेटिलेंकस जिआ टा. ब्रेविलीनेटस
6	जई	प्रेटिलॅकस जिआ
7	मक्का	हेट, जिआ प्रेटिलेंकस जिआ टा. ब्रेविलिनेटस
8	अन्य	बहुत सारे बाह्य परजीवी सूत्रकृमि

समुचित प्रबंधन से चारे के साथ बीज भी

हमारे देश में महज चारे के लिए बहुत कम फसल उगायी जाती है। फसल पकने के बाद एवं उपज लेने के बाद डंठल को चारे के रूप में प्रयोग किया जाता है, जिसका सीधा असर पशुओं की कार्यक्षमता एवं उत्पादन पर पड़ता है, जिससे किसानों की समस्या में भी बढ़ोत्तरी हो जाती है। इस सबको ध्यान में रखकर यह अनुभव किया गया है कि अच्छे चारे की पैदावार बढ़ाई जाये ताकि किसान कम जानवरों से ही उत्पादन ले सके और चारे के साथ अच्छा बीज भी पैदा कर सके। अधिकतर किसान चारे की फसलों को केवल चारे के लिए ही उगाते हैं, परन्तु चारे की अन्तिम कटाई के बाद इन फसलों से काफी मात्रा में चारा समुचित प्रबंधन से लिया जा सकता है। द्विउद्देशीय चारा फसलों के प्रबंधन की जानकारी आज की परिस्थितियों में इसलिये आवश्यक हो जाती है क्योंकि देश में चारा तथा चारा बीज दाना की अत्यधिक कमी अनुभव की जा

रही है। विश्व के 15% पशुधन भारत में ही पाये जाते हैं। ग्रामीण भारत में मिश्रित खेती का प्रचलन प्राचीन काल से चला आ रहा है तथा इसका महत्वपूर्ण घटक पुशधन ही है। देश में कृषकों की आर्थिक दशा सुधारने में पशुधन का विशेष योगदान रहा है। पशुओं की उत्पादकता में वृद्धि करने के लिये उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखना अपरिहार्य आवश्यकता बन जाती है तथा इसके लिये जरूरत होती है पौष्टिक चारे की। वर्ष 1995 से लेकर देश में 898 मी. टन सूखे तथा 1064 मी. टन हरे चारे की आवश्यकता आँकी गयी थी परन्तु वर्तमान समय में भी चारे तथा दाने की उपलब्धता लगभग 40% ही है। जबकि दुग्ध उत्पादन में लगभग 60 से 65% लागत चारे व दाने की आती है परन्तु देश में कृषिगत क्षेत्रफल के केवल 46% भू-भाग में ही चारे की फसलें उगायी जाती हैं तथा लगभग 35% क्षेत्र जानवरों की चराई के लिये उपलब्ध है। जोकि प्राकृतिक चारागाह कहलाते हैं।

उन्नत चारागाह बनाने की तैयारी

खेत की तैयारीः बरसात शुरू होने पर झाड़ी आदि साफ करके दो बार हैरो चलाना चाहिये। फिर सभी घास की जड़े, छोटे-छोटे पत्थर निकालकर एक बार फिर हैरो चला कर पाटा लगा देना चाहिये। खेत की तैयारी करते समय 5 टन कम्पोस्ट खाद मिला देना चाहिये ।

बोने का समयः उपरोक्त उन्नत घास व दलहन के बीज जुलाई महीने के दूसरे या तीसरे सप्ताह में लगाना चाहिये।

बीज की मात्राः 3 से 4 कि.ग्रा. प्रति हे. घास, 3 से 4 कि.ग्रा. प्रति हे. दलहनी बीज और यदि अकेले घास लगाना हो तो 5 से 6 कि.ग्रा. प्रति हे. घास का बीज बोना चाहिये ।

बोने की विधिः पौध या बीज लाईन में अथवा छिटकावाँ विधि से बोया जा सकता है क्योंकि लाईन में बोने से निराई व गुडाई में सुविधा रहती है। बीज की मात्रा की कमी पर घास की पौधशाला गर्मियों में तैयार करके पौध को पानी बरसते समय लगाने से चारागाह अच्छा बनता है और बीज की भी बचत होती है।

दूरीः लाईन से लाईन की व पौधे से पौधे की दूरी 50X50 से.मी. रखते हैं। घास व दलहन का मिश्रण बोने हेतु दो पंक्ति घास की तथा इसके बाद एक पंक्ति दलहन की बोनी चाहिये।

बीज की गहराईः बीज 0.5 से 1.0 से.मी. गहराई में बोना चाहिये या बीज छिटकावा विधि से बोना चाहिये। ऐसा करने पर छिटकने के बाद एक झाड़ी की डाल पूरे खेत में फेर देना चाहिये। जिससे बीज मिट्टी से ढक जाये।

निराई-गुड़ाईः पहले साल में बोने के एक माह बाद कम से कम एक बार निराई-गुड़ाई आवश्यक है।

कटाईः प्रथम वर्ष केवल एक कटाई अक्टूबर के अंत में करनी चाहिये। फिर बाद के वर्षों में 2 या 3 कटाई वर्षा की मात्रा के अनुसार जमीन से 15 से.मी. की ऊँचाई से की जाती है।

पैदावारः 100 से 150 कुंतल/हे. हरा चारा प्रति वर्ष बिना किसी अतिरिक्त खर्चे के मिलता रहेगा। हर वर्ष 40 कि.ग्रा. यूरिया तथा 1 कुंतल सुपर फास्फेट देने से चारे की पैदावार दो गुने से ढाई गुना हो जाती है तथा चारागाह अधिक समय तक हरा-भरा बना रहता है।

उन्नत चारागाह का प्रबंधन

यदि चारागाहों का बराबर प्रबंधन न किया जाये तो चारागाह कुछ ही सालों में क्षीण होने लगता है। अतः उन्नत चारागाह को नीचे लिखी विधियों से चराई आवश्यक है।

- उन्नत चारागाह में उसकी उत्पादकता ज्ञात करने के बाद उसकी क्षमता के अनुसार चराई करवाने से चारागाहों को अधिक दिनों तक उत्पादक बनाये रखा जा सकता है।
- प्राकृतिक चारागाह में लगातार चराई के बजाए क्रमबद्ध (डेफर्ड रोटैशनल) चराई से डेढ गुना जानवर अधिक चराए जा सकते हैं।
- प्राकृतिक चारागाहों में भेड़ों को चराने के बाद यदि भेड़ो को कुछ समय के लिए दलहनी चरागाह अथवा कृत्रिम चरागाह में चराई जाये तोह वे कुछ दिनों तक बिना राशन के रह सकती है।

निष्कर्ष

हरे चारा फसलें उच्च गुणवत्ता वाले पशुधन फ़ीड का स्रोत प्रदान करके, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार, जैव विविधता में वृद्धि और कृषि प्रणालियों की दीर्घकालिक उत्पादकता का समर्थन करके टिकाऊ कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। चारा फसलों की कटाई का प्रबंधन का एक अनिवार्य पहलू है। उचित कटाई से चारे की गुणवत्ता, उपज और पोषण मूल्य में सुधार हो सकता है, साथ ही पुनर्विकास और टिकाऊ चारा उत्पादन को भी बढ़ावा मिल सकता है। इन उपायों को अपनाकर, किसान हरे चारे और चारागाह फसलों में सूत्रकृमि संक्रमण को कम कर सकते हैं और अपनी उपज बढ़ा सकते है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

भिण्डी की कृषि पारिस्थितिकीय तन्त्र में फसल-सह नाशीजीव प्रबंधन

चंचल सिंह[1]*, दीक्षा पटेल[2], प्रज्ञा ओझा[3], श्याम सिंह[4] एवं आनन्द सिंह[5]

[1]पौध सुरक्षा विभाग, [2]कृषि प्रसार विभाग, [3]गृह विज्ञान विभाग, [4]सस्य विज्ञान विभाग, [5]फल विज्ञान विभाग
कृषि विज्ञान केन्द्र, बाँदा, प्रसार निदेशालय, बाँदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बाँदा, उत्तर प्रदेश

पत्राचारकर्ता: chanchalsingh9@gmail.com

परिचय

भिण्डी *(Abelmoschus esculentus)* खरीफ एवं जायद ऋतु में उगाई जाने वाली प्रमुख सब्जी की फसल है, इसकी फली में प्रोटीन, कैल्शियम, रेशा तथा अन्य खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। भिण्डी की फली को सब्जी बनाने में, जबकि जड़ एवं तनों का उपयोग गुड तथा चीनी को साफ करने में किया जाता है। इसके निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा भी अर्जित की जा सकती है, क्योंकि विश्व के कुछ देशों में इसके बीज का पाउडर बना कर काफी के स्थान पर उपयोग किया जाता हैं।

जलवायु

भिण्डी की अच्छी फसल के लिए लम्बे गर्म मौसम की आवश्यकता होती है। समान्यतः इसके बढ़वार के लिए 25-30 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त पाया गया है, जबकि 40 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान सहन करने की क्षमता इस फसल में नहीं होती है। बीज के जमाव लिए उपयुक्त तापमान 17-20 डिग्री सेल्सियस, जबकि पौधों की बढ़वार के लिए 35 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वोत्तम माना जाता है।

खेत एवं खेत की तैयारी

वैसे तो भिण्डी की खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं में सफलता पूर्वक की जा सकती है। परन्तु समुचित जल निकास वाली जीवांश युक्त दोमट या बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। भिण्डी की अच्छी फसल के लिए, मिट्टी का पी. एच. मान 6.0- 7.0 के बीच बनाये रखना उचित होता है। बीज के बुवाई से पूर्व खेत को एक बार मिट्टी पलट हल से, जबकि 3-4 बार कल्टीवेटर से आड़ी-तिरक्षी जुताई करके पाटा लगा देते है।

उन्नतशील प्रजाति

क्र. संख्या	प्रजाति	फली की लम्बाई (सेंटीमीटर)	उपज (कु./हे.)	कीट/व्याधि के प्रति सहनशील
1.	पूसा सावनी	15	125-150	पीत शीरा मोसैक
2.	परभनी क्रान्ति	15	80-100	पीत शीरा मोसैक
3.	पूसा मखमली	12-15	80-100	पीत शीरा मोसैक
4.	काशी विभूति (V.R.O.-05)	10-15	120-150	पीत शीरा मोसैक
5.	काशी प्रगति (V.R.O.-06)	-	135-180	विषाणु जनित व्याधि
6.	काशी सातधारी (I.I.V.R-10)	-	130-140	विषाणु जनित व्याधि
7.	काशी क्रान्ति	-	125-140	विषाणु जनित व्याधि
	संकर प्रजाति			
8.	पूसा ए-04	-	100-150	एफिड तथा जैसिड
9.	पंजाब-07	-	80-120	पीत शीरा मोसैक

जिससे खेत की मिट्टी भुरभुरी हो जाती है, परिणामस्वरूप बीज का अंकुरण अच्छा होता है।

पोषक तत्व प्रबंधन

किसी भी फसल से अधिकतम उपज प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक होता है कि फसल को सन्तुलित पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करायी जाये। जिसके लिए जरूरी है कि समय से मिट्टी की जाँच कराने के उपरान्त ही संस्तुति के अनुरूप पोषक तत्वों की आपूर्ति सुनिश्चित करायी जाये। यदि सामान्य खेत की बात की जाये तो सन्तुलित पोषक तत्वों की उपलब्धता हेतु 20-25 टन सड़ी हुयी गोबर की खाद के साथ 100 किलोग्राम नत्रजन (Nitrogen), 50 किलोग्राम स्फुर (Phosphorus) एवं 50 किलोग्राम पोटैशियम (Potassium) प्रति हेक्टेयर की दर से उपयोग करना लाभप्रद रहता है। गोबर की खाद को खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिला देना चाहिए, जबकि नत्रजन की एक तिहाई मात्रा एवं स्फुर तथा पोटैशियम की पूरी मात्रा को खेत की अन्तिम जुताई से पहले उपयोग करना हितकर प्रमाणित हुआ है। शेष बची नत्रजन की मात्रा को दो बराबर भागो में बाँटकर फसल बुवाई के क्रमशः 30 एवं 60 दिनों बाद उपरिवेशन के रूप में देना चाहिए।

बुवाई का समय

उत्तर, मध्य एवं पूर्वी भारत में इस फसल को वर्षाकालीन (खरीफ ऋतु) एवं ग्रीष्मकालीन (जायद ऋतु) फसल के रूप में उगाया जा सकता है। वर्षाकालीन फसल की बुवाई जून-जुलाई, जबकि ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई फरवरी-मार्च के महीने में किया जाता है। बीज उत्पादन हेतु वर्षाकालीन फसल उपयुक्त मानी जाती है, क्योकि ग्रीष्मकालीन फसल के बीज पकने के समय वर्षा होने से बीज की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बीज की मात्रा एवं फसल ज्यामिति

भिण्डी की खरीफ ऋतु की फसल के लिए 8-10 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती है, यदि बुवाई के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी 60X30 सेन्टीमीटर रखी जाय। यदि जायद ऋतु में इस फसल की बात करें तो 12-15 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है, जबकि पंक्ति से पंक्ति और पौध से पौध की दूरी 60X20 सेन्टीमीटर रखी जाय।

बुवाई

हल्की एवं उचित जल निकासी वाले मृदा में समतल क्यारियों में, जबकि भारी मृदा एवं ख़राब जल निकास वाली मृदा में मेड़ पर बुवाई करना अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रद रहता है। खरीफ ऋतु की अगेती फसल लेने के लिए बुवाई से पूर्व बीज को 24 घंटे तक पानी में भिगोकर रखते है, उसके बाद छायादार स्थान पर सुखाकर तथा कार्वेंडाजिम (Carbendazim) 50 डब्लू. पी. @ 2.5-3.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर शोधित करके बुवाई करना चाहिए।

जल प्रबंधन

बीज अंकुरण के समय यदि मृदा में पर्याप्त नमी न हो, तो बुवाई के बाद हल्कि सिचाई करना श्रेयस्कर रहता है। जायद ऋतु की फसल में आवश्यकतानुसार 7-10 दिनों के अन्तराल पर सिचाई करते रहना चाहिए। वहीं खरीफ ऋतु की फसल में सामान्यतः सिचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। वर्षा न होने की स्थिति में मृदा में उचित नमी बनाए रखने के उद्देश्य से हल्की सिचाई करते रहना चाहिए। ध्यान इस बात का रखना चाहिए कि फसल में कभी भी जल जमाव की स्थिति उत्पन्न नहीं होने पाए।

अन्तःसस्य क्रियायें

फसल बढवार के साथ-साथ प्रक्षेत्र में खरपतवारों की समस्या भी आरम्भ हो जाती है, जिससे फसल की वृद्धि एवं विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इनके प्रबन्धन के लिए फसल बुवाई के 25-30 एवं 50-55 दिनों के बाद यान्त्रिक रूप से खरपतवारों को निकाल कर, हल्की गुडाई करना चाहिए। जिसके परिणामस्वरुप खरपतवार तो नष्ट होते ही हैं, साथ ही साथ पौध के जड़ क्षेत्र में समुचित वातायन भी सम्भव हो पाता है।

समेकित नाशीजीव प्रबन्धन

बुवाई से पहले

मृदा जनित हानिकारक कवक, सूत्रकृमि, कीट एवं खरपतवारों की विभिन्न अवस्थाओं को नष्ट करने के लिए अपनाई जाने

वाली प्रमुख गतिविधियाँ इस प्रकार हैः-

- खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करना चाहिए।
- यदि सम्भव हो तो खेत की हल्की सिचाई करके, 0.45 मिलीमीटर मोटी पालीथिन की चादर से 20-25 दिनों के लिए ढक देना चाहिए।
- लगभग 100 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर नीम की खली का अनुप्रयोग करना चाहिए।
- सूत्रकृमि के प्रकोप को कम करने के लिए गेंदा के फूल को अन्तःवर्तीय फसल के रूप में उगाना चाहिए।
- कम से कम तीन से चार वर्ष का फसल चक्र अपनाने से बहुत सी समस्याएं स्वतः कम हो जातीं है।

बुवाई के समय

फसल को बीज एवं मृदा जनित हानिकारक कवकों से बचाव के लिए ट्राईकोडर्मा (*Trichoderma* sp.) @ 5.0 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। जबकि हानिकारक कीटों से बचाव के लिए इमिडाक्लोप्रिड 48 एफ. एस. @ 1.0-2.0 मिली लीटर प्रति 2 किलोग्राम बीज की दर से शोधित करना हितकर होता। सफेद मक्खी एवं पीत शीरा मोसैक व्याधि के प्रबन्धन के लिए सहनशील प्रजाति का चुनाव करें। सम्भव हो तो पीपरमेंट (मेंथॉल)/ मक्का/ ज्वार/ बाजरा को अन्तःवर्तीय फसल के रूप में उगायें। कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं को आकर्षित करने के लिए पीला, सफेद एवं बैगनी पुष्प देने वाले पौधों को लगाना चाहिए।

वानस्पतिक वृद्धि

फसल बढ़वार के प्रारम्भिक 30-40 दिनों तक प्रक्षेत्र को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए, जिसके लिए अवश्यकतानुसार बुवाई के 25-30 दिन तथा 40-45 दिनों बाद 1-2 बार यान्त्रिक रूप से निराई-गुड़ाई करके पौध के जड़ के पास मिट्टी लगा देना काफी लाभप्रद रहता है। यदि सम्भव हो तो कम धनत्व वाली काले रंग की 30 माइक्रोमीटर मोटी पॉलीथिन (LDPE) की चादर को पलवार के रूप में उपयोग करके, खरपतवारों की बढ़वार को काफी हद तक रोका जा सकता है।

प्ररोह एवं फली छेदक कीट के निगरानी लिए 5 फेरोमोन पाश प्रति हेक्टेयर की दर से स्थापित करें। जब पाश में कीट आने लगे तब उपलब्धता के अनुरूप अण्डपरजीवी जैसे *ट्राइकोग्रैमा चिलोनिस (Trichogramma chilonis)* के 40,000 अण्डों को प्रति एकड की दर से उपयोग करना चाहिए, साथ ही साथ ग्रसित प्ररोह एवं फली को इकट्ठा करके नष्ट करते रहना चाहिए। यदि उपरोक्त क्रिया कलापों द्वारा वर्णित कीट की संख्या कम नहीं हो, तब क्लोरंट्रानिलिप्रोले (Chlorantranilip-role) 18.5 एस. सी. @ 1.0 मिली लीटर प्रति 4 लीटर पानी या एमामेक्टीन बेन्जोएट (Emamectin Benzoat) 5 एस. जी. @ 1.0 ग्राम प्रति 4 लीटर पानी या लैम्डा सायहेलोथ्रिन (Lamda cyhalothrin) 5 ई. सी. @ 1.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या मैलाथियान (Malathion) 50 ई. सी. @ 3.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

सफेद मक्खी की निगरानी के लिए 5 पीला चिपचिपा पाश प्रति हेक्टेयर की दर से स्थापित करें। हानिकारक कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं जैसेः कोक्सिनेलिड्स, लैसविंग, मकड़ी जैसे परभक्षी कीटों के साथ ही साथ अन्य लाभकारी जीवों को संरक्षित करने के उपाय अवश्य करना चाहिए। पीत शीरा मोसैक व्याधि से ग्रसित पौध के दिखाई देते ही, उखाडकर समूल नष्ट करना सुनिश्चित करें। इन उपायों के बाद भी यदि इनकी संख्या आर्थिक क्षति स्तर (Economic Threshold Level, ETL) तक पहुँचने में सक्षम प्रतित हो रही हो तो संस्तुति के अनुरूप कीटनाशी रसायन यथा ट्राईजोफास 40 ई. सी. @ 1.0-1.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या आक्सीडीमेंटान मिथाइल 25 ई. सी. @ 2.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या थियामेंथाक्साम 25 डब्लू. जी. @ 1.0 ग्राम प्रति 5 लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना हितकर रहता है। फसल को माईट के प्रकोप से बचाने के लिए डाईकोफोल 18.5 ई. सी. @ 2.0-3.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या स्पाइरोमेसिफेन 22.9 एस. सी. @ 1.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी या क्यूनालफास 25 ई. सी. @ 2.0 मिली लीटर प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव किया जाना चाहिए।

भिण्डी की फसल को फफूँद जनित व्याधियों से बचाव के लिए ग्रसित पौधों को जड़ से उखाड कर मिट्टी में दबा देना चाहिए। जबकि चूर्णिल असिता (Powdery Mildew) व्याधि के अधिक प्रकोप होने पर सल्फर 80 डब्लू. पी. @ 1.0-1.5 किलोग्राम सक्रीय तत्व या डीनोकैप 48 ई. सी. @ 100 मिली लीटर सक्रीय तत्व प्रति एकड़ की दर से 300-400 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव कर सकते है।

पुष्पन एवं फलन

फसल की इस अवस्था में प्रक्षेत्र के बचे हुये खरपतवारों के पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए, जिससे आगामी फसल में इन खरपतवारों के बीजों का प्रसार नहीं हो सके। सम्पूर्ण खेत की साफ-सफाई सुनिश्चित करते हुए, व्याधि ग्रसित पौधों को भी उखाड़कर समूल नष्ट कर देना चाहिए। खेत की सघन निगरानी

निश्चित अन्तराल पर करते रहे तथा असामान्य पौधों को इकट्ठा करके अपने जिले के कृषि विज्ञान केन्द्र, जिला कृषि रक्षा कार्यालय, विकास खंड कृषि रक्षा कार्यालय या इनसे सम्बन्धित विशेषज्ञ से समस्या का पहचान कराकर सुरक्षित, पर्यावरण हितैषी, हानिकारक जीवों के प्राकृतिक शत्रुओं पर कम प्रभावी रसायनों द्वारा उपचार करना सुनिश्चित करें। हानिकारक वयस्क कीटों को आकर्षित करने के लिए प्रति हेक्टेयर 1 प्रकाश पाश स्थापित किया जा सकता है, जो इनके निगरानी के लिए भी उपयुक्त रहेगा। खेत में परभक्षी पंक्षियों की कार्यशीलता बढाने के लिए पंक्षी बैठक स्थान–सह-मकड़ी गुणन घोसला स्थापित किया जा सकता है।

फलियों की तुडाई एवं उपज

भिण्डी की तुडाई नरम एवं मुलायम अवस्था में करना चाहिए, क्योंकि अधिक देरी होने पर फली में रेशे की मात्रा बढ़ जाती है। परिणामस्वरूप फली की गुणवत्ता कुप्रभावित होती है। निर्यात के लिए फली की तुड़ाई 3-4 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए, ध्यान इस बात का दिया जाना चाहिए कि फली लगभग 6-8 सेन्टीमीटर लम्बी एवं सीधी हो। यदि उपज की बात की जाय तो समुचित देखरेख, उन्नतशील प्रजाति, सन्तुलित पोषक तत्वों की उपलब्धता एवं उन्नत फसल प्रबन्धन की स्थिति में जायद ऋतु की फसल से 100-120 कुन्तल प्रति हेक्टेयर, जबकि खरीफ ऋतु की फसल से 150-200 कुन्तल प्रति हेक्टेयर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

निष्कर्ष

इस प्रकार यदि किसान भाई उन्नत वैज्ञानिक पद्धति अपनाकर भिण्डी की खेती करें साथ ही ऊपर बाताये गए सावधानियों का समय रहते अनुपालन करे तथा समय-समय पर विशेषज्ञों से उचित परामर्श लेते रहे तो भिण्डी की खेत से अधिकतम आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते है। साथ अपने सम्पूर्ण परिवार को सुरक्षित एवं पौष्टिक सब्जी भी उपलब्ध करा सकते है, जो आज के परिपेक्ष्य में बहुत ही आवश्यक है।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

मिर्च की खेती से सुधरेगी किसानों की आर्थिक स्थिति

नीरज नाथ परिहार* एवं ज्वाला परते

कृषि विज्ञान विभाग, प्रौद्योगिकी और अनुसंधान विद्यालय, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, बालाघाट

पत्राचारकर्ता: nparihar427@gmail.com

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ कृषि को देश की नीव माना जाता है। लेकिन यह सामान्यतः देखा जाता है की भारत के कृषक आज भी पूरी तरह अनाज तथा दाल वाली फसलों पर निर्भर हैं तथा मुख्यतः इन्हीं फसलों की खेती करतें हैं, इन फसलों की खेती से आय तो प्राप्त होती है लेकिन मेहनत की तुलना में आय नगण्य है। अतः भारत के कृषक को चाहिए कि अनाज तथा दाल वाली फसलों के साथ साथ सब्जी वाली फसलों की भी खेती की जाये, सब्जियों में बहुत सी सब्जियाँ है जिनकी खेती की जा सकती है, परन्तु अन्य सब्जियों की अपेक्षा मिर्च की खेती से कृषकों को बहुत अधिक फायदा प्राप्त हो सकता है। मिर्च (*कैप्सिकम फ्रूटसेंस*) एक ऐसी सब्जी है, जिसका उपयोग लगभग हर प्रकार के भोजन में तीखापन तथा स्वाद में वृद्धि के लिए किया जाता है, साथ ही साथ अचार के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है, हर प्रकार के भोजन में उपयोग होने के कारण तथा भारत के लगभग हर राज्य में इसका उपयोग होने के कारण, मिर्च की माँग वर्ष भर तथा भारत के हर एक स्थान में बनी रहती है। अगर भारत के किसान मिर्च की खेती करना प्रारंभ कर दें तो उन्हें मिर्च की खेती से बड़ा मुनाफा प्राप्त हो सकता है।

मिर्च की कुछ प्रसिद्ध किस्में

मिर्च की कई किस्में हैं, जो अलग-अलग विशेषताओं और उपयोगों के लिए उगाई जाती हैं। जिससे किसान अधिक से अधिक उपज तथा लाभ प्राप्त कर सकते हैं इसके कुछ प्रमुख किस्में निम्नवत है:

प्रसिद्ध किस्में और पैदावार

CH-1: यह किस्म पंजाब एग्रीकल्चर लुधियाना यूनिवर्सिटी, द्वारा बनाई गई है। यह दरमियाने कद वाली किस्म है। इसका फल दरमियाने आकार और हल्के हरे रंग का होता है, जो पकने के बाद गहरे लाल रंग का हो जाता है। इस किस्म का

फल बहुत तीखा और आकर्षित होता है। यह किस्म गलन रोग को सहने योग्य है। इसकी औसतन पैदावार 95-100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

CH-3: यह किस्म पंजाब खेती-बाड़ी यूनिवर्सिटी, लुधियाना द्वारा बनाई गयी है। इसके फल का आकार सी एच-1 के आकार से बड़ा होता है। इसमें कैपसेसिन की मात्रा 0.52% होती है। इसकी औसतन पैदावार 100-110 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

CH-27: इस किस्म के पौधे लंबे होते हैं और ज्यादा समय तक फल देते हैं। इस किस्म के फल दरमियाने लंबे (6.7 सें.मी.), पतले छिल्के वाले, शुरू में हल्के हरे और पकने के बाद लाल रंग के होते हैं। यह किस्म पत्ता मरोड़, फल और जड़ गलन, रस चूसने वाले कीट जैसे कि मकौड़ा जुंओं आदि की रोधक है। इसकी औसतन पैदावर 90-110 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

पंजाब सिंधुरी: इस किस्म के पौधे गहरे हरे, ठोस और दरमियाने कद के होते हैं। यह जल्दी पकने वाली किस्म है और इसकी पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 75 दिनों के बाद की जा सकती है। इसके फल लंबे (7-14 सें.मी.), मोटे छिल्के वाले, शुरू में गहरे हरे और पकने के बाद गहरे लाल रंग के होते हैं। इसकी औसतन पैदावार 70-75 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

पंजाब तेज: इसके पौधे हल्के हरे, फैले हुये और दरमियाने कद के होते हैं। यह जल्दी पकने वाली किस्म है और इसकी पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 75 दिन बाद की जा सकती है। इसके फल लंबे (6-8) सें.मी., पतले छिल्के वाले, शुरू में हल्के हरे रंग के होते हैं, जो पकने के बाद गहरे लाल रंग के हो जाते हैं। इसकी औसतन पैदावार 60 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

पूसा ज्वाला: इस किस्म के पौधे छोटे कद के, झाड़ियों वाले और हल्के हरे रंग के होते हैं। इसके फल 9-10 सें.मी. लंबे, हल्के हरे और बहुत तीखी होते हैं। यह किस्म थ्रिप और मकौड़ा जुंओं की प्रतिरोधक है। इसकी औसतन पैदावार 34 क्विंटल (हरी मिर्चें) और 7 क्विंटल (सूखी मिर्चें) प्रति एकड़ होती है।

पूसा सदाबहार: इसके पौधे सीधे, सदाबहार (2-3 वर्ष), 60-80 सें.मी. कद के होते हैं। इसके फल 6-8 सें.मी. लंबे होते हैं। फल गुच्छों में लगते हैं और प्रत्येक गुच्छे में 6-14 फल होते हैं। पकने के समय फल गहरे लाल रंग के और तीखा होते हैं। यह किस्म CMV, TMV और पत्ता मरोड़ की रोधक है। इसकी पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 75-80 दिन बाद की जा सकती है। इसकी औसतन पैदावार 38 क्विंटल (हरी मिर्चें) और 8 क्विंटल (सूखी मिर्चें) प्रति एकड़ है।

अर्का मेघना: यह हाइब्रिड किस्म अधिक पैदावार वाली और पत्तों के धब्बे रोग की प्रतिरोधक है। इसके फलों की लंबाई 10.6 सें.मी. और चौड़ाई 1.2 सें.मी. होती है। इसके फल शुरू में गहरे हरे और पकने के बाद लाल हो जाते हैं। इसकी औसतन पैदावार 134 क्विंटल (हरी मिर्चें) और 20 क्विंटल (सूखी मिर्चें) प्रति एकड़ है।

अर्का स्वेता: यह हाइब्रिड किस्म अधिक पैदावार वाली और ताज़ा मंडी में बेचने योग्य है। यह सिंचित स्थितियों में खरीफ और रबी दोनों में उगाई जा सकती है। इसके फल की लंबाई 11-12 सें.मी. एवं चौड़ाई 1.2-1.5 सें.मी. होती है। इसके फल नर्म और दरमियाने तीखे होते हैं। फल शुरू में हल्के हरे और पकने के बाद लाल हो जाते हैं। यह विषाणुओं को सहन योग्य किस्म है। इसकी औसतन पैदावार 132 क्विंटल (हरी मिर्चें) और 20 क्विंटल (सूखी मिर्चें) प्रति एकड़ है।

काशी अर्ली: इस हाइब्रिड किस्म के पौधे का कद लंबा (100-110 सें.मी.) होता है। इसका तना टहनियों के बिना हल्का हरा होता है। इसके फल तीखे, लम्बाई (8-9 x1.0-1.2 सें.मी.), आकर्षक, शुरू में गहरे हरे जो पकने के बाद चमकीले लाल हो जाते हैं। इस किस्म के हरी मिर्च की पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 45 दिन बाद की जा सकती है। इसकी औसतन पैदावार 100 क्विंटल (पकी हुई लाल) होती है।

काशी सुर्ख: इस किस्म के पौधे छोटे कद के होते हैं, जिनका तना टहनियों वाला होता है। इसके फल हल्के हरे, सीधे, लम्बाई 11-12 सें.मी. होते हैं। यह हरी और लाल दोनों तरह की मिर्चें उगाने योग्य किस्म है। इसकी पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 55 दिनों के बाद की जा सकती है। इसमें हरी मिर्च की औसतन पैदावार 100 क्विंटल प्रति एकड़ है।

काशी अनमोल: इस किस्म के पौधे दरमियाने कद के (60-70 सें.मी.) होते हैं, जिनका तना टहनियों वाला होता है और यह आकर्षक, हरे, तीखी फल पैदा करता है। इसकी पहली तुड़ाई पनीरी लगाने के 55 दिनों के बाद की जा सकती है। इसकी औसतन पैदावार 80 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

पंजाब गुच्छेदार: यह किस्म 1995 में विकसित की गयी है। इसके फल छोटे और गुच्छों में होते हैं। यह किस्म डिब्बाबंद पैकिंग के लिए उपयुक्त है। इसकी औसतन उपज

ISSN No. 2583-3316

60 क्विंटल प्रति एकड़ होती है। खेत की तैयारीः खेत को तैयार करने के लिए 2-3 बार जुताई करें और प्रत्येक जुताई के बाद कंकड़ों को तोड़ें। बुवाई से 15-20 दिन पहले रूड़ी की खाद 150-200 क्विंटल प्रति एकड़ डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। खेत में 60 सें.मी. के फासले पर मेंड़ और खालियां बनायें। एज़ोसपीरीलियम 800 ग्राम प्रति एकड़ और फासफोबैक्टीरिया 800 ग्राम प्रति एकड़ को जुड़ी की खाद में मिलाकर खेत में डालें।

मृदाः मिर्च हल्की से भारी हर तरह की मिट्टी में उगाई जा सकती है। अच्छे विकास के लिए हल्की उपजाऊ और पानी के अच्छे निकास वाली ज़मीन जिस में नमी हो, इसके लिए अनुकूल होती है। हल्की ज़मीनें भारी ज़मीनों के मुकाबले अच्छी गुणवत्ता की पैदावार देती हैं। मिर्च के अच्छे विकास के लिए ज़मीन की पी एच 6-7 अनुकूल है।

पनीरी तैयार करनाः 1 मीटर चौड़े और आवश्यकतानुसार लंबे बैड बनाये। कीटाणु रहित कोकोपिट 300 किलो, 5 किलो नीम केक को मिलाएं और 1-1 किलो एज़ोसपीरिलियम और फासफोबैक्टीरिया भी डालें। एक ट्रे भरने के लिए लगभग 1.2 किलो कोकोपिट की जरूरत होती है। 11,600 नये पौधे तैयार करने के लिए 120 ट्रे की जरूरत होती है, जो कि एक एकड़ के लिए प्रयोग की जाती है।

उपचार किये हुये बीज ट्रे में एक बीज प्रति सैल बोयें। बीज को कोकोपिट से ढक दें और ट्रे एक- दूसरे के साथ रखें। बीज अंकुरन तक इन्हें पॉलीथीन से ढक दें। नर्सरी में बीज बीजने के बाद बैडों को 400 मैश नायलॉन जाल या पतले सफेद कपड़े से ढक दें। यह नए पौधों को कीड़े-मकौड़े और बीमारियों के हमले से बचाता है। 6 दिनों के बाद ट्रे में लगे नए पौधों को एक एक करके जाल की छाँव के नीचे बैडों में लगायें।

बीज अंकुरन तक पानी देने वाले बर्तन की मदद से पानी दें। बुवाई के 18 दिन बाद 19:19:19 की 0.5% (5 ग्राम प्रति लीटर) की छिड़काव करें।

खेत में पनीरी लगानाः 30-40 दिनों के बाद पौधे पनीरी के लिए तैयार हो जाते हैं। पनीरी खेत में लगाने के लिए 6-8 सप्ताह पुराने और 15-20 सें.मी. वाले कद के पौधे ही चुनें।

बुवाई का समयः नर्सरी लगाने का उचित समय अक्तूबर के अंत से मध्य नवंबर तक होता है। नर्सरी को 50 % छाँव वाले जाल से ढक दें और इर्द गिर्द कीट पतंगे रोकने वाला 40/50 मैश नायलॉन का जाल लगाये। पनीरी वाले पौधे 30-40 दिनों में आमतौर पर फरवरी-मार्च में तैयार हो जाते हैं।

बुवाई का फासलाः बुवाई के समय कतारों का फासला 75 सें.मी. और पौधों का फासला 45 सें.मी. रखें।

बिज की गहराईः बीजो को पनीरी में पनीरी 1-2 सें.मी. गहराई में बोयें।

बुवाई का ढंगः मिर्च की बिजाई पनीरी लगाकर की जाती है।

बीज की मात्राः हाइब्रिड किस्मों के लिए बीज की मात्रा 80-100 ग्राम और बाकी किस्मों के लिए 200 ग्राम प्रति एकड़ होनी चाहिए।

बीज का उपचारः फसल को मिट्टी से पैदा होने वाली बीमारियों से बचाने के लिए बीज का उपचार करना बहुत जरूरी है। बुवाई से पहले बीज को 3 ग्राम थीरम या 2 ग्राम कार्बेनडाज़िम प्रति किलो बीज से उपचार करें। रासायनिक उपचार के बाद बीज को 5 ग्राम ट्राइकोडरमा या 10 ग्राम सीडियूमोनस फ्लोरीसैन्स प्रति किलो बीज से उपचार करें और छांव में रखें। फिर यह बीज, बुवाई के लिए प्रयोग करें। फूलों को पानी देने वाले बर्तन से पानी दें। ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी नर्सरी में 15 दिनों के फासले पर डालें। इससे मुरझाना रोग से पौधों को बचाया जा सकता है।

फसल को उखेड़ा रोग और रस चूसने वाले कीड़ों से बचाने के लिए बुवाई से पहले जड़ों को 15 मिनट के लिए ट्राइकोर्डमा हर्जीनम 20 ग्राम प्रति लीटर + 0.5 मि.ली. प्रति लीटर इमीडाक्लोप्रिड में डुबोयें। पौधों को तंदरूस्त रखने के लिए वी ए एम के साथ नाइट्रोजन फिक्सिंग बैक्टीरिया डालें। इस तरह करने से हम 50% सुपर फॉस्फेट और 25% नाइट्रोजन बचा सकते हैं।

खादः नाइट्रोजन 25 किलो (55 किलो यूरिया), फॉसफोरस 12 किलो (सिंगल सुपर फॉस्फेट 75 किलो) और पोटाश 12 किलो (म्यूरेट ऑफ पोटाश 20 किलो) प्रति एकड़ डालें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा, फॉसफोरस और पोटाश की पूरी

मात्रा पनीरी खेत में लगाने के समय डालें। बाकी बची नाइट्रोजन पहली तुड़ाई के बाद डालें।

अच्छी पैदावार लेने के लिए, टहनियाँ निकलने के 40-45 दिनों के बाद मोनो अमोनियम फॉस्फेट 12:61:00 की 75 ग्राम प्रति 15 लीटर पानी की छिड़काव करें। अधिक पैदावार के साथ साथ अधिक तुड़ाइयाँ करने के लिए, फूल निकलने के समय सलफर/बैनसल्फ 10 किलो प्रति एकड़ डालें और कैल्शियम नाइट्रेट 10 ग्राम प्रति लीटर पानी की छिड़काव करें।

पानी में घुलनशील खादेंः पनीरी खेत में लगाने के 10-15 दिनों के बाद 19:19:19 जैसे सूक्ष्म तत्वों की 2.5-3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। फिर 40-45 दिनों के बाद 20% बोरोन 1 ग्राम + सूक्ष्म तत्व 2.5-3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। फूल निकलने के समय 0:52:34 की 4-5 ग्राम + सूक्ष्म तत्व 2.5-3 ग्राम प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें। फूल निकलने के समय 0:52:34 की 4-5 ग्राम + बोरोन 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की छिड़काव करें। फल तैयार होने के समय 13:0:45 की 4-5 ग्राम + कैल्शियम नाइट्रेट की 2-2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की छिड़काव करें।

विकास दर बढ़ाने के लिए प्रयोग किये जाने वाले हारमोनः फूल गिरने से रोकने के लिए और फल की अच्छी गुणवत्ता लेने के लिए, फूल निकलने के समय एन एन ए 40 पी पी एम 40 एम जी प्रति लीटर पानी की छिड़काव करें। फूल और फलों के गुच्छे बनने के समय फसल का ध्यान रखने से 20% अधिक पैदावार मिलती है। फूल निकलने के समय 15 दिनों के फासले पर होमोबरासिनालाइड 5 मि.ली. प्रति 10 लीटर की तीन छिड़काव करें। अच्छी गुणवत्ता वाले अधिक फलों के गुच्छे लेने के लिए बुवाई के 20,40,60 और 80 दिन पर ट्राइकोंटानोल की छिड़कावे विकास दर बढ़ाने के लिए 1.25 पी पी एम (1.25 मि.ली. प्रति लीटर) करें।

बुवाई से पहले पैंडीमैथालीन 1 लीटर प्रति एकड़ या फलूक्लोरालिन 800 मि.ली. प्रति एकड़ नदीन नाशक के तौर पर डालें और बुवाई के 30 दिन बाद एक बार हाथों से गुड़ाई करें। नदीनों की मात्रा के अनुसार दोबारा गुड़ाई करें और खेत को नदीन मुक्त रखें।

यह फसल अधिक पानी में नहीं उग सकती इसलिए सिंचाई आवश्यकतानुसार ही करें। अधिक पानी देने के कारण पौधे के हिस्से लंबे और पतले आकार में बढ़ते हैं और फूल गिरने लग जाते हैं। सिंचाई की मात्रा और फासला मिट्टी और मौसम की स्थिति पर निर्भर करता है। यदि पौधा शाम के 4 बजे के करीब मुरझा रहा हो तो इससे सिद्ध होता है कि पौधे को सिंचाई की जरूरत है। फूल निकलने और फल बनने के समय सिंचाई बहुत जरूरी है। कभी भी खेत या नर्सरी में पानी खड़ा ना होने दें। इससे फंगस पैदा होने का खतरा बढ़ जाता है।

निष्कर्ष

मिर्च की खेती बहुत ही फायदेमंद खेती है, जो किसानों की आर्थिक स्थिति के साथ साथ देश की अर्थव्यवस्था के लिए भी उचित है अतः सरकार तथा किसानों को चाहिए कि अन्य फसलों के साथ नई विधि तथा तकनीक अपनाते हये मिर्च की खेती की ओर भी ध्यान दिया जाये।

सन्दर्भ

- https://agritech.tnau.ac.in/horticulture/horti_vegetables_chilli_cultural.html
- Spices Board https://www.indian spices.com Chilli-Good Agricultural Practices.
- https://www.apnikheti.com.

❖❖

ISSN No. 2583-3316

आदर्श पौधशाला (नर्सरी) निर्माण

अरुण प्रकाश* एव विनय प्रकाश

कृषि विभाग, डॉल्फिन (पीजी) बायोमेडिकल और प्राकृतिक विज्ञान संस्थान, देहरादून, उत्तराखंड, भारत

पत्राचारकर्ता: apkohli101@gmail.com

परिचय

नर्सरी वह स्थान है जहाँ पौध, छोटे पौधे, पेड़, झाड़ियाँ और अन्य रोपण सामग्री तब तक उगायी और रखी जाती है जब तक उन्हें स्थायी स्थान पर लगाया/प्रत्यारोपित नहीं किया जाता है। अधिकांश कृषि फसलों के विपरीत, एक बाग की स्थापना एक स्थायी कार्य है। इसलिए, गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री की उपलब्धता वह नींव है जिस पर एक बाग स्थापित किया जाता है। यदि पौधे विश्वसनीय और सुनिश्चित प्रदर्शन वाले हों, तो वे उच्च उपज वाले होंगे और गुणवत्तापूर्ण फल पैदा करेंगे। किसी भी सफल बागवानी उत्पादन के लिए, सही प्रकार के पौधों की उपलब्धता पहली और सबसे महत्वपूर्ण पूर्व-आवश्यकता है। इसलिए, नर्सरी एक ऐसा स्थान है जहाँ कोई तकनीकी कौशल प्राप्त करके, पौधों का उचित रखरखाव करके और सावधानीपूर्वक योजना बनाकर सही प्रकार के पौधे उगा सकते है। बाग की स्थापना की तरह, नर्सरी की स्थापना भी एक स्थायी कार्य है और शुरुआत में की गयी किसी भी गलती को बाद के चरणों में आसानी से सुधारा नहीं जा सकता है। इसलिए, नर्सरी स्थापित करने के लिए, स्थान के चयन, उगाये जाने वाले पौधों और परिवहन सुविधाओं आदि पर पूरा ध्यान देना चाहिए।

नर्सरी की स्थापना के लिए पूर्व-आवश्यकताएँ

नर्सरी स्थापित करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए

- जहाँ तक संभव हो, नर्सरी को महत्वपूर्ण उत्पादन क्षेत्रों में स्थित होना चाहिए।
- वह स्थान जहाँ फल, सब्जी या सजावटी पौधे व्यावसायिक पैमाने पर उगाये जाते हैं, नर्सरी की स्थापना के लिए एक आदर्श स्थान प्रदान करता है।
- मिट्टी गहरी, उपजाऊ, अच्छी जल निकासी वाली और मृदा जनित रोगजनकों से मुक्त होनी चाहिए।
- उस स्थान पर मीठे पानी की पर्याप्त आपूर्ति होनी चाहिए।
- जलवायु परिस्थितियाँ प्रचारित किये जाने वाले पौधों के लिए अनुकूल होनी चाहिए।
- नर्सरी का स्थान विभिन्न संचार माध्यमों (सड़क, रेल आदि) से अच्छी तरह से जुड़ा होना चाहिए ताकि आसानी से पहुँचा जा सके। नर्सरी में विभिन्न कार्यों को संभालने के लिए पर्याप्त

श्रमिक, जिनमें कुशल श्रमिक और ग्राफ्टर दोनों शामिल हों, उपलब्ध होने चाहिए। उर्वरक, कीटनाशक, वृद्धि नियामक, ग्राफ्टिंग मोम, लैनोलिन, पेस्ट और उपकरण जैसी सामग्री और ग्रीनहाउस, लैब, हाउस आदि जैसे विभिन्न प्रसार संरचनाओं के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए। नर्सरी के पास प्रसार के लिए मातृ पौधे प्रदान करने के लिए अपने संसाधन होने चाहिए।

नर्सरी का महत्व

निम्नलिखित कारणों से नर्सरी की आवश्यकता होती है:

- नर्सरी में छोटे पौधों का रखरखाव आसानी से किया जा सकता है। इसी तरह, उनकी देखभाल करना भी आसान होता है।
- पौधों के लैंगिक प्रसार के लिए उन्हें खेत में प्रत्यारोपित करने से पहले विशेष कौशल और देखभाल की आवश्यकता होती है, जो नर्सरी में आसानी से किया जा सकता है।
- कई पौधे सीधे बोने पर प्रतिक्रिया नहीं करते (उदाहरण के लिए, पत्तागोभी, टमाटर और पपीता) खेत में, जबकि नर्सरी में उगाये गये पौधों का प्रत्यारोपण बेहतर होता है।
- विभिन्न बागवानी पौधों की कटिंग को उगने के लिए बेहतर देखभाल और प्रबंधन के लिए पहले नर्सरी में लगाया जाता है।
- पौधों/परतों के कठोरण के लिए नर्सरी एक पूर्व-उपचार स्थान है।
- प्राकृतिक आपदाओं के खिलाफ पौधों का मौसम अनुकूलन केवल नर्सरी में ही संभव है।

नर्सरी का वर्गीकरण

नर्सरी को मुख्य रूप से उसके आकार के आधार पर दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

अ. घरेलू नर्सरी और **ब.** व्यावसायिक नर्सरी।

अ) घरेलू नर्सरी

यह बगीचे में एक छोटा सा क्षेत्र होता है, जिसमें पौधे उत्पादक की अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए उगाये जाते हैं। ऐसी नर्सरी का मुख्य उद्देश्य गुणवत्तापूर्ण रोपण सामग्री प्रदान करना होता है। आमतौर पर इस प्रकार की नर्सरी में उच्च गुणवत्ता वाली रोपण सामग्री उगाने के लिए नर्सरी प्रथाओं के महंगे तरीकों का पालन किया जाता है।

ब) व्यावसायिक नर्सरी

ऐसी नर्सरी का मुख्य उद्देश्य निवेश पर पैसा कमाना होता है। ऐसी नर्सरियों का क्षेत्र बड़ा होता है और आमतौर पर महँगी नर्सरी प्रथाओं से बचा जाता है। इसके अलावा, रोपण सामग्री की गुणवत्ता पर नियंत्रण भी कम होता है। व्यावसायिक नर्सरी शहरों और कस्बों (शहरी नर्सरी) या गाँवों (ग्रामीण नर्सरी) में स्थित हो सकती है।

क) ग्रामीण नर्सरी

इस प्रकार की नर्सरी किसी गाँव में किसी राजमार्ग या रेलवे स्टेशन के पास स्थित होती है। आमतौर पर, एक ग्रामीण नर्सरी का आकार बड़ा होता है क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि और श्रम कोई समस्या नहीं होती। ऐसी नर्सरियों में रोपण सामग्री सस्ती दरों पर बेची जाती है क्योंकि रोपण सामग्री उगाने की लागत के साथ-साथ खरीदारों की क्रय शक्ति भी कम होती है।

ख) शहरी नर्सरी

इस प्रकार की नर्सरी किसी कस्बे या शहर में स्थित होती है। नर्सरी का आकार आमतौर पर छोटा होता है क्योंकि भूमि महंगी होती है और आसानी से उपलब्ध नहीं होती। इन नर्सरियों में रोपण सामग्री भी महंगी होती है क्योंकि महंगे श्रम और अन्य प्रबंधन प्रथाओं के कारण रोपण सामग्री उगाने की लागत अधिक होती है। व्यवसाय के आधार पर, नर्सरी विभिन्न प्रकार की हो सकती है, जैसे थोक नर्सरी, खुदरा नर्सरी, लैंडस्केप नर्सरी, एजेंसी नर्सरी और मेल ऑर्डर नर्सरी।

- **थोक नर्सरी:** थोक नर्सरी में, पौधों का बड़ी मात्रा में उत्पादन खुदरा दुकानों को बेचने के लिए किया जाता है। ये नर्सरियाँ आमतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित होती हैं, जहाँ भूमि और श्रम सस्ती दरों पर उपलब्ध होते हैं। इन कारणों से, ग्रामीण नर्सरियाँ बिना अधिक अतिरिक्त खर्च किये अपने व्यवसाय का विस्तार कर सकती हैं।
- **खुदरा नर्सरी:** खुदरा विक्रेता थोक नर्सरी से पौधे खरीदते हैं। क्योंकि खुदरा नर्सरी अपने व्यापार के लिए बड़े पैमाने पर घर के मालिकों पर निर्भर करती है, इसे किसी कस्बे या शहर के पास स्थित होना चाहिए। ये नर्सरियाँ बगीचे के पौधों को उगाने के लिए आवश्यक उर्वरक, बीज और उपकरण आदि जैसी वस्तुएँ भी रखती हैं।
- **लैंडस्केप नर्सरी:** लैंडस्केप नर्सरी को किसी घनी आबादी वाले कस्बे या शहर के पास स्थित होना चाहिए क्योंकि शहरी लोगों को अपने घरों को सुंदर बनाने के लिए लैंडस्केप पौधों की आवश्यकता होती है। ऐसी नर्सरियाँ किसी शहर या कस्बे के बाहरी इलाके में स्थित होनी चाहिए क्योंकि यह ग्राहकों को लैंडस्केप सेवाएँ प्राप्त करने में सुविधा प्रदान करती है।
- **मेल ऑर्डर नर्सरी:** यह एक विशिष्ट थोक नर्सरी है। यह मुख्य रूप से बिक्री के लिए पेश किये गये स्टॉक के कैटलॉग प्रदर्शन पर निर्भर करती है। ग्राहक कैटलॉग से ऑर्डर करते हैं और मेल या पार्सल सेवा के माध्यम से पौधे प्राप्त करते हैं।

ये नर्सरियाँ भी ऐसे स्थान पर स्थित होती हैं, जहाँ भूमि अपेक्षाकृत सस्ती होती है और पर्याप्त श्रम, पानी और परिवहन सुविधाएँ उपलब्ध होती हैं।

• **एजेंसी नर्सरीः** एजेंसी नर्सरी अपने स्टॉक को एजेंटों या बिक्री प्रतिनिधियों के माध्यम से बेचती है। ऐसी नर्सरियाँ अत्यधिक विशिष्ट होती हैं और आमतौर पर संख्या में कम होती हैं।

नर्सरी की स्थापना को प्रभावित करने वाले कारक

क) स्थान और स्थलः नर्सरी की भूमि सपाट होनी चाहिए, जिसमें उचित जल निकासी के लिए एक दिशा में थोड़ा ढलान हो। नर्सरी स्थापना के लिए चयनित क्षेत्र को किसी न किसी प्रकार के व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध होना चाहिए। यह एक ज्ञात स्थान होना चाहिए। उस स्थान पर कुशल श्रमिक उपलब्ध होने चाहिए। नर्सरी का क्षेत्र सड़क या रेल मार्ग से अच्छी तरह से जुड़ा होना चाहिए। यह ग्राहकों के लिए आसानी से पहुँचे योग्य होना चाहिए।

ख) मिट्टी और जलवायुः एक ऐसे स्थान का चयन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है जहाँ विभिन्न प्रकार की प्रजातियाँ और किस्में उगाई जाती हों और जिनकी बाजार में बहुत अधिक माँग हो। मिट्टी भौतिक रूप से अच्छी और उचित जल निकासी वाली होनी चाहिए। आमतौर पर, फलों के पौधों के लिए, 5.5-6.5 पीएच रेंज वाली उपजाऊ दोमट मिट्टी पसंद की जाती है। सदाबहार पौधों के लिए चिकनी दोमट मिट्टी फायदेमंद होती है। हालाँकि, कठोर और सघन उप-मृदा परतों वाली मिट्टी से बचना चाहिए। नर्सरी में पौधे उगाने के लिए आमतौर पर 70-80 मिमी की गहराई पर्याप्त होती है। कैल्शियम कार्बोनेट की संचित परतों वाली मिट्टी से बचा जाना चाहिए क्योंकि यह पारगम्यता और वातन को प्रभावित करती है, जिसके परिणामस्वरूप जड़ों का खराब विकास होता है। नर्सरी के उद्देश्य के लिए अत्यधिक अम्लीय, क्षारीय और लवणीय मिट्टी को पसंद नहीं किया जाता है।

ग) जल आपूर्तिः नर्सरी के पौधों के लिए बार-बार हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसलिए, क्षेत्र में नियमित रूप से नरम पानी की उपलब्धता अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस उद्देश्य के लिए, एक सतही कुआँ या एक ट्यूबवेल खोदा जा सकता है। हालाँकि, पानी की कमी वाले क्षेत्रों में पानी की कमी के दौरान आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक जल भंडार का निर्माण किया जा सकता है।

घ) पौधों और किस्मों की माँग

पौधों और उनकी किस्मों के प्रकार का चुनाव करते समय, कई कारकों पर विचार करना होता है। विभिन्न प्रकार के फलों के पौधों और किस्मों की मांग सबसे महत्वपूर्ण कारक है। नर्सरी में, केवल उन पौधों और किस्मों का थोक में उत्पादन किया जाना चाहिए, जिनकी उस विशेष स्थान पर उच्च मांग है।

ङ) रसायनों, खादों और उर्वरकों की उपलब्धता

नर्सरी में, पौधों और पौधों की समय पर देखभाल और उचित प्रबंधन के लिए कई रसायनों, खादों, उर्वरकों और पादप संरक्षण उपायों की आवश्यकता होती है। कार्बनिक खाद जैसे फार्म यार्ड खाद (गोबर की खाद), पत्ती खाद, कम्पोस्ट, उर्वरक जैसे यूरिया, सिंगल सुपर फास्फेट, पोटेशियम सल्फेट और कई कवकनाशी, कीटनाशक, खरपतवारनाशी की आवश्यकता होती है और ये स्थानीय स्तर पर पर्याप्त मात्रा में समय पर उपलब्ध होने चाहिए।

प्रशिक्षित माली और कुशल श्रमिकों की उपलब्धता

जो बागवान नर्सरी उत्पादन का काम करना चाहते हैं, उन्हें विभिन्न प्रसार तकनीकों और अन्य नर्सरी कार्यों से अच्छी तरह परिचित होना चाहिए। उनके पास प्रशिक्षित बडर/ग्राफ्टर होने चाहिए, जो इन कार्यों को अच्छी सफलता के साथ कर सकें।

नर्सरी के भागः एक आधुनिक नर्सरी में निम्नलिखित भाग होने चाहिएः

• भवन संरचनाएँ

एक आदर्श नर्सरी में एक कार्यालय, बिक्री काउंटर, पैकिंग शेड, स्टोर हाउस, उपकरण शेड, बैल शेड और आवासीय भवन आदि होने चाहिए। कार्यालय सभी भवन संरचनाओं में सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि सभी व्यावसायिक लेनदेन कार्यालय से ही किए जाने हैं। कार्यालय गेट के पास होना चाहिए ताकि आगंतुकों को इसे खोजने में कोई कठिनाई न हो।

• वंशवृद्धी खंड

वंशवृद्धी खंड में, नर्सरी में सही प्रकार के मातृ पौधे बनाए व रखे जाते हैं। ग्राहकों की पसंद के अनुसार, मौजूदा उत्कृष्ट किस्मों के साथ उपयुक्त पौधों के प्रकारों को एकत्र करके वंशवृद्धी खंड में रखा जाना चाहिए। वंशवृद्धी खंड में पौधे स्वस्थ, रोग-मुक्त, आनुवंशिक रूप से शुद्ध और कीटों और बीमारियों के हमले से मुक्त होने चाहिए। प्रत्येक किस्म के पौधों को सही ढंग से लेबल किया जाना चाहिए। वंशवृद्धी खंड में मातृ पौधों के संबंध में कीटों और बीमारियों के नियंत्रण के लिए उचित देखभाल की जानी चाहिए।

• प्रसार संरचनाएँ

कई बार, बाहरी परिस्थितियाँ पौधों को सफलतापूर्वक उगाने के

लिए अनुकूल नहीं होतीं। कम या उच्च तापमान या गर्म, शुष्क हवाएँ पौधों और उनके बाद के विकास के लिए हानिकारक हो सकती हैं। इसलिए, ग्रीनहाउस, हॉट बेड, कोल्ड फ्रेम, लैथ हाउस, नेट हाउस और मिस्ट चैंबर आदि जैसी आधुनिक प्रसार संरचनाओं का प्रावधान होना चाहिए। ये संरचनाएँ बीज अंकुरण, कटिंग से उगने और युवा पौधों के खेत में प्रत्यारोपण से पहले उन्हें कठोर बनाने के लिए उच्च स्थितियाँ (प्रकाश, तापमान, नमी और आर्द्रता) प्रदान करती हैं।

- **बीज क्यारी**

बीजों को अपेक्षाकृत छोटे क्षेत्र में समायोजित किया जा सकता है। उन्हें जल आपूर्ति के स्रोत के पास और कार्यालय के करीब होना चाहिए ताकि उन्हें सतर्क नियंत्रण में रखा जा सके। उचित जल निकासी प्रदान करने के लिए क्यारी को जमीन की सतह से थोड़ा ऊँचा होना चाहिए। बीज क्यारी को खुले स्थान पर स्थित होना चाहिए क्योंकि कई बीज ठीक से अंकुरित नहीं होते हैं और यदि उन्हें छाया में रखा जाये तो पौधे डैम्पिंग ऑर्फ रोग से संक्रमित हो जाते हैं।

- **नर्सरी क्यारी**

नर्सरी क्यारी को पानी के स्रोत के पास एक खुले क्षेत्र में स्थित होना चाहिए। बीज क्यारी से पौधों को हटाकर इन नर्सरी क्यारी में प्रत्यारोपित किया जाता है। एक नर्सरी क्यारी को बार-बार जुताई करके और उचित मात्रा में जैविक खाद मिलाकर तैयार किया जाना चाहिए। इसकी तैयारी के दौरान कुछ उर्वरक भी मिलाए जाने चाहिए। उचित जल निकासी के लिए पर्याप्त प्रावधान होना चाहिए। नर्सरी क्यारी को थोड़ा ऊंचा होना चाहिए, जिसकी लंबाई 3 मीटर और चौड़ाई 1 मीटर हो। बेहतर होगा यदि नर्सरी क्यारी को वर्गों में विभाजित किया जाये।

उदाहरण के लिए, एक खंड आम के बीज क्यारी क्षेत्र के लिए हो सकता है, दूसरा खंड कटिंग से उगने के लिए, एक ओर फलों के पौधों के लिए और अन्य खट्टे पौधों के लिए आदि। इस क्रम को अगले मौसम में बदला जाना चाहिए ताकि फसल चक्र हो सके और इस प्रकार मिट्टी की उर्वरता बरकरार रहे। नर्सरी क्यारी को इस तरह से बिछाया जाना चाहिए कि सड़कों या रास्तों के माध्यम से सभी क्यारी तक पहुँच हो ताकि श्रमिकों को मेड़ों पर या पानी के चैनलों में चलना न पड़े।

- **पैकिंग क्षेत्र और वर्किंग शेड**

पैकिंग क्षेत्र का उपयोग बिक्री या बाहरी स्टेशनों पर भेजने से पहले पौधों को पैक करने के लिए किया जाता है। क्षेत्र को वर्किंग शेड के साथ जोड़ा जा सकता है। पैकिंग क्षेत्र में, कई श्रमिकों को आसानी से पौधों को छाँटने और पैक करने में सक्षम बनाने के लिए पर्याप्त जगह होनी चाहिए।

- **जल स्रोत**

पर्याप्त मात्रा में अच्छी गुणवत्ता वाले पानी की समय पर उपलब्धता नर्सरी उत्पादन का एक अभिन्न अंग है। नर्सरी में, विभिन्न विकास चरणों के कई पौधे उगाये जाते हैं, इसलिए, गुणवत्ता वाले पानी की समय पर आपूर्ति आवश्यक है। इस प्रकार, नर्सरी की पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। इस उद्देश्य के लिए, पानी के भंडारण टैंक, मोटर या डीजल इंजन से चलने वाले ट्यूबवेल का प्रावधान किया जाना चाहिए। पानी का स्रोत ही नहीं बल्कि पानी को समान रूप से और व्यवस्थित रूप से वितरित करने के लिए पानी के चैनल भी महत्वपूर्ण होते हैं। इन चैनलों को समय पर उपयोग के लिए नर्सरी के हर हिस्से से जोड़ा जाना चाहिए।

- **खाद का क्षेत्र**

बागवानी और वानिकी पौधों के नर्सरी उत्पादन के लिए विभिन्न उद्देश्यों के लिए बड़ी मात्रा में जैविक खाद, जैसे एफ.वाई.एम. (फार्म यार्ड खाद), कम्पोस्ट, पत्ती खाद आदि की आवश्यकता होती है। इसलिए, नर्सरी स्तर पर अपने उद्देश्य के लिए पर्याप्त मात्रा में कम्पोस्ट आदि का उत्पादन करने की व्यवस्था की जानी चाहिए। साथ ही, नर्सरी के कई अपशिष्ट उत्पादों का उपयोग भी इसी उद्देश्य के लिए किया जा सकता है और अपशिष्ट सामग्री के निपटान के लिए अतिरिक्त प्रयास की आवश्यकता नहीं होती है।

निष्कर्ष

एक आदर्श पौधशाला का निर्माण धैर्य, समर्पण और सही ज्ञान का परिणाम है। यह न केवल बेहतर कृषि उत्पादन का आधार है, बल्कि यह आत्मनिर्भरता और ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में भी सहायक है। चाहे वह फलों के पौधे हों, सब्जियां, फूल या औषधीय पौधे, एक अच्छी तरह से बनी और प्रबंधित नर्सरी स्वस्थ पौधों की नींव रखती है जो अंततः एक सफल उपज में परिणत होते हैं। भारत के कई क्षेत्रों में जहाँ कृषि आजीविका का एक बड़ा हिस्सा है वहां आदर्श पौधशालाएँ वास्तव में गेम-चेंजर साबित हो सकती हैं।

❖❖

ISSN No. 2583-3316

DeHaat: भारतीय किसानों के लिए एक डिजिटल क्रांति

कु अंजना गुप्ता[1]*, सतपाल सिंग[2] एवं जितेन्द्र मर्सकोल[3]

[1]कम्प्यूटर साइंस, कृषि विज्ञान केंद्र, जबलपुर, मध्य प्रदेश, [2]कम्प्यूटर साइंस, कृषि विज्ञान केंद्र, सिंगरौली, मध्य प्रदेश
[3]कृषि महाविद्यालय पवारखेडा, होशंगाबाद, मध्य प्रदेश

पत्राचारकर्ता: Blogger.sp2020@gmail.com

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ लगभग 60% जनसंख्या प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। हालाँकि, भारतीय किसान लंबे समय से कई चुनौतियों का सामना कर रहे हैं, जैसे कृषि इनपुट्स की उपलब्धता, फसल सलाह की कमी, उचित मूल्य न मिलना और तकनीकी जानकारी का अभाव। इन समस्याओं के समाधान के लिए DeHaat ने एक डिजिटल और व्यावसायिक मॉडल के रूप में उभरकर किसानों की सहायता की है। यह एक ऐसा स्टार्टअप है जो किसानों को एक ही प्लेटफार्म पर समग्र कृषि समाधान प्रदान करता है।

DeHaat क्या है?

DeHaat (जिसका अर्थ है 'गाँव या ग्रामीण क्षेत्र') एक एग्रीटेक स्टार्टअप है, जो किसानों को कृषि इनपुट (बीज, खाद, कीटनाशक), फसल सलाह, फसल बेचने के लिए बाजार से जुड़ाव, और वित्तीय सेवाएँ जैसे सुविधाएँ प्रदान करता है।

- **स्थापना वर्ष:** 2012 में हुआ था।
- **संस्थापक:** शुभम कुमार और उनके साथियों द्वारा शुरू किया गया था।
- **मुख्यालय:** पटना, बिहार।
- **सेवा क्षेत्र:** बिहार, उत्तर प्रदेश, झारखंड, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश आदि राज्यों में सक्रिय हैं।
- **किसानों की संख्या:** 2025 तक 20 लाख से अधिक किसान जुड़े हुये हैं।

DeHaat की प्रमुख सेवाएँ

क) कृषि इनपुट्स की आपूर्ति: DeHaat किसानों को उचित मूल्य पर प्रमाणित बीज, उर्वरक, कीटनाशक और अन्य आवश्यक कृषि उत्पाद उपलब्ध कराता है। किसान इन इनपुट्स को मोबाइल ऐप या स्थानीय DeHaat केंद्र के माध्यम से मंगा सकते हैं।

ख) फसल सलाह और तकनीकी सहायता: DeHaat का AI आधारित प्लेटफॉर्म मौसम, मिट्टी और फसल के आधार पर किसान को समय-समय पर सलाह देता है। विशेषज्ञ कृषि वैज्ञानिक किसानों को फसल रोग, पोषण, सिंचाई और कीटनाशक छिड़काव के बारे में मार्गदर्शन करते हैं।

ग) फसल की खरीद और विपणन: DeHaat किसानों को उनकी उपज के लिए उचित बाजार और मूल्य दिलाने का काम करता है। यह B2B मॉडल के तहत किसानों की फसलों को सीधे खरीदारों, प्रोसेसर और बड़े व्यापारियों से जोड़ता है। इससे बिचैलियों की भूमिका कम होती है और किसानों की आय में वृद्धि होती है।

घ) वित्तीय सेवाएँ: DeHaat बैंकिंग संस्थाओं के साथ मिलकर किसानों को ऋण, बीमा और अन्य वित्तीय सेवाएँ भी उपलब्ध कराता है। इससे किसान अपनी खेती में निवेश कर सकते हैं और आपातकालीन स्थितियों में सुरक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

DeHaat का कार्यमॉडल

DeHaat का मॉडल 'हाइब्रिड मॉडल' कहलाता है, जिसमें डिजिटल टेक्नोलॉजी और स्थानीय नेटवर्क का समावेश है।

- इसमें आप किसान मोबाइल ऐप या SMS से जुड़ सकते हैं।
- यह गाँवों में बनाए गये DeHaat फ्रेंचाइजी केंद्र (micro & entrepreneurs) किसानों और DeHaat के बीच की कड़ी का काम करते हैं।

• यह केंद्र किसान के आदेश लेकर उत्पाद सप्लाई करते हैं, सलाह प्रदान करते हैं और फसल खरीद का समन्वय करते हैं।

DeHaat की मोबाइल एप्लिकेशन

DeHaat एक एंड्रॉइड मोबाइल है जो ऐप विशेष रूप से ग्रामीण किसानों के लिए डिजाइन किया गया है

• मूल भाषा में उपलब्ध (हिंदी, भोजपुरी, उड़िया, बंगाली आदि)

• बीज व कीटनाशकों की खरीद

• फसल से संबंधित सुझाव

• मंडी भाव और मौसम की जानकारी

• फसल बेचने के लिए रजिस्ट्रेशन

DeHaat की सफलता और प्रभाव

क) किसानों की आय में वृद्धिः DeHaat से जुड़ने वाले किसानों की आमदनी में 20-30% तक की वृद्धि देखी गई है, क्योंकि उन्हें उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद सस्ते दर पर मिलते हैं और उपज का सही मूल्य मिलता है।

ख) किसानों में आत्मनिर्भरताः तकनीकी जानकारी और प्रशिक्षण के कारण किसान अब खुद निर्णय लेने में सक्षम हो रहे हैं।

ग) बिचैलियों की भूमिका कमः DeHaat के माध्यम से किसान सीधे खरीदारों तक पहुँचते हैं, जिससे उन्हें अपनी मेहनत का सही मूल्य मिलता है जिससे बिचैलियों की भूमिका कम हो जाती है या ना के बराबर हो जाता हैं।

घ) ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावाः DeHaat केंद्र ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार का अवसर देते हैं।

DeHaat को प्राप्त पुरस्कार और मान्यता

• Forbes 30 under 30 में संस्थापक शुभम कुमार को शामिल किया गया

• NASSCOM Emerge 50 Award

• Fast Company's Most Innovative Companies 2022

• हजारों किसानों के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाने के लिए कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर सराहना दी जाती हैं।

DeHaat की चुनौतियाँ

• डिजिटल साक्षरता की कमी-सभी किसान स्मार्टफोन या इंटरनेट का इस्तेमाल नहीं कर सकते।

• लॉजिस्टिक समस्याएं-दूरस्थ क्षेत्रों में समय पर उत्पाद पहुँचाना चुनौतीपूर्ण होता है।

• भाषा और सांस्कृतिक विविधता पूरे भारत में सेवाएँ देने के लिए भाषा विविधता को समझना जरूरी है।

DeHaat का भविष्य

DeHaat का लक्ष्य है कि वह आने वाले वर्षों में 50 लाख से अधिक किसानों तक पहुँचे और पूरे भारत में अपनी सेवाओं का विस्तार करे। साथ ही यह नई तकनीकों जैसे ड्रोन, IOT और रिमोट सेंसिंग को शामिल कर कृषि को और स्मार्ट बनाना DeHaat का उद्देश्य है।

निष्कर्ष

DeHaat भारतीय कृषि में एक डिजिटल क्रांति का प्रतीक बन चुका है। यह न केवल किसानों को बेहतर संसाधन और जानकारी उपलब्ध कराता है, बल्कि उन्हें सशक्त बनाकर आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक मजबूत कदम भी है। यदि सरकार, निजी क्षेत्र और समाज इस तरह की पहलों को सहयोग दें, तो भारत में डिजिटल खेती को नयी ऊँचाइयों तक पहुँचाया जा सकता है।

संदर्भ

• https://agrevolution.in

• https://play.google.com/store/apps/detailsid=in.agrevolution.dehaat

• https://yourstory.com/2023/03/dehaat-transforming-agriculture-tech

• https://economictimes.indiatimes.com/tech/funding

❖❖

For the welfare of the Farmer's, the society "Society for Advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors" willing to publish E-magazine in the name of "Krishi Udyan Darpan E-Magazine (Hindi) / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine (English**, Innovative Sustainable Farming**.)**, which covers across India.**

AUTHORS GUIDELINE

All authors submitting articles must be annual or Life member of **SAAHAS, Krishi Udyan Darpan** E-Magazine Hindi / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine English**, (Innovative Sustainable Farming**). Articles must satisfy the minimum quality requirement and plagiarism policy. Author's can submit the original articles in Microsoft Word Format through provided email, along with scanned copy of duly signed **Copyright Form**. Without duly signed Copyright Form, submitted manuscript will not processed.

1. The manuscript submitted by the author(s) has the full responsibility of facts and reliable in the content, the published article in **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine (Hindi) / **Krishi Udyan Darpan** E-Magazine English**, (Innovative Sustainable Farming**.) Editor/ Editorial board is not reliable with the manuscript.
2. Must be avoiding recommendation of Banned Chemicals by Govt. Of India.
3. The manuscript submitted by the author(s) should be in Microsoft Word along with the PDF file and the 2-3 (Coloured/Black) pictures should be in high quality resolution in JPEG format, manuscript contains pictures are should be original to the author(s).
4. Articles must be prepared in an editable Microsoft word format and should be submitted in the online manuscript submission system.
5. Write manuscript in **English** should be in **Times New Roman with font size 12 point in single spacing** and line spacing will be 1.0.
6. Write manuscript in **Hind**i should be in **Kurti Dev10 / Mangal with font size 12 point in single spacing** and line spacing will be 1.0.
7. The title should be short and catchy. Must be cantered at top of page in Bold with Capitalize Each Word case.
8. Authors Names, designations and affiliations should be on left below the title. Designations and affiliations should be given below the Authors' Names. Indicate corresponding author by giving asterisk (*) along with Email ID
9. The sequence of the authors will not be changed as it was given at the time of submission in copyright form.
10. Not more than five authors of one article.
11. It should summarize the content of the article written in simple sentences. (Word limit 100 -150) and the full article should contains (**1600 words maximum or 3 page of A4 Size**)
12. The text should be clear, giving complete details of the article in simple Hindi/English. It should contain a short introduction and a complete methodology and results. **Authors must draw Conclusions and the Reference of their articles at last**. The abbreviation should be written in full for the first time. Scientific names and technical nomenclature must be accurate. Tables, figures, and photographs should be relevant and appropriately placed with captions among the texts.
13. Introduction must present main idea of article. It should be well explained but must be limited to the topic.
14. Avoid the **Repetitions** of word's, sentences and Headings.
15. The main body of an article may include multiple paragraphs relevant to topic. Add brief subheads at appropriate places. It should be informative and completely self-explanatory.
16. Submitted manuscript are only running article and contains the field of Agriculture, Horticulture and Allied sectors.
17. All disputes subject to Prayagraj Jurisdiction only.

ABOUT THE SOCIETY

Father of Nation Mahatma Gandhi's concept of rural development meant self-reliance, and least dependence on outsiders. India is an agrarian country and about 65% of our population lives in rural areas. But unfortunately, most of us do not have any idea about the extent of poverty and the real conditions of rural India.

With the purpose of serving the agricultural fraternity and farming community the Society for Advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors (SAAHAS) was founded in 2020 (under Society Registration Act, 1860). Among multifarious ways of serving farming community we are involved in training of the farmers by organising technology dissemination programmes in villages, guiding them to adopt good agricultural practices involving planned crop management. It helps in reducing farm base losses and motivating them to become farmer level entrepreneur rather than a simple producer. It involves initiating skill based knowledge to the student of agriculture, horticulture and allied sectors to encourage them to serve the farmers in the best possible ways.

SAAHAS calls us to look into the genuine problems of farmers and address those issues for their betterment in the arena of Agriculture, horticulture and allied sectors. Besides agriculture, horticultural crop production has been given a major focus by Govt. of India in future crop diversification, improving livelihood through doubling farmers' income, economic opportunities through export and job opportunities. While good beginning is made, much is to be achieved in different areas in agro-horticulture sector.

Apart from that, SAAHAS helps developing the culture to involve more number of women in farming, processing of crops and value addition thereof for higher returns in terms of total income. SAAHAS eagerly involves with the farmers and agriculture entrepreneur to motivate them for introducing hi-tech farming, which includes growing of high value horticultural crops in hydroponics, aeroponics, polyhouse, net house and greenhouse. The society has geared up its activities to take up the challenges of biotic and abiotic stresses, emerging needs of quality seeds and planting material and reducing cost of production.

There are several government and non-government organisations intended of farmer's welfare; still there is dire need for more involvement and attachment with the farmers. Our society's noble initiative can ensure diminishing of the persistent gap between agro-technocrats, scientists with the needy farmers. We not only ensure that the farmers choose right variety of right crop, better nutrient management through diagnosis recommended system and pest diagnosis but we also help them to sale their produce at premium rates. There is a major issue of chemical residues in food, soil and ecology which is also a big concern of the century. The Society also aims to motivate the farmers either for minimal use of chemical inputs or total adoption of organic farming. Consultancy, training, awareness programs, national and international seminars and symposia and technical services are the prime activities of the SAAHAS.

Society for advancement in Agriculture, Horticulture and Allied Sectors publishes peer reviewed scientific journal, 'Journal of Applied Agriculture and Life Sciences (JAALS)', biannually since January 2020 focusing on articles, research papers and short communications of both basic and applied aspect of original research in all branches of Agriculture, horticulture and other allied sciences. To apprise the scientists and all those who are working in the field of Agriculture, horticulture and allied sectors about recent scientific advancement is the aim of the Journal.